जनरल टाकीज लि० चाँदनी चौक दिल्ली

की चित्र-सूची

राजकमल कलामंदिर कृत

१—शकुन्तला—पात्र—जयश्री, चन्द्रमोहन, दि० शान्ताराम।
२—माली—पात्र—अमीरकर्नाटकी और मास्टर कृष्णराव।

फिल्मिस्तान लि० कृत

१—चल चलरे नवजवान—पात्र—अशोककुमार, नसीम।
२—आठदिन—पात्र—अशोककुमार और वीरा।
३—शहनाई—पात्र—इन्दुमती, रेहाना, नसीरखान।
४—सिन्दूर—पात्र—किशोरसाहू, शमीम, पारो।
५—लोकमान्य तिलक.
६—चित्र न०.आठ
७—चित्र न० नौ

शालीमार पिक्चर्स कृत

१—गुलामी—पात्र—रेणुकादेवी, मसूद परवेज, तिवारी।
२—पृथ्वीराज-संयुक्ता—पात्र—पृथ्वीराज, नीना, तिवारी।
३—मीराबाई—पात्र—नीना, मसूदपरवेज।
४—श्रीकृष्ण भगवान—पात्र—नीना, भारतभूषण।

मेहबूब प्राडक्शंस-कृत

१—ऐलान
२—चित्र न० छ.

श्वतानी प्राडक्शंस कृत

१—रंगभूमि—पात्र—निगारसुलताना, जगदीश सेठी, नवीनयाज्ञिक।

नेशनल स्टूडियोज कृत

१—सराय के बाहर—पात्र—सविता देवी, महेन्द्रनाथ।

जनरल टाकीज लि० चाँदनी चौक दिल्ली

[सर्वाधिकार लेखक के आधीन हैं]

धरती के देवता

[मौलिक-उपन्यास]

लेखक

सम्पतलाल पुरोहित

प्रकाशक

साहित्य-मण्डल
दीवान-हाल
देहली

प्रथम बार | जनवरी १९४७ | मूल्य दो रुपये

मिलने का पता
सम्पतलाल पुरोहित
१०६२, सतघरा
धर्मपुरा, देहली

प्रकाशन पथ पर—

१ उनकी तस्वीर

[एक और समस्यापूर्ण मौलिक-उपन्यास]

लेखक—सम्पतलाल पुरोहित

२ रेलगाड़ी में

[कहानी-संग्रह]

लेखक—सम्पतलाल पुरोहित

प्रत्येक का मूल्य दो रुपये प्रति।

डाक-व्यय पृथक्।

—प्रकाशक

मुद्रक
रूपवाणी प्रिंटिंग हाउस,
२३, दरियागंज
देहली

यह है--

उत्कृष्ट मनोरंजन का सर्वप्रिय चिह्न!

(जनता का प्यारा ट्रेडमार्क)

विष्णु चित्र

VISHNU

स्मरण रहे।

विष्णु बारह वर्ष की पुरानी भारत की बेजोड़ चित्र-निर्मात्री संस्था है। देश के नवयुवकों के लिए प्रेरणात्मक चित्रों का निर्माण ही इसका ध्येय है।

विष्णु-चित्रों ने जनता के दिल में जड़ जमा ली है!

विष्णु चित्रों को जनता का सम्पूर्ण सहयोग प्राप्त है।

इसलिए कि वे—

★ मनोरंजक ★ भावपूर्ण ★ शिक्षाप्रद ★ विविधता

★ स्वदेशाभिमान से परिपूर्ण ★ भव्य

★ वीभत्सता रहित ★ और पारिवारिक होते हैं।

१९४७ में विष्णु सिनेटोन

अपने कदरदान दर्शकों व प्रदर्शकों के लिए सगर्व प्रस्तुत करते हैं –

१ भक्त प्रह्लाद — राष्ट्रीय रंग से रंगा हुआ महान धार्मिक चित्र!

२ शाहे मिश्र — एक अनूठा वेशभूषा प्रधान चित्र।

३ सात समुन्दरों की मल्लिका — आश्चर्यजनक जादुई चित्र!

४ जादुई रतन — उत्तेजक संगीत से ओत-प्रोत चित्र!

५ कंगन वाली — चूड़ियों का चमक दिखाने वाला रोमांचकारी चित्र।

६ चन्दन–हार — एक महान आश्चर्य कारी भेदी चित्र!

—जिनकी प्रेरणा से जीवन में उत्साह मिलता है
—जिनके सहवास से जीवन में प्रेरणा जागती है .
—जिनके अलगाव में मोक्ष भी फीका मालूम पड़ता है
ऐसे मेरे अभिन्न-मित्र श्रीयुत श्री चन्द्रशकर त्रिवेदी को
'धरती के देवता' सादर समर्पित करता हूँ—

—सम्पतलाल पुरोहित

लेखक

भारतवर्ष की सबसे बडी फिल्म-कम्पनी

प्रिन्सेस पिक्चर्स कारपोरेशन लि०

[एक करोड की पूँजी से स्थापित]

चेयरमैन

श्री० चन्द्र शंकर टी. त्रिवेदी

मैनेजिंग डायरेक्टर

श्री० मोहनलाल व्यास बार-एट-ला.

— संरक्षक गण —

१—हिज हाईनेस सर लक्ष्मण सिंह जी बहादुर के० सी० एस० आई०—डूँगरपुर।

२—हिज हाईनेस सर रामसिंह जी बहादुर के० सी० एस० आई०—प्रतापगढ।

३—हिज हाईनेस महाराजा राणा श्री हरिश्चन्द्र जी बहादुर —झालावाड।

४—हिज हाईनेस महाराजा राजा साहेब श्री मयूरध्वज सिंह जी—ध्रागध्रा।

५—हिज हाईनेस दि महाराजा साहेब बहादुर, बाँसवाडा

कार्य्यक्रम दिल्ली में स्टूडियो का निर्माण, चित्र-निर्माण, वितरण तथा प्रदर्शन-आदि। शेअर खरीदने का स्वर्ण अवसर

प्रिन्सेस पिक्चर्स कारपोरेशन लि०,

पो० आ० बाक्स न० २१७, दिल्ली।

१

"बेटी। बेटी सरयू घर मे हो।"

'कौन कृष्णा माँ ? आओ माँ। रसोई बना रही हूँ। पैरों पड़ती हूँ।"

"जीती रहो। तुम्हारा सोहाग अमर हो। दूधों नहाओ और पूतों फलो बेटी।"

"रामू तो अच्छा है न। दो दिन से दिखाई नहीं देता। क्या बात है माँ ?'

"बात क्या बताऊँ बेटी। किताब क्या पढने लग गया है। एक अजीब बात हो गई। परसों ही तो नई किताब लाया है। अब तक कितनी ही बार पढ डाली। रात को दिया लेकर बैठ जाता है और घण्टों हो घोटता रहता है। कहता है, सब जबानी याद कर लिया, अब दूसरी किताब लूँगा और आज ही लूँगा। पैसे दो। सो तुम्हें दु ख देने आई हूँ।"

"ऐसी बात मुँह से न कहो माँ। लडका तो हीरा है, हीरा। बडा ही सलौना, वैसा ही होशियार। माँ की भी नजर लग जाती है ऐसे बच्चे को। भगवान करे, खूब लिखे-पढे। हमारे इस मनोहर को देखो न। दिन भर गुल्ली-डण्डे खेलता रहेगा। पढने को कहा कि बस खैर नहीं। सब को डण्डों से पीटना शुरू कर देगा। घर भर डरता है माँ।"

"बच्चे है बेटी। इन्हे अभी कोई समझ थोडे ही है। याद रखो, पढाई की इस जिद मे कहीं तुम लोग बच्चे पर हाथ न उठा बैठना। इतने बडे घर और खेती-बाडी का काम आगे चलकर सब इसे ही तो सम्हालना है।"

"इसीलिए तो कोई कुछ नहीं कहता माँ। लाखों मानमिन्नतों के बाद तो बेटे का मुँह देखना मिला है। लेकिन दो अक्षर पढ जायेगा तो किसी का मुँह तो नहीं ताकेगा। आज पढ़े-लिखों की ही तो कदर होती है। देखो न धनराज सेठ के पास चिट्ठी-पत्री पढवाने के लिये सारा गाँव-का-गाँव दौड़ता है। फिर गाँव की पटेली भी तो इसे ही करनी है।"

"सो तो है ही बेटी, इस बात मे रामू को कुछ भी नहीं कहना पडता। सुबह-ही-सुबह पोथियाँ बगल मे दबाकर बिना कहे झट मदरसे के लिये चल पड़ता है। बेचारा रोज एक कोस जमीन जाता और आता है। बडा लगाव है इसका पढने से। क्यों बेटी। नन्दू भाई से कह कर गाँव के बच्चों के लिए अब तो कोई मास्टर ही न बुलालो।"

'जब भी कभी वे शहर जाते है—मास्टर के लिये कोशिश करते हैं। पर कोई तैयार ही नहीं होता माँ? कहता है—गाँव मे धरा क्या है? वहाँ अच्छा नहीं लगता। इन पढ़े-लिखों के भेजे ही खराब होते हैं।"

"हाँ जी। यह बात तो है ही! पढे-लिखे लोग गाँव मे ठहरते ही नहीं। उस जदुनाथ की ही बात देखो! बड़ के नीचे दस लड़के

पढने लग गये थे। एक एक करके दस रुपया महीना मिलता था। श्रौर ऊपर से मिलता था हर रविवार को आटा-दाल। फिर भी दो महीने पढा-पुढ कर जो गया सो अब तक नहीं आया। इन लोगों का क्या ठिकाना। इसीलिए तो मैंने रामू को सरकारी मदरसे मे भरती करा दिया है। अब तो तीन किताव पढ गया है।"

"रामू की क्या वात कहती हो माँ। वह तो वेचारा मनोहर को भी रोज साथ पढने जाने को कहता है, जिद करता है। लेकिन हमारे मनोहरजी ने कभी किसी की सुनी है ? हाँ, वताओ, कितने पैसे दूँ ?"

"चार आने माँगता है। कुछ सीने और पीसने-पासने का काम भी दे दो, लेती जाऊँ।"

"मैंने भी देर करदी, दिन चढ रहा है। वेचारे वच्चे को इतनी दूर मदरसा जाना है। कम्रा दूर भी तो कितना है। लो, ये पैसे। खाने को नहीं वनाया होगा इतनी जल्दी ? दो पूरियाँ भी लेती जाओ। हाँ, घर से सव काम करके आना, यहीं सीना और वैठकर पीस भी लेना। वहाँ अकेली वैठकर—भीकोगी। वच्चा घर रहता था तो मन भी लग जाता था—अव तो अकेली दीवारों से सिर मारती होगी। यहीं आजाना तुम्हारा भी समय कटेगा। मैं भी वैठकर दाल-दूल ठीक करलूँगी।"

'जुग जुग जियो वेटी। तुम्हारा वडा अहसान पड़ [illegible] है मुझ पर।"

"ऐसी वात मुँह से कहोगी माँ, [तो हमारा तु[illegible] [illegible] हो जायगा।"

"मैं तुमसे क्यों झगड़ूँगी बेटी।"

"तो मैं तुम पर अपना अहसान क्यों चढाऊँगी माँ। तुमसे काम लेती हूँ और दाम देती हूँ, इसमें अहसान की क्या बात। आदमी आदमी के काम आये, यही आत्मीयत है।"

"तुम आत्मीयत को जानती हो, इसीसे मुझे बहुत अच्छी लगती हो। और तुमसे न मालूम क्या-क्या बकवास भी करती रहती हूँ। लेकिन मैं इसे अहसान ही मानूँगी। तीसी बहिन और राधा बहिन को काम न देकर मुझे काम देती हो यह अहसान नहीं तो और क्या है? मेरे बेटे की जिन्दगी सुधर रही है— तुम्हारे कारण से। तुम लोग आँख फेर लो मुझसे बेटी, तो मेरी लुटिया ही डूब जाय।'

"अहसान की बात करती हो माँ। तो तुम्हारे अहसान मुझ पर भी तो कम नहीं हैं। क्या मुझे याद नहीं है-जब मनोहर पेड़ पर से गिर पड़ा था तो तीन दिन तक उसका सिर तुमने अपनी गोद से नीचे नहीं रखा। हम लोग खर्राटे भरते थे और तुम रात-रातभर जागती रहीं। मैं तो कहूँगी तुमने मेरी फिर से गोद भरी है। मैं उन बातों को भूली नहीं हूँ माँ। जब मनोहर हुआ था, तो तुमने मुझे माँ से भी अधिक आराम दिया था। मेरी कितनी सेवा की थी। और सासू माँ के लिए तुम आज भी क्या नहीं करतीं? उनके कपड़े धोना, उन्हें नहलाना, नया घर का आदमी उनकी सेवा करेगा। अहसान के मायने में तो सही अहसान तुम्हारा है। काम देने की जरा भी बात को अहसान

कह कर मुझ पर क्यों बोझ-सा लाद रही हो माँ ?"

"ऐसी बात फिर मुँह से निकाली तो अब मै तुमसे झगडा कर बैठूँगी।"

"इस वक्त हम तुम दोनों झगडने बैठ जायँगी तो न तो मै रसोई बना सकूँगी और न तुम रामू को मदरसे ही भेज सकोगी।"

"लो, बातों-ही-बातों मे यह तो मै भूल ही गई। राम, राम, लडके को देर हो गई। मै भी कैसी हूँ ?"

× × ×

सरयू के यहा से कृष्णा ने अपने घर आकर देखा तो एक नई आकृति के दर्शन हुए। लम्बी-लम्बी डाढी, सिर पर कनटोप, शरीर मे बण्डी और घुटने घुटने तक धोती। डाढी और मूछों म चेहरा पहचाना नहीं गया। कृष्णा दरवाजे पर जाकर रुक गई। और आगन्तुक से क्या प्रश्न करे, सोचने लगी। आगन्तुक ने उसकी की कठिनाइयों को समझ लिया। बोला—"मै बडा अभागा हूँ बहिन, तुम मुझे पहचान भी न सकीं।"

"मेरा भैया। मनसुखा।" कृष्णा की आँखों से हर्ष मिश्रित दुःख के आँसुओं की झडी लग गई। फिर रुँधे हुए कण्ठ से बोली—"आठ बरस थोडे होते हैं भैया ? इसमे कितनी ही भूलें हो जाया करती है। जब तुम मुझे भूल सकते हो तो—इस दुखियारी को दुःख मे क्या याद रह सकता है ? फिर तुम्हारा यह भेष भी तो अजीब है। कहाँ रहे इतने दिन ? तनसुखा का कुछ पता चला ?"

"उस मनमौजी का क्या पता लगता बहिन। कभी एक जगह टिकता नहीं। जमकर कुछ करता नहीं। जब से बहू मरी है। वह तो और भी आजाद हो गया है। दो बरस हो गए, बम्बई में मिला था। कुछ अच्छे आदमियों के साथ से पढ-लिख भी गया है। कहता था कि एक पुस्तकालय मे काम मिला है। शहर की हवा लग गई है। पता नहीं अब कहाँ है और क्या करता है? मुझसे तो बड़ा रूखा-रूखा रहता है। तीन बरस के बाद मिला था। तीन मिनिट बात भी नहीं की और यह चला वह चला। मै तो हैरान हूँ। सोचता हूँ, अब मिला तो उसका ब्याह कर दें। तुम्हारे पास ही रहे—तुम्हें भी जरा आराम मिले।"

"मुझे तो तुम लोग बडा आराम दे रहे हो। आठ आठ बरस में सूरत दिखाते हो। एक दिन रह कर चल पडते हो। तुम लोगों का क्या भरोसा। और क्या तुम से कोई आशा करे। फिर किसी न-किसी मतलब से ही आए होगे। यह मैं जानती हूँ कि बहिन की तुम्हें चिन्ता नहीं है। लेकिन तुम्हारे विषय मे मुझे सन्तोष है, तुमने एक ऐसा रास्ता अख्तियार लिया है—जिस पर मैं क्या दुनिया सन्तोष प्रकट कर सकती है। बताओ अबकी किस मतलब से आए हो?'

'झूठ क्यों बोलूँ। आया तो हूँ मतलब से ही। लेकिन इस बार बहुत दिनों तक तुम्हारे ही पास रहूँगा। सब ने मुझे यहीं रह कर काम करने का आदेश दिया है। लेकिन यह बात प्रकट नहीं करनी है। लोग यही समझें कि मेहनत-मजदूरी करके इस गाँव मे मैं अपना पेट पालने आया हूँ।'

"इसके लिए तुम निश्चिन्त रहो। कह दूँगी कि मेरा भाई बुढापे में मेरी मदद करने आया है। लेकिन बताओ तो क्या करते रहे, कहाँ रहे इतने दिन ?"

"एक जगह रहा होऊं तो बताऊँ ? और एक काम पर टिका रहने दिया गया होता तो बताऊँ ? क्या करूँ, कुछ संस्कार ही ऐसे पडे हुए हैं कि वे छूटते भी नहीं। दो काम अच्छे हो जाते हैं तो एक जरूर बिगड जाता है। जितनी सेवा नहीं कर पाता उतना बिगाड कर देता हूँ। आसाम भेजा गया था—किसानों में रह कर उनकी आन्तरिक स्थिति जानने के लिए और मार बैठा—वहां के चाय के बगीचे के एक आफीसर को, क्या करूँ ? मुझ से अन्याय देखा नहीं जाता। बस खून खौल उठता है। आसाम से बुला लिया गया। अब सब ने यहाँ भेज दिया। मैंने कहा, चलो कुछ दिन रह कर तुम्हारी ही सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हो जाय।"

"मेरी सेवा तो करली तुमने।" इतना कह कर कृष्णा ने एक गहरी निश्वास खींची।

'क्या मतलब ?" मनसुखा ने पूछा।

"मतलब साफ है—यहाँ के ठाकुर के अत्याचारों को तुम कितने दिन सह सकोगे ?"

"निश्चिन्त रहो बहिन, साल-छः महीने तो मैं सब चुपचाप देखता ही रहूँगा।

"मेरा सौभाग्य कि साल भर तक तुम मेरे पास रहो। और

ाम् पर तुम्हारी छाया पडे। अच्छा, मैं तुम्हारे लिए भोजन तैयार करती हूँ। घर मे आकर बैठो। वहीं और बातें भी होंगी।"

× ×

राम प्रसाद ने ब्राह्मण कुल मे जन्म अवश्य लिया था। किन्तु उसके दादा और पिता की तरह गॉव-गॉव घूम कर भिक्षा वृत्ति करना उसे कतई पसन्द नहीं था। इस बात को लेकर घर मे कई बार तरह-तरह के झगडे होते थे। उसके दादा और पिता इस बात पर बडा जोर देते थे कि वह ब्राह्मण का बच्चा है और उसे वही काम करने चाहिएँ जो ब्राह्मण करते है। उसके दादा और पिता तक भिक्षा वृत्ति करके पेट पालते है तो उसे इसमे क्यों एतराज होना चाहिए। राम प्रसाद को इनमें से एक भी बात अच्छी नहीं लगती थी। वह कहता कि—यह क्यों जरूरी है कि दादा और पिता अब तक जो गलती करते आए उसे वह भी दुहराए। मॉग-मूँग कर खाना और दूसरों की दया पर जीना पाप है। खास कर ऐसे समय मे जबकि लोगों मे कतई श्रद्धा नहीं रह गई है—और जबकि यह कृत्य हेय समझा जाता है। इस पर जब घर वाले और भी इधर उधर की बात समझा कर उसे भिक्षा वृत्ति की ओर ले जाने का प्रयत्न करते तो वह साफ कह देता—"मै अपनी बात पर अटल रहूँगा। मैं भीख नहीं मॉगूँगा। काम करके खुद खाऊँगा और परिवार को भी खिलाऊँगा। बल्कि आप लोगों को भिक्षा मॉगने से रोकूँगा। और एक दिन रोक कर ही रहूँगा।'

जब घर वालों ने देखा कि राम प्रसाद किसी भी तरह नहीं मानता तो उन्होंने पूछा कि आखिर वह क्या करना चाहता है। उसने कहा कि गॉव मे पैदा हुआ है और गॉव मे ही उसे रहना है। पढा लिखा है नहीं इसलिये लाट साहबी कर नहीं सकता। वह तो अपना जीवन खेती पर बिताना चाहता है। इस पर घर वालों ने उसे खेती करने के लिए कुछ जमीन इधर उधर से ले कर दे दी। राम प्रसाद ने खेती मे बड़ा ही मन लगाया। खूब उपज हुई। उसका परिवार बडा ही प्रसन्न हुआ। आखिर उसने अपने दादा और पिता की भिक्षा वृत्ति एक दिन छुडा ही दी। उसका ब्याह भी हो गया। कृष्णा, दुलहन के रूप मे उसके घर मे आई। उसके आते ही घर धन-धान्य से परिपूर्ण हो गया। राम प्रसाद पूरा किसान बन गया। उसके यहाँ दो लडके और दो लडकियों ने भी जन्म ले लिया। समस्त परिवार मे इस छोर से उस छोर तक आनन्द और प्रसन्नता की लहरें उठने लगीं।

और कुछ समय के बाद इस परिवार पर एक दैवी प्रकोप हुआ। राम प्रसाद के दादा तो अत्यधिक बूढे हो ही गए थे। उनके मरने से परिवार को इतना धक्का नहीं पहुचा जितना कि कुछ ही दिनों बाद उसकी पिता की मृत्यु से। पिता उसके दुनिया देखे हुए थे। इसलिए घर का शासन बडे ही सुचारु रूप से हो रहा था। राम प्रसाद को कभी घरेलू मामले मे बोलने की आवश्यकता पडी ही नहीं। यही कारण था कि वह पारिवारिक व्यवहार से अनभिज्ञ रहा। माता उसकी सदा ही बीमार रहती

थी, अत पति के चल बसने के तुरन्त पश्चात उसने भी आँखें बन्द कर लीं। उसकी चार बहिनें ब्याहने योग्य हो चुकी थीं। सबका व्याह आज कल मे ही करना था। दो का व्याह तो उसने अच्छी तरह से कर दिया। तीसरी के व्याह मे उसे कठिनाइयाँ हुईं और चौथी का व्याह उसे धनराज सेठ से कर्ज लेकर करना पडा।

दर साल धनराज का कर्ज चुकाए जाने पर भी वही खाते का हिसाब बढता ही गया—और इस प्रकार बढता गया जिस प्रकार राम प्रसाद की उम्र। अब उसकी हालत इतनी खराब हो चुकी थी कि उसे अपने बच्चों के उपचार के लिए दवाई और दूध भी मुश्किल हो गया। शीतला माता मे उसके सब बच्चे चटाचट मर गए। और साथ ही मर गया उसके मन का उत्साह। कृष्णा ने उसे बहुत धीरज बँधाया, परन्तु सब व्यर्थ हुआ। इस दम्पत्ति पर इतने सकट आ पडे कि उन्हें सम्हालना कठिन हो गया। इसी प्रकार की तगी मे वर्ष पर-वर्ष बीतने लगे। दोनों की अवस्था ढल गई। उन दोनों को जो कोई भी देखता, उसकी आँखों में आँसू आ जाते। कहाँ वे दिन और कहाँ ये दिन। भगवान ऐसे दिन किसी को भी न दिखाए। किन्तु भगवान को अभी इससे भी बुरे दिन दिखाने थे। कृष्णा को आधी से अधिक उम्र बीत जाने पर बच्चा होने को हुआ। दम्पत्ति के मुँह पर मुस्कुराहट नाचने लगी। किन्तु यह मुस्कुराहट निपूते धनराज से नहीं देखी गई। उसने सब कुछ कुर्क करवा लिया। उन्हें खेतों मे मजदूरी करने

की स्थिति मे ला पटका। राम प्रसाद से यह धक्का सहा नहीं गया। और अपनी भावी सन्तान का बिना मुख देखे ही वह इस दुनिया से चल बसा। उसकी मृत्यु से कृष्णा के जीवन मे एक भारी भूचाल आ गया।

× × ×

गॉव के पटेल नन्दलाल को बच्चों को पढाने का बडा शौक था। बार-बार प्रयत्न करके शहर से मास्टर ला कर रखता। किन्तु जो आता, दो दो चार-चार महीने रह कर चलता बनता। कोई भी अधिक समय तक टिका न रह सका। इस प्रकार इस रामपुर ग्राम के लडकों की पढाई कभी चालू होती और कभी बन्द। रामू भी इन्हीं लडकों मे पढता था। पढाई के समय वह जो कुछ पढ़ पाता—उसे और लड़कों की तरह भूलता नहीं था। बल्कि उसे और भी अच्छी तरह याद कर लेता था। जदुनाथ मास्टर जब चला गया और उसके बाद कोई भी मास्टर नहीं आया तो कृष्णा को बड़ी चिन्ता हुई। आखिर एक दिन रामू को लेकर वह कस्बा पहुँची और उसे सरकारी स्कूल मे भरती करवा आई। रामपुर से कस्बा दो मील दूर था। रामू अब रोज यहाँ पढने आने-जाने लगा। दस वर्ष की उम्र मे रामू ने तीन किताबें पढ़ ली थीं। अपने बेटे की कुशाग्र बुद्धि पर कृष्णा को बड़ा गर्व था। उसे यकीन हो गया था कि रामू पढ़ लिख कर एक दिन बहुत बडा आदमी बनेगा। इसी आशा मे वह रामू की पढ़ाई के सम्पूर्ण साधन जुटाने मे बड़े-से-बड़ा कष्ट भी हँसते-हँसते सहती थी। लोगों

के कपड़े सीने और चक्की पीसने से उसे जो कुछ प्राप्त होता--वह सब रामू की पढाई में लगा देती थी।

नन्दू पटेल की पत्नी सरयू को कृष्णा से बड़ा लगाव था। वह अधेड स्त्री थी—और कृष्णा वृद्धा। फिर भी दोनों में खूब पटती थी। दोनों को अक्षर-ज्ञान था। प्राय रामायण पर बातें करतीं-करतीं घरेलू झगडों में फस कर फिर दुनिया के कष्टों का हिसाब लगाने लग जातीं। यही था उनका दैनिक कार्य-क्रम। कृष्णा को सरयू से सीने और पीसने का काम रोज मिला करता था। इसलिए वह उसके घर से बहुत खुश थी। उसमें अपना ममत्व दिखाती थी। जरा - सा काम पड़ने पर तुरन्त दौड़ पड़ती। देर होने पर स्वय सरयू उसके यहाँ पहुच जाती। नन्दू गाँव का पटेल था—और कृष्णा पर उसकी विशेष कृपा थी। गरज कि कृष्णा को नन्दू का घर भर चाहता था। इसी लिए कृष्णा ने दु ख-सुख के लिए इस घर को अपना समझ लिया था।

२

रामधन पटवारी को अगले साल पेन्शन मिलने वाली थी। कुल साढे तेरह रुपया महीना पाते थे। लेकिन यह आमदनी उनके लिए इतनी काफी थी कि एक दुमंजिला मकान बना लिया। तीन लड़कियों की बड़ी धूम-धाम से शादियाँ कर दीं। दो लड़कों को उच्च-शिक्षा प्राप्त करने के लिए शहर भेज दिये। स्वय की स्त्री

के लिए पाँच-छः हजार के गहने भी बन गए और भाई को शहर में एक दवा की दुकान भी खुलवा दी। लेकिन उनकी वेशभूषा में कोई अन्तर नहीं आया। सुतली से कान में अटकाया हुआ चश्मा, सिर पर मुड़ी हुई और अत्यन्त मैली टोपी, बन्द गले का अनेक स्थानों पर पैबन्द लगा हुआ कोट, मटमैली धोती, फटे हुए जूते और कई जगह से इधर-उधर झुकी हुई हाथ में चिकनी लकड़ी,

शरीर एकदम किडकिड़ा, गर्दन लम्बी और पतली, गाल भीतर को धसे हुए, मुँह में नकली दांत—पीठ पर एक ऊँची-सी गोम। जेब में बीड़ी का बण्डल और माचिस एक तरफ, तो कुछ मुड़े हुए मैले पत्र तथा एक छोटी-सी दो अँगुल की पेन्सिल दूसरी तरफ। बोले तो कभी औरत जैसी और कभी आदमी जैसी आवाज। बोलने से पहले चश्मों के बीचों बीच से सामने वाले आदमी को कुछ देर घूरने की खास आदत।

गाँव में दौरा करने जाते तो जमीन से दो हाथ ऊँची घोड़ी पर सवारी गाँठते, जो सुबह से शाम दो कोस चलती। रास्ते-भर हिनहिनाती जाती। कभी-कभी रुक कर घास भी खाने लगती जिस पर पटवारी साहब को कोई एतराज नहीं होता। जिस शिकार की खोज में वह रामपुर जा रहे थे, वह अपने खेत से घर की ओर उसी रास्ते से जाता मिला।

"जग्गू! ओ जग्गू!" जग्गू ने मुड़कर देखा, पटवारीजी पुकार रहे थे।"

"हाँ, महाराज राम। राम!"

"अरे, राम। राम के बच्चे। इस बूढ़े आदमी को कब तक चक्कर देता रहेगा ?"

"क्या बताऊँ पटवारी महाराज। कल ही धनराज सेठ के यहाँ गया था। कहता है भैरों वाला खेत गिरवी रख दे तो रुपये देता हूँ। आप ही सोचिये महाराज, खेत को गिरवी रख दूँगा तो बाल-बच्चों के पेट कैसे पालूँगा ?"

"बाल बच्चों के बाप। तेरे दिमाग में तो फितूर घुसा हुआ है। हजार मर्तबा समझाया कि जमीन बेच दे, जमीन बेच दे। लेकिन सुनता ही नहीं। दो साल का लगान चढ चुका है। जमीन दिन-दिन ख़राब होती जा रही है। मैंने बार-बार झूठी-सच्ची रिपोर्ट देकर तुझे बचाया। इसलिए कि एक न एक दिन बुद्धिमानी का काम करके यह जमीन तू मुझे बेच देगा। लेकिन देखता हूँ कि तेरे कान में जूँ तक नहीं रेंगती। बोल अब भी वखत है, क्या कहता है ? नक़द तीन सौ रुपये देता हूँ। इसी वखत।'

"नहीं पटवारी साहेब। आप कैसी बातें करते हैं। मैं जमीन को हर्गिज नहीं बेचूँगा। मैं क्या करूँगा ? मेरे बाल-बच्चे कहाँ जाएँगे ? जरा सोचिए तो।"

"मैंने तो बहुत कुछ सोच लिया है। यह दुनिया भलाई की नहीं है। जिसका भला करो वही दगा दे। कभी की जमीन नीलाम हो गई होती बच्चू। दो साल का सरकारी लगान नहीं चुकाना कम जुर्म नहीं है।"

"बुरा न मानें सरकार। मैंने हर फसल पर आप से विनती.

की है कि आप पहले सरकारी लगान चुकता कर लें और फिर धनराज को उसका हिस्सा चुकायें। लेकिन आप पहले धनराजजी का हिस्सा चुकाते हैं और बाद में सरकार का। सरकार के लिए आपने कभी चिन्ता ही नहीं की, इसलिए लगान बकाया रहता गया।'

"अरे दुष्ट ! जरा तो शर्म कर, इस बुढ़ापे में तू मुझे यह दोष देता है – साधु आदमी को।"

"दोष की बात नहीं है मालिक, सच्ची बात कह रहा हूँ। फिर आप मुझे जमीन बेचने को कहते हैं—एक किसान के लिए इससे बुरी बात और क्या हो सकती है ?"

"यह बात है, अच्छा बच्चू ! तो अब बच कर निकल जाना। खाते खेसारा में जमीन नीलाम न करवा दूँ तो मेरा नाम रामधन नहीं।'

'आप मालिक हैं, चाहे जो कर सकते हैं। लेकिन आपके जैसे मेरे भी बच्चे हैं। इतना खयाल रखिएगा गरीब को मारने में फायदा नहीं है। वह तो पहले से ही मरा हुआ है।"

गाँव आ गया था। जग्गू ने अपने घर की ओर मुड़ते हुए पटवारी से राम राम की। लेकिन पटवारी ने उसे नहीं स्वीकारा। जग्गू समझ गया कि पटवारी बहुत ही नाराज हो गए हैं।

रामधन पटवारी ज्यों ही सेठ धनराज के दरवाजे पर पहुँचे— उसने दौड़ कर पटवारी जी का स्वागत किया। सेठ का नौकर पुन्नू पटवारी की घोड़ी को लेकर उसे चन्दा-पानी कराने चल दिया।

रामधन बोला—"सेठ जी, आपके लिए लोग मुझे बडी-बडी बदनामी दे रहे है। अभी जग्गू रास्ते मे ही मिल गया। कहने लगा कि मै हमेशा ही तुम्हारी ओट लिया करता हूँ। पता नहीं इस दुष्ट के दिमाग मे ऐसी बात कहाँ से आ गई ? मालूम होता है इसे किसी ने भड़का दिया है।"

"क्या बताएँ, पटवारी साहेब। यह मनसुखा देश-विदेश क्या घूम आया है। गॉव भर को बिगाड रहा है। बडा चालाक है। मजदूरी करके पेट पालता है। लेकिन अकड रखता है दुनिया भर की। न मालूम क्या-क्या समझाता रहता है गॉव वालों को।"

"समझ गया, सेठ साहेब समझ गया। मैंने तो पहली बार देखकर ही उसको भॉप लिया था। बात करने का उसका ढग बडा खतरनाक है। गॉव मे कुछ काम वाम भी करता है या यों ही बकवास करता रहता है दुनिया भर की।"

"काम। काम की भली कही आपने पटवारी साहेब। सारे गॉव मे इसकी पूछ है। ईख पेली जायगी इसके हाथ से। गन्ने कटेंगे इसके हाथ से। मूँगफली खुदेगी इसके हाथ से। घास कटेगी इसके हाथ से। गेहूँ कटेंगे इसके हाथ से। कहीं भी फसली काम हो रहा है, हर जगह यही अगुआ है। वह दौड-दौड कर काम करता है कि क्या बताऊँ ? गॉव भर के किसान सिर पर उठाये घूमते हैं। कइयों की खेतियॉ सुधार दी है—खेतियॉ, इसी ने।"

"अच्छा ?" पटवारी का मुँह फटा का फटा रह गया।

"हा, अब जग्गू के साथ मिल कर खेती कर रहा है। रात दिन खेतों मे जुटा रहता है। नए-नए तरीके बताता है। यह कर-कह कर, कभी चैन नहीं लेता। इसी का नतीजा है कि जग्गू की फसल इमसाल खेतों मे जो झूम रही है—आप देख लें तो चक्कर खा जायँ ? वो खेत लहलहा रहे हैं कि वाह! वाह! मुझे तो डर है कि कहीं इस साल इसने सब कर्ज चुका दिया तो फिर हाथ से निकल जाएगा।" धनराज ने कहा।

पुन्नू पटवारी की घोडी बाँध कर चौपाल से आ रहा था। धनराज ने उसे पुकार कर कहा—"अरे ओ पुन्नू के बच्चे! जरा अन्दर जाकर कह दे। खीर और पूरियाँ बना लें। पटवारी साहेब बडे दिन बाद शहर से आए हैं।" पुन्नू सिर हिला कर जाने लगा। धनराज फिर बोला—"अरे ओ! घनचक्कर! घडी भर का माथा हिला कर क्या चल दिया, पूरी बात तो सुन ले।" पुन्नू पूरी बात सुनने के लिए रुक गया। धनराज बोला—"पहले दो प्याला चा बनाने के लिए बोल दे। खूब खुशबोदार हो, जरा केशर-केशर डाल कर हो, जल्दी बनवा कर ला। थके-माँदे आए हैं पटवारी साहेब।" फिर पटवारी की ओर मुखातिब हो कर—"पानी पिएँगे। पानी मगाऊँ पटवारी साहेब ?" पटवारी न मालूम कहाँ थे—पहले बोले—'नहीं', फिर ओठों पर जबान फिरा कर बोले—"हाँ, हाँ, पानी तो पिऊगा।" खीर और पूरी का नाम सुन कर पुन्नू के मुँह मे पानी भर आया था। जबान से

मुँह साफ करता हुआ पानी लाने और सेठजी का संदेश सिठानीजी को सुनाने के लिए भीतर चला गया।

दोनों कुछ देर चुप रहे। फिर अचानक पटवारी बोल उठे-"जग्गू की फसल इस साल अच्छी हो गई, यह बहुत बुरा हुआ?" और चश्मों के बीचों-बीच से धनराज की ओर गौर से देखने लगे।

धनराज ने गम्भीर हो कर पूछा—"क्यों?"

"यही कि मैं इस साल इस जमीन की रिपोर्ट खास करके खराब देने जा रहा था। सो अब नहीं हो सकेगा।" पटवारी ने कहा।

'आप भी बच्चों की सी बातें करते हैं पटवारी साहेब। अरे खराब रिपोर्ट देने से आपको क्यों चूकना चाहिए। कौन आकर यहाँ सिर मारेगा। और किसने अब तक मारा है? आप जो लिख दें, पत्थर की लकीर। अब तक क्या हुआ है सो आप डरते हैं। राम प्रसाद की ही बात सामने है। कौन पूछने आया था? और फसल के लिए,आप डरते हैं सो दवा भी अपने पास है।" यह कह कर धनराज ने पटवारी का हाथ दबा दिया। पटवारी समझे नहीं। वे प्रश्नवाचक आँखों से चश्मों के बीचों-बीच से धनराज की ओर देखने लगे। धनराज फिरबोला-"नहीं समझे?"

पटवारी बोले—"नहीं।"

"एक रात की ही तो बात है।" धनराज ने कहा।

"हाँ। हाँ, समझा, यह तो करना ही पड़ेगा। फसल चोरों से

कटवा दी। काम बन गया। ठीक है ठीक है, देखता हूँ—यह तो करना ही पड़ेगा।" पटवारी फिर बोले—"हाँ, आपको इससे कितना रुपया लेना है?"

"यही कोई पन्द्रह सौ।" धनराज बोला।

धनराज का हाथ दाब कर पटवारी बोले—"आपने भी कमाल कर दिया सेठ साहेब। यह तो क्या, इसके बेटे के बेटे भी नहीं चुका सकेंगे। लेकिन इस साल आपने हमारे साथ चाल चली—पूरा हिस्सा नहीं दिया और जो देने का वायदा किया सो अभी तक जेब में नहीं आया।'

"इसके लिए आपको घबराने की जरूरत नहीं है, पटवारी साहेब। आपके लिए रुपए क्या, दूसरी जान हाजिर है।"

"यही तो आप लोगों में खासियत है—जान हाजिर कर देंगे, दाम हाजिर नहीं करेंगे।" इतना कह पटवारी ही-ही करके हँसने लगे।

इतने ही में पुन्नू चा लेकर आ गया। सेठ ने गरज कर कहा—"ओ काठ के उल्लू। तुझे पानी लाने के लिए कहा था न। पहले चा और पीछे पानी, उल्टे कहीं के, काम चोर।"

"सेठ जी, मैं क्या करूँ? सिठानी जी ने मना कर दिया था। बोलीं—पानी क्यों पियेंगे, चा पियेंगे पटवारी साहेब। खबरदार, जो पानी दिया। सो मैं चुप रह गया।'

"अच्छा, अच्छा, मारो गोली पानी को, चलो अब चा ही पी लें। जा रे जा, काम कर अपना। हाँ, जरा पूरियाँ नरम नरम सिकवाना;

मुँह साफ करता हुआ पानी लाने और सेठजी का संदेश सिठानीजी को सुनाने के लिए भीतर चला गया।

दोनों कुछ देर चुप रहे। फिर अचानक पटवारी बोल उठे—"जग्गू की फसल इस साल अच्छी हो गई, यह बहुत बुरा हुआ?" और चश्मों के बीचों-बीच से धनराज की ओर गौर से देखने लगे।

धनराज ने गम्भीर हो कर पूछा—"क्यों?"

"यही कि मैं इस साल इस जमीन की रिपोर्ट खास करके खराब देने जा रहा था। सो अब नहीं हो सकेगा।" पटवारी ने कहा।

'आप भी बच्चों की-सी बातें करते हैं पटवारी साहेब। अरे खराब रिपोर्ट देने से आपको क्यों चूकना चाहिए। कौन आकर यहाँ सिर मारेगा। और किसने अब तक मारा है? आप जो लिख दें, पत्थर की लकीर। अब तक क्या हुआ है सो आप डरते हैं। राम प्रसाद की ही बात सामने है। कौन पूछने आया था? और फसल के लिए आप डरते हैं सो दवा भी अपने पास है।" यह कह कर धनराज ने पटवारी का हाथ दबा दिया। पटवारी समझे नहीं। वे प्रश्नवाचक आँखों से चश्मों के बीचों-बीच से धनराज की ओर देखने लगे। धनराज फिर बोला—"नहीं समझे?"

पटवारी बोले—"नहीं।"

"एक रात की ही तो बात है।" धनराज ने कहा।

"हाँ। हाँ, समझा, यह तो करना ही पड़ेगा। फसल चोरों से

कटवा न्गी। काम बन गया। ठीक है ठीक है, देखता हूँ—यह तो करना ही पडेगा।" पटवारी फिर बोले—"हॉ, आपको इससे कितना रुपया लेना है?"

"यही कोई पन्दरह सौ।" धनराज बोला।

धनराज का हाथ दाब कर पटवारी बोले—"आपने भी कमाल कर दिया सेठ साहेब। यह तो क्या, इसके बेटे के बेटे भी नहीं चुका सकेंगे। लेकिन इस साल आपने हमारे साथ चाल चली—पूरा हिस्सा नहीं दिया और जो देने का वायदा किया सो अभी तक जेब मे नही आया।'

"इसके लिए आपको घबराने की जरूरत नहीं है, पटवारी साहेब। आपके लिए रुपए क्या, हमरी जान हाजिर है।'

"यही तो आप लोगों मे खासियत है—जान हाजिर कर देंगे, दाम हाजिर नहीं करेंगे।" इतना कह पटवारी ही-ही करके हसने लगे।

इतने ही मे पुन्न् चा लेकर आ गया। सेठ ने गरज कर कहा—'ओ काठ के उल्लू। तुझे पानी लाने के लिए कहा था न। पहले चा और पीछे पानी, उल्टे कहीं के, काम चोर।"

"सेठ जी, मै क्या करूँ? सिठानी जी ने मना कर दिया था। बोलीं—पानी क्यों पियेंगे, चा पियेंगे पटवारी साहेब। खबरदार, जो पानी दिया। सो मैं चुप रह गया।"

"अच्छा, अच्छा, मारो गोली पानी को, चलो अब चा ही पी लें। जा रे जा, काम कर अपना। हॉ, जरा पूरियॉ नरम-नरम सिकवाना;

दॉत नहीं हैं मुँह मे।" इतना कह कर पुन्नू के सामने पटवारी ने मुँह खोलकर अपने नकली दॉत दिखाए। फिर चा का प्याला उठा कर मुँह के पास लाते कहा—"अहा च च क्या खुशबो है चा मे ?"

"और फिर एक काम और करें।" तभी वनराज बोला।

"वह क्या ?' पटवारी ने पूछा।

"रही सही फसल पर कुर्की। कहिए कैसी रही ?"

"भई वाह, कमाल कर दिया इस चा ने।"

"अजी हम तो सदा आपके मतलब की ही बात कहेंगे पटवारी साहेब, आप चाहे माने या न माने।"

"अरे भई दुनियॉ न माने, कल ही कागजात लेकर आप मेरे साथ शहर चले चलें—एक दावा ठोक दीजिए बस। हाकिम को पचास रुपए बस होंगे। मैं फिर काफी ठीक कर लूँगा।"

"तो यह तै रहा।"

"बिल्कुल तै, लेकिन कम्बख्त यह मनमुखा कहाँ से आ मरा इस गॉव मे और सब गॉव जल गए थे क्या ?'

"अजी छोड़िए, आप भी क्या परवा करेंगे उस पिद्दी की। अच्छों-अच्छों को पानी पिला दिया है आपने पटवारी साहेब। क्या मैं आपको जानता नहीं हूँ ?"

इतने ही मे पुन्नू दो थालों मे सजा कर, खीर, पूरी, आलू, पापड़, साग, चटनी, अचार-मुरब्बा आदि ले आया। भोजन

देख कर पटवारीजो को अनाज ने रस छोड़ दिया। हाथ मुँह धो कर वे तुरन्त थाल पर झुक पड़े।

× × ×

फसल को देख कर जग्गू का मन बाँसों उछलने लगा—अहा! अब जन्म जन्म के उसके कर्ज इस साल चुक जायँगे। घर में साल भर तक खाने के लिये काफी अनाज भी बचा लेगा। स्त्री और बच्चों के लिये बाजार से कपड़े लायेगा। अभी तक उघाड़े शरीर घूमता था अब वह अपने लिये भी एक बण्डी बना लेगा। बैलों के गलों में टुनटुनियाँ डालेगा। फिर गाँव में पञ्चों के सामने सिर ऊँचा करके बैठेगा—क्यों नहीं बैठेगा—अब उसे कोई कर्ज थोड़े ही चुकाना है। अगले साल की खेती और भी भारी उत्साह के साथ करेगा। मनसुखा द्वारा बताए गए खेती के सब तरीके काम लायेगा। जमीन में खाद देगा, अच्छी खुदाई करेगा और चौगुना अनाज पैदा करेगा।

लेकिन यह सब हो जाता तो पटवारी का नाम रामधन कौन कहता एक रात जब चोरों ने उसकी आधी फसल काटकर गायब कर दी तो दूसरे दिन सबेरे फसल पर दो कुर्कियाँ एक साथ आ गईं। पहले धनराज का पाई-पाई का भुगतान हुआ—फिर सरकारी लगान का। लेकिन सरकार की दो साल की बकाया और इस साल की पूरी लगान मिला कर सबका आधा भी वसूल नहीं हो सका। तब रामधन पटवारी ने दीनू को समझा कर जग्गू के पास भेजा।

"बिल्कुल, बिल्कुल। मुझे तो इस गाँव में रहना है पटवारी साहेब। मनसुखा ने कैसा रंग चढ़ाया—कुछ भी हो। इसका फैसला आज ही हो जाय आपके शहर जाने के पहले।"

-- ----

३

जग्गू की फसल काटने वाले चोरों में फूट पड़ गई थी। उनमें से एक आदमी ने आकर मनसुखा को सब बातें खोलकर साफ साफ बता दीं। उसे जब यह मालूम हुआ कि इस चोरी में पटवारी और धनराज का सरासर हाथ था तो क्रोध के मारे उसने अपने दाँत किटकिटा दिये। वह दौड़कर नन्दू पटेल के पास पहुँचा और सब बातें बताकर मामला कचहरी में पहुँचाने की प्रार्थना करने लगा।

नन्दू गाँव का पटेल तो था—लेकिन अनपढ़ होने के कारण पटवारी और धनराज के हाथ की कठपुतली बना हुआ था। पटवारी और धनराज का उस पर बड़ा प्रभाव था। एक से लिखा-पढ़ी का काम निकलवाता था—और दूसरे से कर्ज लेता था। बात-बात में दबने के लिए यह काफी था। उसने मनसुखा को यह कह कर टाला—"देखो मनसुखा, बात-बात में गाँव में झगड़ा करना अच्छा नहीं। जहाँ चार बरतन होंगे, बजेंगे ही—ऐसा तो होता ही रहता है। उस दिन तुम घीसू का मामला लेकर आए—आज जग्गू की तरफ से वकालत करने दौड़ पड़े। यह

मामला जैसा कि तुमने बताया है, बड़ा संगीन है। इसमें सबूत की भी जरूरत पड़ेगी–सो तुम दे नहीं सकोगे, यह मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। आज जो तुम्हारे सामने लम्बी लम्बी बात मार गया है—कल वही कचहरी में यह सब कहने के लिए तैयार नहीं होगा। तुम झूठे पड़ोगे, नाहक में पटवारी और धनराज से दुश्मनी हो जायगी। उनके यहाँ की मजदूरी के जो चार पैसे तुम्हें बरबत बे-बरबत मिल जाते हैं–वे भी बंद हो जाएँगे। काम नहीं मिलेगा, भूखों मरोगे। तुम्हारा मामला थोथा है—मैं इसमें हाथ नहीं डालूँगा। वैसे भी तुम जानते ही हो—पटवारी और धनराज से मेरा कितना घरोबा है। मैं भला इन लोगों से कैसे बिगाड़ सकता हूँ, तुम ही बताओ?' पटेल की इन बातों से, मनसुखा को बहुत बड़ी झुँझलाहट हुई। वह बिना कुछ कहे-सुने जग्गू के घर पहुँचा। लेकिन जग्गू ने दीनू का हवाला देकर जब बताया कि किस प्रकार पटवारी और धनराज उसको जमीन के पीछे हाथ धोकर पड़े हैं, तो वह अपने आपे में न रह सका। उसकी आखों से आग की चिनगारियां निकलने लगीं। जग्गू ने आज प्रथम बार उसका यह उग्र रूप देखा था। वह बहुत ही डर गया। उसने मन में कहा—मनसुखा को यह खबर इस रूप में नहीं देनी चाहिए थी–बड़ी गलती हो गई।

कोने में दीवार से लगी हुई एक मोटी और भारी लाठी पड़ी हुई थी। नीचे से डेढ बालिश्त ऊपर तक उसमें लोहे की नुकीली कीलें लगी थीं। मनसुखा उसे उठाकर धमाके से जमीन

पर गिराता हुआ बोला —"बहुत हो चुका। इससे अधिक अन्याय सहने की ताकत मुझ मे अब नहीं रही। जग्गू, आज मैं इन दुष्टों का सर तोड कर ही रहूँगा। या तो इस गॉव में यह अत्याचारी ही रह लें या मै। गॉव-का-गाव उजाड दिया है तब भी चैन नहीं। इन षडयन्त्रकारियों को छोड देना महापाप होगा।" इतना कह कर वह झपटे-से घर से बाहर होने लगा। जग्गू बडी मुश्किल मे फँस गया। क्या करे और क्या न करे। वह अपनी पूरी ताकत लगाकर मनसुखा की कमर से चिपट गया, बोला—"बचपना मत करो भाई, यह बुरा होगा—सरकारी आदमी को हाथ लगाना जुर्म है।" अपनी कमर को छुडाने का प्रयत्न करता हुआ मनसुखा बोला—"सरकारी आदमी अन्याय करता रहे—और हम उसे सहते रहें—यह खूब उल्टी बात पढाते हो जग्गू। भोले-भाले किसान की हरी-भरी दुनिया उजाडने के लिए अब मैं इन्हें नहीं छोडूँगा। तुम छोड दो मुझे।" मनसुखा ने जिस ताकत से जग्गू का हाथ पकडा—वह उसे सहन नहीं कर सका। एक झटका लगा और वह दीवार से लग कर खडा हो गया। मनसुखा तब तक निकल गया था। अनर्थ की आशका से जग्गू ने अपना माथा पकड लिया। फिर उसे एकाएक कुछ सूझ पडा। वह भाग कर कृष्णा के पास पहुँचा—बोला—"माँ, माँ, गजब हो गया!"

कृष्णा एक कुर्ता सी रही थी। जग्गू को इस प्रकार घबरा कर आते और बोलते देख शकित हो उठी, बोली—"क्या बात है बेटा? इतने घबराये हुए क्यों हो? बोलो।"

जग्गू बोला—"गजब हो गया माँ। बताओ अब क्या करूँ। मैंने गलती करके मनसुखा को अपनी जमीन के बारे में बता दिया कि पटवारी और धनराज उसे नीलाम करने पर तुले हुए हैं—तो वह लाठी लेकर मुझे धक्का दे एक ओर ढकेल—उन्हें जान से मारने गया है।"

"अरेरे, मुझे तो सचमुच सर्वनाश होता दीख रहा है। यह तो बुरा हुआ। तुमने मुझे पहले ही क्यों न बताया? चलो तो जरा, मामला हाथ में हो तो—देखें।' इतना कह कर कृष्णा जग्गू को साथ लिए—धनराज के घर की ओर चल पड़ी।

गुस्से में भरा मनसुखा जब धनराज के यहाँ पहुँचा तो देखा कि पुन्नू पटवारी की घोड़ी को लेकर तालाब में पानी पिलाने ले जा रहा था। उसने पूछा—'पटवारी और तेरे सेठ कहा है पुन्नू?"

पुन्नू उछल कर पटवारी की घोड़ी पर बैठ गया। फिर एड लगा कर उसे चलने का संकेत करके बोला—"तालाब में नहाने गए हैं, उधर से शिवजी के दर्शन करके आवेंगे। दोपहर के बाद आना। आज जग्गू की जमीन नीलाम होगी। रुपये हों तो तुम ही ले लेना—घर की जमीन हो जाएगी। मेरे पास तो रुपये नहीं है—नहीं तो मैं तो जरूर ही खरीद लेता।" इतना कह कर उसने जहाँ मनसुखा खड़ा था वहाँ दृष्टि डाली—तो देखा कि मनसुखा कभी का वहाँ से गायब था। वह घोड़ी को चाबुक मार कर चलाने लगा।

लेकिन पुन्नू ने मनसुखा को यह खबर गलत दी थी। वास्तव में पटवारी और धनराज ईख तोड़ने गए थे। ईख के खेतों की ओर से आपस में हँसते-बोलते और मसखरी करते तथा गन्ना चूसते हुए—पुन्नू की बताई हुई दिशा से एक दम उल्टे होकर आ रहे थे। सहसा दोनों कृष्णा और जग्गू को देखकर रुक गए। पटवारी ने जग्गू को चश्मों के बीच से सिर से पैर तक घूर कर देखा। फिर बोले—"मालूम होता है रास्ते पर आ गए हो जग्गू। अरे मैं तो पहले ही कह रहा था—तुम आखिर मे जाकर राजी होओगे। क्यों कृष्णा माँ, मैंने कभी झूठ कहा है आज तक ?"

कृष्णा चुप रही।

जग्गू बोला—"यह तो समझ की बात है पटवारी साहब। जहाँ आप जैसे साधु आदमी होंगे, वहा बेरास्ता कोई कैसे जा सकता है ?"

पटवारी जरा चौंके। फिर बोले "हा भई, बूढा आदमी हूँ। तुम बच्चे लोग मेरी इज्जत नहीं करोगे तो और कौन करेगा ? तो फिर बात तै रही। जब तुम ही आगे रह कर आये हो तो पचास रुपये और ज्यादे ले लो—क्यों सेठ जी। क्या कहते हैं आप ?"

सेठ धनराज मूछों पर ताव देकर बोले—"जब आप लोगों की भलाई पर ही तुले हुए हैं—तो मैं तो ऐसे धर्म के काम में बीच में नहीं बोलूँगा। सिर्फ जग्गू से इतना कहूँगा कि इस मौके को वह हाथ से नहीं जाने दे, वर्ना जिन्दगी भर पछताएगा।"

जग्गू खून का घूँट पीकर रह गया। फिर उसे खयाल आया कि फालतू बातें बढ रहीं है—और कहीं ऐसे मौके पर मनसुखा आ गया और इन बेचारों को भागने का समय भी नहीं मिल सकेगा तो वह जी कड़ा करके बोला—"सेठ जी। किधर से आ रहे है आप ?"

धनराज की भौंहें तन गई। अधचूसी ईख मुँह मे ही रह गई। बडा विचित्र प्रश्न था—कभी उनके घरवालों को भी ऐसा पूछने का साहस नहीं हुआ। इतनी हिमाकत। धनराज ततैया बन गया मारे क्रोध के। सरासर बेअदबी। फसल अच्छी होने का यह मतलब नहीं कि लोगों को खरीदकर मार डाले। वह कृष्णा की ओर देख कर बोला—"सुन रही हो कृष्णा माँ, घोर कलजुग छाया हुआ है घोर। गाँव के बडे बूढे तक मेरे सामने जबान नहीं खोलते—इतना आदर करते हैं। आज तक मेरे घरवालों तक ने ऐसी बात पूछने की हिम्मत नहीं की। इसका दिमाग अब इतना चढ गया है कि यह मुझसे पूछता है—मैं किधर से आ रहा हूँ ? अरे ओ जग्गू के बच्चे, मै जहन्नुम से आ रहा हूँ। इससे तुझे मतलब। तेरे बाप का कुछ देना तो है नहीं मुझे। उल्टा तू ही मेरा देनदार है। खबरदार जो ऐसा कभी फिर पूछा मुझसे। रामू की माँ ! इसको समझा देना। यह मेरे मुँह न लगा करे। हूँ, कल का छोकरा। चला है मुझसे लेखा लेने। छोटे मुँह बडी बात।"

कृष्णा ने देखा कि बात उल्टी पड़ रही है। जग्गू मन-

सुखा को समझाने आया था और धनराज उसे गुस्सा दिला रहा है—लड़का कहीं कुछ कह न उठे। उसने तुरन्त बीच में ही बात काट कर कहा—"भाई जी आप बुरा न मानें। आपको जान कर होगा तो अचरज ही परन्तु, मैं भी आपसे यही पूछने आई हूँ। बात यह है कि बाहर गांव का एक साँड पागल हो गया है। अन्धों की तरह दौड़ता है। आदमी देखता है न जानवर। सभी के पेट में सींग घुसा देता है। इसीलिए आपको होशियार करने आए हैं। जग्गू भी इसी लिये आया है—इसका पूछना आपका मान घटाना नहीं था। लड़का है, बोलते नहीं आया।"

पागल साँड का कभी भी जब धनराज ने नाम सुना—सात सात दिन तक घर से बाहर नहीं निकला। बहुत ही डरता था। कृष्णा के मुँह से जब उसने यही बात फिर सुनी तो उसके होश उड़ गए। दोनों हाथों से अपने पेट को दबा कर दरवाजे के भीतर घुस गया। फिर घबराई आवाज में बोला—'अरे बाप रे। अरे बाप रे। पागल साँड गाँव में घुस आया। अरे ओ पुनू। छुन्नू को बुला। राधू को बुला। अरे बाप रे साँड पागल हो गया।'

पटवारी के सामने यह सब एक तमाशा था। अपने हाथ पीठ पीछे बाँध कर इधर-उधर डोलने लगे। फिर आँगन में बिछी खाट पर बैठ गए। लकड़ी सामने रख ली। धनराज को काँपते देख कर बोले—"घबराने की क्या बात है धनराजजी। लकड़ी लेकर चलना-फिरना शुरू कर दीजिए। मार के आगे भूत भागता है। फिर साँड तो जानवर है। अच्छा तो आप अन्दर ही बैठें

मै थोडी लिखा-पढी कर लूँ । अरे हाँ, जग्गू जरा नन्दराम पटल को तो बुला ला ।"

जग्गू बोला—"पटवारी जी, आप बूढे आदमी हैं, दौडा आपसे भी नहीं जायगा, अपने कागज-पत्तर मत फैलाइये ।"

'भई, लिखा पढी तो इसी वक्त करनी पडेगी, तुम्हारे लिए फिर रुपयों का भी तो इन्तजाम करना पडेगा न । एक साथ साढे तीन सौ रुपये, गनागन । क्यों । कभी देखे हैं इतने रुपये ? पटवारी बोले ।

जग्गू ने ठीक अर्थ लगाया । पटवारी उसकी जमीन—विकाई के बारे मे लिखा-पढी की कह रहे थे । वह बोला—"पटवारी साहेब, क्या दीनू ने आपसे नहीं कहा कि मै जमीन बेचना नहीं चाहता ।

"तब तो फिर आज ही नीलाम करनी पडेगी जमीन । दो मे से एक काम होगा ।" चश्मों के बीचों-बीच से जग्गू को घूर कर पटवारी बोले ।

जमीन की नीलामी का नाम सुन कर जग्गू की आँखों मे खून उतर आया । वह अपने क्रोध को अन्त नहीं कर सका । लेकिन कृष्णा के सामने वह कुछ बोलना भी नहीं चाहता था । उसने कहा—"माँ । सब ठीक हो गया । अब जाओ, मैं बैठ कर जरा पटवारीजी से बातें करूँगा । अब डर नहीं है । साँड आएगा तो मैं रोक लूँगा ।"

कृष्णा बोली—"अच्छा, तो फिर मैं जाऊँ । जरा ध्यान रखना

होशियारी से रहना।" इतना कह कर वह चलने लगी। ि
रुक कर बोली—"मेरे साथ ही चलता तो अच्छा था बेटा
इसका मतलब था कि कहीं तू भी झगडा करने के लिये तो न
रुक गया। जग्गू ने कहा—"आप जल्दी-जल्दी घर चली ज
तो अच्छा है। साँड तो इधर गया है। डरने की कोई बात नहीं
मतलब था कि मैं झगडा नहीं करूँगा। जग्गू ने कृष्णा से भ
बोला। उसके चले जाने के पश्चात पटवारी के पास सरक क
जग्गू बोला—"पटवारीजी, अब इस बुढापे मे और कितना पा
कमाओगे ? क्या अब भी पेट नहीं भरा ? क्यों गरीब किसान
के पीछे हाथ धोकर पडे हो। क्यों अपने स्वारथ के लिए दूसर
की दुनिया को उजाडते हो ?'

पटवारी को भी क्रोध आ गया। लेकिन उसे जब्त करके बोले-
"देख जग्गू, मै तुझे अब तक बचाता आया हूँ। अब भी कहता
हूँ मान जा। जमीन बेच दे। मै तुझे पाँच सौ रुपए दूँगा। अब
तो ठीक।"

जग्गू रोष मे भर कर बोला—"एक हजार रुपए दे दो पटवारी
तो भी मै अपनी माँ को नहीं बेचूँगा। बार बार ऐसी बात कह
कर आप मेरी आत्मा को दुःख न दें।'

"आत्मा दुखे तो मै क्या करूँ ? सरकारी हुक्म तो मुझे
बजाना ही पडेगा। यह देख, यह हुकुम हुआ है कि बकाया लगान
जग्गू की जमीन नीलाम करके वसूल किया जाए।" इतना कहकर
झूठ-मूठ का एक कागज पटवारी ने बस्ते से निकाल कर दिखा

दिया। जग्गू पढा लिखा तो था नहीं। विश्वास कर लिया। लेकिन, इस विश्वास ने उसे क्रोध की वडी सीमा से भी पार कर दिया। उसे कुछ भी न सूझ पड रहा था कि वह क्या कहे ?

उसे गुमसुम देख कर पटवारी ने मौका ढूँढ लिया। बोले—"लेकिन–मेरी बात मान ले तो दोनों हाथों मे लड्डू हैं। रुपए मिलते हैं एक मुश्त। बकाया लगान चुकाना नहीं पडता—वह मैं दे दूँगा। साथ ही-साथ नौकरी भी। ले, मैं पर्चा लिख देता हूँ कि इस जमीन को काश्त करने के लिए मैं हर हालत में तुझे ही नौकर रखूँगा। बोल, बँधी नौकरी मिल गई। बाल–बच्चों के भरण पोषण का सवाल भी नहीं रहा।'

जग्गू के साथ ज्यादती हो रही थी। गुस्से को वह बार बार दबा रहा था। और पटवारी चोट पर चोट किये जा रहे थे। आया था वह उन्हें बचाने के लिये, लेकिन अब वह स्वयं अपने वश मे भी न रह सका—वह पटवारी की खाट के पास लपक कर पहुँचा, फिर बोला—' बस, एक बात पूछता हूँ पटवारीजी, अब यह'नीच-कर्म छोडते हो या नहीं ?"

पटवारी यों ही डर जाने वाले जीवों मे से नहीं थे। जीवन के इन पचास वर्षों मे उन्होंने कई उतार चढाव देखे थे। कई बार पिटे। हारे। हराए। और फिर भी जी रहे थे। मन मे दस गाँवों में खेती जमाने की साध थी। वे जरा भी विचलित नहीं हुये। बोले—"जग्गू दूर रह कर बात करो। तुम गुस्सा कर रहे हो। देखते नहीं हो कि मैं सरकारी आदमी हूँ। तुम्हें मेरा अदब करना चाहिए।"

जग्गू ने उसी प्रकार कहा—"अदन आदमी की की जाती है, तुम अब भी अपने को आदमी समझते हो ?"

अब पटवारी को भी रोष आया। बोले—"हैवान तो तू हुआ जा रहा है, जो मेरी देह पर हमला कर रहा है।

"अभी हमला किया नहीं है, तुम मजबूर कर रहे हो तो अब करूगा।" इतना कह कर जग्गू ने पटवारी की गर्दन पकडी।

पटवारी को हमले की आशका नहीं थी। वह बुरी तरह से चिल्ला उठे—"अरे नन्दराम, बचाओ। धनराज जी कहाँ हो ? हाय। मुझे मार डाला।" पागल सॉड के डर से धनराज अध-खुले दरवाजे के भीतर खडा-खडा कॉप रहा था। नौकर सब इधर उधर गये हुए थे, इसलिये डर के मारे उसका और भी बुरा हाल हो रहा था। जब उसने देखा कि जग्गू पटवारी की गर्दन दवा रहा है तो वह कँप-कॅपा कर हु हु हु हु के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं बोल सका। जग्गू ने जोर से चिल्ला कर कहा—"दरवाजा बन्द कर लो सेठ, पागल सॉड आ गया। अपनी जान बचाओ।" धनराज ने भडाक से किवाड वन्द कर लिए। इधर सचमुच ही सॉड आ गया था। मनसुखा आते ही बोला—"यह नहीं होने का जग्गू। तुम हट जाओ, यह पवित्र काम मुझे करने दो।"

जग्गू ने मनसुखा की उठी हुई लाठी पकड ली। बोला—"भैया, गॉव वालों को इस वला से बचाने का काम मुझे ही करने दो। इस नीच से अपने पाप-कर्मों का लेखा आज अच्छी-

तरह से ले लेने दो भया। तुम दूर हट जाओ। यह नारकीय आदमी मेरी तकदीर फोड़ने पर तुला हुआ है। मुझे इसका सिर फोड़ लेने दो। जरा इसे जान लेने दो भैया कि बेकसों का खून चूसने का क्या नतीजा मिलता है।"

जग्गू और मनसुखा की इस लड़ाई में पटवारी को मौका मिल गया। उन्होंने अपने वस्ते से छुरी निकाल कर जग्गू पर वार किया। मनसुखा की लाठी छोड़ कर जग्गू ने वार बचाया। पटवारी बोला—"खबरदार। जो कोई आगे बढ़ा, एक साथ दोनों को भोंक दूंगा। मैं तुम दोनों की बदमाशी को बहुत पहले ताड़ चुका हूँ। लेकिन अचरज हुआ यह जान कर कि बुढ़िया भी इस षड्यन्त्र में शामिल है। अब वह भी जेल की हवा खायगी। मैं एक एक को ..." पटवारी का यह वाक्य पूरा भी न होने पाया कि मनसुखा की लाठी पटवारी के छुरी वाले हाथ पर पड़ी। वह बुरी तरह से जमीन पर गिर पड़े और कराहने लगे। जग्गू ने मनसुखा से कहा—"मनु भाई, मैंने कभी तुमसे कोई बात नहीं कही। आज मैं तुमसे एक भीख माँगता हूँ।"

मनसुखा बोला—"मैंने तुम्हारी बात कभी टाली है जगन्नाथ!"

"तो तुम इसी वखत इस देश को छोड़ दो।" जग्गू बोला।

मनसुखा ने जग्गू का मतलब समझ लिया। और उसकी आँखों से आसू गिरने लगे।

× × ×

'जन सेवा मन्त्र', राष्ट्रीय विचारों के प्रगतिशील व्यक्तियों की

एक सस्था थी। मंगलदास इसके अगुआ थे। ये सस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फारसी, अँग्रेजी, फ्रेन्च जर्मन-आदि भाषाओं के प्रकाण्ड पडित होकर राजनीति और अर्थ-शास्त्र के विशेषज्ञ थे। अपनी जिन्दगी का बहुत कुछ भाग परिव्राजक के रूप मे बिता चुके थे। उस रूप मे कई वर्षों तक ये विदेशों मे घूमते रहे। ससार के प्रत्येक राष्ट्र की उन्नति और अवनति के मूल कारणों का उन्होंने गहरा अध्ययन किया था। उनका मत था कि ससार का कोई भी राष्ट्र अपने यहाँ के किसानों और श्रमिकों को पीछे छोडकर आगे नहीं बढ सकता। किसानों और श्रमिकों की जागृति ही राष्ट्र को उन्नत बना सकती है। भारत जैसे पराधीन देश के किसानों और श्रमिकों मे जागृति उत्पन्न करना अत्यावश्यक है—और उस हालत मे तो यह और भी परमावश्यक हो जाता है जब कि देश गुलामी की जजीरों को तोड डालने के लिए छटपटा रहा हो। इनमें जागृति उत्पन्न करने के लिए शिक्षा प्रथम सीढी है। ये लोग शिक्षित होने पर ही अपने भले बुरे को समझ सकते हैं। इसी उद्देश्य को लेकर 'जन-सेवा-सघ' की स्थापना हुई थी। इस सस्था मे दो विभाग थे। एक 'किसान सघ,' दूसरा 'श्रमिक-सघ' इसके कार्य क्रम मे—शिक्षा-प्रसार, एकता स्थापन, नारी-जागृति, ग्राम-सुधार, स्वदेशी वस्तुओं का प्रसार, ग्रामों मे पुस्तकालयों की स्थापना, रात्रि-पाठशालाएँ श्रमिकों और किसानों का स्वास्थ्य-सुधार, दुखियों और पीडितों की सेवा, न्याय की पुकार और अन्याय से अन्त तक लडते रहने—जैसे अनेकों काम थे।

संघ का केन्द्रीय कार्यालय बम्बई में था। लेकिन इसके कार्य्य-कर्ता न केवल भारत के गावों और शहरों में ही रहकर कार्य्य कर रहे थे वरन् बर्मा, श्याम, चीन, मलाया, हिन्द-चीन और लंका आदि देशों में भी फैले हुए थे। इस संस्था का एक विशेष नियम था—जिसके अनुसार इसके 'कार्य्य-कर्ताओं के लिये अपरिचितों से सहायता लेना वर्जित था। इसमें वैज्ञानिक, डाक्टर, वैद्य, प्रोफेसर, मास्टर, कप्तान, सम्पादक, पत्रकार, कान्स्टेबिल, किसान, मजदूर और रंगिक से लेकर सन्यासी तक काम करते थे। काम करने का सबका ढंग अपना अपना था। अपने-अपने तरीके से 'जन-सेवा-संघ' का काम करने की प्रत्येक को पूरी पूरी छुट्टी थी। हर एक सदस्य अपने-अपने काम में सब से आगे बढ जाने में तल्लीन होता था। मनसुखा इसी संस्था का एक किसान-सदस्य था। और मंगलदास बम्बई में रहकर देश सेवा में लगे हुए थे तथा जीविका के लिए एक वाचनालय खोल रखा था।

× × ×

पचपन और साठ वर्ष के बीच की उम्र के काशी काका जितने सीधे और सरल थे—हृदय से जीव मात्र के प्रति उतने ही तरल थे। शरीर से जितने काले—हृदय से उतने स्वच्छ। दिखने में जितने बूढ़े—वाणी में उतने ही बच्चे। कद उनका जितना नाटा-मन उनका उतना मोटा। डाढी और मूंछों के बाल उनके जिस कदर सुफेद—विकारों से वे उतने स-फेद। दाँत

उनके जितने दृढ और चमत्कार—हँसी उनकी उतनी ही मोहक, भोली और मजेदार। काम करने में जितनी दृढता—दुःख सहने की उतनी ही क्षमता। अपने प्रति जितने बेखबर—दूसरों के प्रति उतने ही बाखबर। बातों में जितने सीधे—कार्य शैली में उतने ही पेचीदे। इसके बाद बहुत मैले, अत्यन्त दीन और कभी-कभी रोटी से भी मोहताज। और तब पेट के लिए बड़े अधीर। पिछली जिन्दगी एक दम अज्ञात।

किसानों के दुःखों से दुःखी, और उन्हें दूर करने में दिन रात लगनशील। वे भी मंगलदास के बड़े अच्छे सहयोगी थे।

रतनपुर गाँव में आकर उसी के हो गए। बच्चे-बच्चे की जबान पर काशी काका! मर्द और औरत की जबान पर काशी काका। सकट के समय सबसे आगे और खुशी के समय गायब—काशी काका।

[३] जेठ की दोपहरी आग बरसा रही थी। काका पेट की ज्वाला बुझाने के लिए एक खेत में मिट्टी के ढेले तोड़ने की मजदूरी करने आए थे। ढेले तोड़ने से खेत का कुछ भाग समतल हो गया था। बाकी असमान और बुरा लग रहा था। एक मोटे ढेले पर बैठे-बैठे वे तम्बाकू पी रहे थे। सहसा धुँएँ को ऊपर की ओर उडा एक गहरी निश्वास छोड गए। आज उन्हें जिन्दगी कुछ अजीब सी लग रही थी उदासीन। नीरस। बेढगी। सशययुक्त। फिर असमान ढेले वाले खेत की ओर देख उनमें दार्शनिकता जाग गई—जिन्दगी। जिन्दगी जो बीत गई है सो खेत

के इस समतल भाग की तरह स्पष्ट प्रतीत हो रही है। और जो बची है, सो इस असमान खेत की तरह पर्याप्त ऊबड़-खाबड़, बेढंगी, दुरूह और न जाने कैसी है। इस शरीर की शक्ति क्षीण हो चली है। गुलाम देश के व्यक्तियों मे शक्ति कहाँ और क्या उनका जीवन ? असमान भूमि की तरह कितनी ही असमानतायें आ सकती हैं इस बची हुई जिन्दगी मे। और मैं— शायद, उन्हें पार पा सकूँ। शायद नहीं। लेकिन यह तो सब अन्य्य के वस मे है। इसकी चिन्ता करना ही बेकार है। फिर आकाश में उड़ते हुए धुँएँ की ओर देख कर सोचने लगे— जब एक दिन इसी प्रकार निलीन हो जाना है तो यह भारी हल-चल क्यो ? क्यों आशा और क्या निराशा। क्यों अच्छा और बुरा। क्यों सुख और दुख। क्यों आजादी और गुलामी के झगड़े। क्यों तरा और मेरा। और जब यह सब कुछ नहीं, तो क्यों व्यर्थ काया को कष्पाया जाय ? और तब। तब पेट का क्या होगा ? ढेले नहीं टूटेंगे। खेतवाला मजदूरी नहीं देगा। और जिन्दगी की यह गाडी गढहे म धँस जायगी। बेमतलब। बिना किसी के काम आए। फिर, जरा सोचने की बात है। धुँआँ आकाश मे निलीन अवश्य होता है, लेकिन इसके पहले इसे आग से खेलना पडता है। लो, उत्तर मिल गया। जिन्दगी एक चिलम मे भरी हुई तम्बाकू है, जिसे विलीन होने के लिए आग मे जलना पडता है। विलीन होने के लिए जलना। जलना— कर्तव्य। कर्तव्य का अर्थ हुआ निलीन होने की क्रिया। मरने के

लिए जन्म लेने के समान। वास्तव मे प्रकट होना ही विलीन होना है। धुँआ अपने को नीले रग मे प्रकट करता है; आकाश के नीले-नीले रग मे विलीन होने के लिए। लेकिन इसके लिए उसे आग से खेलना ही पडता है। यह जो खेत मे मोटे-मोटे ढेले दिख रहे हैं न। इन्हे भूमि मे विलीन होना है—और इसके लिए इन्हें कूट खाना पडेगी। और मैं ढेले नहीं तोड़ूँगा तो शाम को मुझे मजदूरी नहीं मिलेगी। और पेट खाली ही रह जायगा। पेट के लिए काम तो करना ही पडेगा। अरे! जीवन की सच्ची दार्शनिकता तो इसी मे छिपी हुई है।

काका के एकदम पास जमीन मे धडाम से लाठी-प्रहार हुआ। वे चौंक उठे। मुड़कर देखा तो हसी और प्रसन्नता की सीमा नहीं रही। गद्‌गद्‌-वाणी मे बोले—"ओ हो। मनसुख बेटा। बडे दिनों मे आए। तुम्हारी लाठी की आवाज बता रही है कि कोई नई बात हुई है। क्या मै ठीक हूँ ?"

× × ×

सूरज को डूबे काफी देर हो गई थी। चारों ओर अँधेरा घिर आया था। आस-पास की झाडियों मे शृगाल भौंक रहे थे। किसान खेतों में काम करके अपने-अपने घर पहुँच चुके थे। नन्दू की बहू सरयू को को आज खेत मे काम करते करते देर हो गई। नौकर पहले ही चला गया था। इसलिए वह अकेली ही रह गई थी। जल्द जल्दी से झपाटा भरती हुई लम्बी-लम्बी घास के बीच से चीर कर जानेवाली पगडण्डी से घर की ओर भागी जा रही थी।

अचानक उसे रास्ते मे किसी के कराहने की आवाज सुनाई दी। वह डरकर भागने लगी। किन्तु थोडी ही दूर दौडने पर उसके पैरों मे कोई कपडा सा उलझ पडा और वह गिर पडी। गिरते ही उसके मुँह से एक जोर की चीख निकल पडी। उसे तुरन्त ही कुछ दूर से सुनाई दिया—"मैं आ पहुँचा हूँ। घबराने की कोई जरूरत नहीं। डरने की कोई बात नहीं।" सरयू ने आवाज पहचान ली। जग्गू था। उसने कहा—"जग्गू भाई, जल्दी आओ, मुझे बडा डर लग रहा है। कोई बेहोश पडा है। मेरे पैरों मे आ गया, मैं गिर पडी हूँ।"

पटवारी के मामले मे जग्गू को छः महीने की कैद हो गई थी। उसे भुगत कर वह आ रहा था। दौडकर सरयू के पास पहुँचा। बोला—"सरयू मां। क्या बात है—कौन है?"

"कोई पडा-पडा कराह रहा है अन्धेरे मे, पहचाना नहीं जाता, पता नहीं, कौन है? हे भगवान। मैं तो डर के मारे मर गई। तुम्हारे पास आग-काडी हो भैया तो जला कर देखो कौन पैरों मे आ गया है?"

जग्गू ने काडी जलाकर देखा तो वह एकदम सन्न रह गया। बोला—"अरे। यह तो कृष्णा माँ हैं। च च इनके मुँह से तो खून बह रहा है। हाय, हाय। क्या हाल हो गया है इनका।"

सरयू भी दंग रह गई। बोली "हाय माँ। तुमने यह क्या किया? जग्गू भाई इन्हें उठा लो। घर ले चलें। हाय, बेचारा रामू अनाथ हो जायगा।"

जग्गू ने कृष्णा को पीठ पर लाद लिया। सरयू और वह दोनों मिलकर उसे घर ले आए। रामू स्कूल से आकर भूखा बैठा अपनी माँ की राह देख रहा था। किन्तु अपनी माँ को घर में इस विचित्र तरीके से लाये जाते देखकर वह चीख पड़ा। दौड़कर अपनी मा के गालों को अपने दोनों हाथों से सहलाकर बोला—"माँ, माँ! तुम्हें क्या हो गया माँ। मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि अब मेरा पढ़ना छुड़वा दो। मे नहीं पढ़ूँगा। तुम्हारी ऐसी दशा मुझसे नहीं देखी जाती मां। कल से मैं तुम्हें कहीं भी काम पर नहीं जाने दूँगा। तुम्हारी यह दशा कैसे हो गई है?" और वह फूट-फूटकर रोने लगा।

सरयू ने उसे अपनी गोद मे भर कर कहा—"रोओ नहीं बेटा। अभी ठीक हुई जाती हैं। तुम इतनी चिन्ता मत करो। जग्गू भाई। लो, यह पानी लो। कृष्णा माँ के मुँह में डालो।" जग्गू ने पानी से पहले कृष्णा के मुँह पर लगा खून धो डाला। सरयू ने तब तक कृष्णा के मुँह पर छाए बालों को ठीक किया। उसके कपड़ों को ठीक किया। फिर जग्गू के पानी पिलाने को देखने लगी। जग्गू ने धीरे-धीरे कर के थोड़ा सा पानी पिलाया। पानी के पेट मे पहुँचते ही कृष्णा के शरीर मे हलचल हुई। खुला हुआ मुह उसने बन्द किया। थोड़ी देर वैसे ही पड़ी रही। फिर उसके मुँह से अत्यन्त धीमे स्वर से निकला "पानी।" जग्गू ने फिर पानी पिलाया। पानी पीकर थोड़ी देर फिर पड़ी रही। इसके बाद उसने आँखें खोलने का प्रयत्न किया। जब आँखों पर से भार

हरा तो अधखुली आँखें कर के उसने कहा—"रमेश बेटा। तुमने खाना खा लिया।' रामू ज्योंही कुछ बोलने को हुआ, सरयू ने उसके मुँह पर हाथ दे दिया। फिर कृष्णा से बोली—"हाँ, रमेश ने खाना खा लिया है। तुम अपने मन को धीरज दो। इसको आज फिर इनाम मिला है। लाना तो बेटा अपनी नई किताब, दिखाओ तो अपनी मा को।"

रामू समझ गया। उसने भी झूठ-मूठ कह दिया—"हाँ माँ आज इन्सपेक्टर साहेब आए थे। उन्होंने मुझे यह किताब इनाम दी है। देखो तो कितनी अच्छी है।"

कृष्णा ने वैसे ही पड़े-पडे कहा—"अच्छी है, बहुत अच्छी है। सुनूँ, क्या कहते थे इन्सपेक्टर साहब ? रमेश बहुत अच्छा लडका है। खूब पढ़ता है, यही न।"

"बिल्कुल यही। तुमने यह सब कैसे सुना ?"

"ऐसा ही कहा होगा। सब ऐसा ही कहते हैं। मेरा रमेश पढ़ने मे बहुत तेज है। तुमने सु-ह किताब के पैसों के लिए कहा था—आज में जग्गू की बहू के साथ खेत मे काम करने गई थी। मेरी धोती के पल्ले मे चार आने बँधे हैं—अभी से लेकर अपने पास रख ले। सुबह जल्दी मे भूल जायगा। अरे सरयू बेटा, तुम इस वखत यहाँ कैसे ?" क्या कहूँ बेटा, यह शरीर तो अब बहुत ही थक गया है। रास्ता चलते-चलते बेहोश होकर गिर पडी। शायद तुम लोग उठा कर लाए हो ? बडी तकलीफ हुई होगी तुम्हें।"

"तुम आराम से लेटी रहो कृष्णा माँ, तुम्हारी तबीयत नहीं है। मैं जरा घर हो आऊँ ?" सरयू रामू को अपने साथ ले घर की ओर चली गई। जग्गू से कह गई कि जब तक वह लौटे तब तक वह वहीं बैठे। छ महीने की कैद से छूटा हुआ जग्गू अपने बच्चों और स्त्री को सब से पहले दौड कर देखने की अपेक्षा कृष्णा माँ की सेवा मे ही बैठा रहा।

रामू को खिला पिलाकर और थाल मे दूध और चपाती लिए सरयू आ पहुँची। उसने आते ही जग्गू से कहा—"जग्गू भैया, अब तुम घर जाओ। वह और बच्चे तुम्हें देख कर घी के दिए जलाएँगे। जाओ, जल्दी जाओ। उन्हें अब तुम्हारे आजाने का आनन्द उठाने दो यहा का तुम्हारा काम हो गया। अब मै काफो हूँ। हाँ, तुम्हारी बहू और बच्चों को लेकर मेरे घर आ जाना तुम्हारा खाना वहीं होगा। मै अपनी बहू को समझा आई हूँ।" जग्गू कृत कृत्य होता चला गया।

× × ×

कृष्णा को स्वस्थ छोडकर सरयू एक माह के लिए अपने मैके चली गई थी। वहां उसे आवश्यकता से अधिक समय लग गया। लौट कर उसने कृष्णा को देखा तो वह अवाक् रह गई।

कृष्णा के सारे शरीर पर सूजन हो आई थी। आँखों से कतई नहीं दीखता था। चिन्ता मे जैसे घुली जा रही थी। उसके न रहने के बाद रामू का क्या होगा—इस दुख के मा

आँखों से आँसू थमते ही न थे। उससे आश्वासन की दो बात जो कह देता उसी से रामू की रक्षा की भीख मांगती। सामने खडे हुए आदमी को वह बडी देर में पहचान पाती थी।

रामू अपनी बारह वर्ष की उम्र में मानों वृद्धा हो गया। सब छोड़-छाड कर वह अपनी माँ की सेवा में लग गया। दिन में खेतों में मजदूरी करने जाता और सुबह-शाम करता मा की सेवा—बचे समय में पढता। इस छोटी सी उम्र में न जाने क्या-क्या सोचता। माँ को धीरज देता। कमा कर जो पैसे लाता उससे अपना और मा का पेट पालता। मुँह की हँसी से हवा हो गई थी। छोटी-छोटी बातों का उत्तर भी बहुत सोच समझकर गम्भीर भाषा में देता। पडोसी उसकी इस गम्भीरता को न समझ सकने के कारण उससे झुँझलाते और कभी कभी नाराज भी हो उठते थे।

जिस समय सरयू कृष्णा से मिलने गई, रामू अपनी मा को तालाब से स्नान करवा कर उसका हाथ पकडे हुए घर ला रहा था। कृष्णा के कन्धे पर धुले हुए कपडे रखे हुए थे—जिनसे पानी चू रहा था। जो इस बात का द्योतक था कि वे ठीक प्रकार से निचोडे नहीं गए थे। रामू ने कृष्णा को चबूतरे पर बिठा दिया और आप कपडों को सूखने के लिए धूप में फैलाने लग गया।

सरयू ने झट कृष्णा का हाथ अपने हाथ में ले लिया। फिर बोली—"माँ, तुम्हें क्या हो गया मा? हाय, फिर तुम्हारी यह क्या दशा हो गई। बहुत ही भली-चगी छोडकर गई थी। मैं तो कहूँगी

"तुम आराम से लेटी रहो कृष्णा माँ, तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। मैं जरा घर हो आऊँ ?" सरयू रामू को अपने साथ लेकर घर की ओर चली गई। जग्गू से कह गई कि जब तक वह न लौटे तब तक वह वहीं बैठे। छ महीने की कैद से छूटा हुआ जग्गू अपने बच्चों और स्त्री को सब से पहले दौड़ कर देखने की अपेक्षा कृष्णा माँ की सेवा में ही बैठा रहा।

रामू को खिला पिलाकर और थाल में दूध और चपाती लिए सरयू आ पहुंची। उसने आते ही जग्गू से कहा—"जग्गू भैया, अब तुम घर जाओ। बहू और बच्चे तुम्हें देख कर घी के दिए जलाएँगे। जाओ, जल्दी जाओ। उन्हें अब तुम्हारे आजाने का आनन्द उठाने दो यहां का तुम्हारा काम हो गया। अब मैं काफी हूँ। हां, तुम्हारी बहू और बच्चों को लेकर मेरे ही घर आ जाना तुम्हारा खाना वहीं होगा। मैं अपनी बहू को समझा आई हूँ।" जग्गू कृत कृत्य होता चला गया।

× × ×

कृष्णा को स्वस्थ छोड़कर सरयू एक माह के लिए अपने मैके चली गई थी। वहाँ उसे आवश्यकता से अधिक समय लग गया। लौट कर उसने कृष्णा को देखा तो वह अवाक् रह गई।

कृष्णा के सारे शरीर पर सूजन हो आई थी। आँखों से कतई नहीं दीखता था। चिन्ता में जैसे घुली जा रही थी। उसके न रहने के बाद रामू का क्या होगा—इस दुःख के मारे उसकी

आँखों से आँसू थमते ही न थे। उससे आश्वासन की दो वात जो कह देता उसी से रामू की रक्षा की भीख मागती। सामने खड़े हुए आदमी को वह बड़ी देर मे पहचान पाती थी।

रामू अपनी बारह वर्ष की उम्र मे मानों वृद्ध हो गया। सब छोड़-छाड कर वह अपनी माँ की सेवा मे लग गया। दिन मे खेतों मे मजदूरी करने जाता और सुबह-शाम करता माँ की सेवा—बचे समय मे पढता। इस छोटी सी उम्र मे न जाने क्या-क्या सोचता। माँ को धीरज देता। कमा कर जो पैसे लाता उससे अपना और मा का पेट पालता। मुँह की हँसी से हवा हो गई थी। छोटी-छोटी बातों का उत्तर भी बहुत सोच समझकर गम्भीर भाषा मे देता। पडोसी उसकी इस गम्भीरता को न समझ सकने के कारण उससे झुँझलाते और कभी कभी नाराज भी हो उठते थे।

जिस समय सरयू कृष्णा से मिलने गई, रामू अपनी मा को तालाब से स्नान करवा कर उसका हाथ पकडे हुए घर ला रहा था। कृष्णा के कन्धे पर धुले हुए कपडे रखे हुए थे—जिनसे पानी चू रहा था। जो इस बात का द्योतक था कि वे ठीक प्रकार से निचोडे नहीं गए थे। रामू ने कृष्णा को चबूतरे पर बिठा दिया और आप कपडों को सूखने के लिए धूप मे फैलाने लग गया।

सरयू ने झट कृष्णा का हाथ अपने हाथ मे ले लिया। फिर बोली—"माँ, तुम्हें क्या हो गया माँ? हाय, फिर तुम्हारी यह क्या दशा हो गई। बहुत ही भली-चगी छोडकर गई थी। मैं तो

कि मेरे ही कारण तुम्हारी यह तकलीफ बढ़ गई है। मैं न जाती तो कितना अच्छा था। तुम्हारी सेवा करने वाला कोई न था, तुम्हारी देख भाल करने वाला कोई न था–इस लिए यह सब फिर हो गया। माँ, मुझसे अपराध हो गया। क्या तुम क्षमा कर दोगी ? मुझे क्षमा कर दोगी मा ?'

कृष्णा ने कहा—"बेटी। यदि भावनावश तुम यह बात कह रही हो तो मुझे कुछ भी नहीं कहना है और इसका मैं आदर करती हूँ। लेकिन, यदि तुम सचमुच यही बात महसूस करके दु ख मना रही हो तो घर जाओ। क्योंकि तुम्हारी ऐसी बातें सुन कर मुझे दु ख होता है। सरयू, कृष्णा माँ के बोझ को उठाने का यह मतलब नहीं कि तुम अपने घर बार को भूल जाओ। अपने पारिवारिक सम्बन्धों को तोड दो। अपने पति और बच्चों की ओर से उदासीन हो जाओ। खेती-बाडी के काम को छोडा दो और कृष्णा माँ के दु ख के पीछे अपने ऊपर एक अनचाह झगडा मोल ले लो। दया और सहानुभूति अच्छी चीज है। मनुष्य मे इनका होना आवश्यक है। ये सज्जन के गुण हैं। और तुममें इन गुणों का होना इस गाँव की शोभा है। लेकिन बेटी, इनकी अति बुरी होती है। सच तो यह है कि अधिक दया और अधिक सहानुभूति उस आदमी को बुरी लगती है जिसके ऊपर वह की जाती है– बशर्ते कि वह समझदार हो—दया और सहानुभूति का वास्तविक पात्र हो और उसके मूल्य को भली भांति समझता हो। दुर्भाग्यवश या सौभाग्यवश कहो बेटी,

तुम्हारी यह माँ इस बात को अच्छी तरह से जानती है—यह चाहती है कि तुम इस पर पूर्ण रूप से दया करो और सच्ची सहानुभूति प्रकट करो। इसीलिए तुम्हें, यह भावुक दया और भावुक सहानुभूति से रोकती है। तुममें भावनाएँ अत्यधिक है। और इनका इतना अधिक होना मुझे अच्छा नहीं लगता। कहीं बुरा तो नहीं मान रही हो बेटी। पता नहीं तुम मन मे न जाने क्या सोच रही होगी। मै भी क्या करूँ जवान लडखड़ाती है और न जाने क्या क्या बक देती है।

सरयू ने कहा "माँ, मैं तुम्हारी बातों को अच्छी तरह से समझ रही हूँ। मै देख रही हूँ कि मेरी माँ भी कभी-कभी मुझे इसी प्रकार समझाती है। तुममें और उसमें इतना ही अन्तर है कि तुम विद्वान हो और वह बेचारी अत्यधिक भोली। मै तुमसे क्षमा चाहती हूँ, मेरी बातों से यदि तुम्हारी आत्मा को ठेस पहुँची हो तो।"

"फिर तुमने वही बात कह डाली। क्षमा करना और क्षमा माँगना अच्छा नहीं है। दूसरे मायने मे इसे पाप कहना चाहिये। क्षमा माँगने वाला पापी होता है। क्षमा शब्द ही बुरा है। इस क्षमा की आड मे नित्य न मालूम कैसे-कैसे पाप होते रहते है। यदि कहूँ कि क्षमा करने वाला भी पापी है तो अतिशयोक्ति न होगी। क्योंकि वह पाप को छूट देता है। उसे दूसरी बार खुल कर खेलने का निमन्त्रण देता है। तुम्हारे और मेरे बीच बेटी और माँ का व्यवहार है। हमारे बीच अभी तक ऐसी कोई बात

नहीं हुई कि जिसमें क्षमा जैसे नीचे शब्द का प्रयोग हो। और इस शब्द को अपने आस पास सुनने के पहले बेटी, यह जिन्दगी ही खतम हो जाय तो अच्छा। एक बात और बताऊँ—क्षमा शब्द सम्मान के उन लोभियों का आविष्कार है जिनकी इस समाज में आज कमी नहीं है। पाप खुद करते हैं और उस पर क्षमा की चादर का परदा डाल कर अपराधी दूसरे को बनाते हैं। उससे क्षमा मँगवाते हैं, और आप क्षमा करते हैं। पाखण्डी लोग इस हथियार को खूब अपनाए रहते हैं। शिकार की तलाश ही उनकी जिन्दगी का ध्येय होता है। फिर समय आने पर पूरा लेखा लेकर बैठते हैं। और अपने आपको क्षमागार घोषित करते हैं। लेकिन वास्तव मे यह उनके काले कारनामों का लेखा होता है बेटी, जिसकी आड मे उन्होंने अनेकों पापों को खुद कमाया है और दूसरों को भी प्रोत्साहित किया है। इसलिए तुमसे मैं यह कहना चाहती हूँ बेटी, कि यदि कोई अपनी ओर से क्षमा पर भाषण करे और बात-बात मे क्षमा करे और माँगे तो उसे मनुष्य जाति का सब से बड़ा दुश्मन मानना चाहिए। क्षमा एक ऐसी बुरी चीज है जो आत्मा को काला करती है। उसे कुंठित करती है। क्योंकि क्षमा करने वाले को झूठा अभिमान हो आता है। और क्षमा माँगने वाले को अपनी आत्मा को नीच मानना पड़ता है। देखा न, इस क्षमा मे कितनी बड़ी भारी बुराई घुसी हुई है। क्षमा करने वाले का रुख होता है आसमान की ओर और क्षमा माँगने वाले का रुख होता है पाताल की ओर।

एक आकाश—और दूसरा पाताल। देखा, अपने आप कितना भारी अन्तर हो गया। अब तुम ही बताओ, क्षमा की सृष्टि मे समता कहाँ? अधिक-से अधिक पास आने के लिए क्षमा की जरूरत नहीं करना चाहिए। बल्कि इस बुरी चीज को निरन्तर दूर करने की चेष्टा ही करनी चाहिए। क्षमा सब के लिए सब अवस्था मे घातक है।"

'यह बात मेरी समझ मे आ गई। बहुत ऊँची बात है। और एक प्रकार से कहो कि सरकारी रूढियों के विरुद्ध यह एक क्रान्ति है। इसे सब लोग अभी समझ नहीं पाएँगे। मनोहर के पिता बडे-बडे हाकिमों मे दिन-रात उठते बैठते हैं। वे कहते हैं कि हाकिम लोग बात-बात मे क्षमा का आदान प्रदान करते है। अर्थ यह हुआ कि 'क्षमा' शब्द का प्रयोग बडे लोगों मे चरम सीमा तक पहुँच गया है। और मनोहर के पिता कहते है कि क्षमा के इस शब्द से अच्छे-अच्छे लोग पानी-पानी हो जाते हैं। जब लोक-व्यवहार मे यह शब्द इतना अधिक प्रचलित है तो इसे निकाल फेंकने मे बडी दिक्कत होगी। क्यों माँ?"

"निकाल फेंकने मे बडी दिक्कत होगी—सही बात है। लेकिन तुम यह भी तो देखो कि इसे न निकाल फेंकने मे क्या हानि है? बहु प्रचलित वस्तु एक सीमा पर जाकर अर्थहीन हो जाती है। बात-बात मे किसी एक विशेष शब्द का प्रयोग अर्थ-हीन हो जाता है। निकाल फेंकने की जरूरत ही क्यों होना चाहिए। वह तो अपने आप निकल जायगी। और, उसी वक्त निकल भी गई जब

उसका अर्थ मिट गया। बार-बार माफ कीजियेगा कहने वाले माफ करवाने के अर्थ को भूल जाते हैं। अत उस माफ करने अथवा न करने का कोई अर्थ ही नहीं। मैं तो बेटी, वास्तविकता को लेकर चली थी। पहिले जो मैंने कहा है—वह क्षमा के वास्तविक अर्थ के लिए है। क्षमा करने वाला क्षमा का वास्तविक अर्थ जानता है तो वह खतरनाक है। और क्षमा माँगने वाला वास्तव मे क्षमा का अर्थ जानता है तो वह भी खतरनाक है। क्षमा शब्द के प्रयोग की बाहुल्यता ही अपनी वास्तविकता को नष्ट कर देती है। ऐसी सूरत मे-जब कि उसका प्रयोग बराबर हो रहा है, वह अपने आप ही नष्ट हो गया है। उसे निकाल फेंकने की दिक्कत ही नहीं रही। इसका वास्तविक प्रयोग विदेशियों ने जाना। और आज तुम देख ही रही हो कि हमारा देश गुलाम है। मनसुखा कहता था कि उनके 'सघ' मे एक डाक्टर हैं जो कई बरसों तक विलायत मे रहे हैं—यह देश सात समुन्दर पार है। उन्होंने उसके सघ के लोगों को बताया है कि गोरी जाति क्षमा करने और क्षमा करवाने के अर्थ को भली-भाँति जानती है। और इसी का फल है कि आज वहाँ पापाचार इतना बढ गया है कि जिसका कोई हिसाब ही नहीं। सारा-का-सारा ससार पापमय हो गया है। बेटी, ये लोग मनुष्य जाति के सब से बडे कट्टर शत्रु हैं ''चल री, छोड इन बातों को, रामू को मैंने सब बता दिया है। वह इन सब बातों को खूब समझ गया है और अब तो नए-नए ढग से ऐसी बातें करता है कि मुझे भी अचरज होता है। मनसुखा के साथ रहा है ना, तुम आई

थीं दुःख सुख पूछने और मैं ले बैठी व्यर्थ की बातें। चले थे हरि भजन को ओर ओटन लगे कपास। मैके मे सब लोग मजे मे तो है। रानी कैसी है ? साथ लाई हो क्या ? कुमार कैसा है ? पढता है या नहीं ?'

"वहाँ सब ठीक है माँ, रानी को लडकों के स्कूल मे भरती करा दिया है। कुमार अखबारों मे लेख लिखता है। बडा ही अजीब मिजाज का आदमी है वह तो, घर-भर के लोग मना-मना कर हार गए, व्याह ही नहीं करता। कहता है—"गुलाम देश के लोगों को व्याह शादी का कोई अधिकार नहीं। गुलाम बच्चे पैदा करके भारत माता के बोझ को बढाना नहीं चाहता—और भी ऐसी ही न समझ मे आने वाली बातें करता है। कभी कहता है, मै तो बी० ए० तक पढी लिखी बहू लाऊँगा। सब लोग परेशान है–घर टिकता ही नहीं। दिल्ली में एक अखबार चलाता है।"

'अखबार चलाता है। बडी अच्छी बात है बेटी। अखबार चलाना विद्वान आदमियों का काम है। इसका अर्थ यह है कि कुमार अब काफी समझदार लडका हो गया है। मनसुखा के आदमियों मे भी कई अखबारों के आदमी शामिल है। वह बता रहा था कि सात समुन्दर पार के अखबार वालों के आदमी भी उसके 'सघ' मे है। ये अखबार वाले चाहें तो देश को काफी सेवा कर सकते है बेटी। लेकिन मनसुखा कहता है कि सभी अखबार वाले एक जैसे नहीं होते, एक-दो को छोड कर सब पैसों के पीछे मरते हैं। इसीलिये तो देश मे दिन दिन अनाचार और अत्याचार

होते रहते हैं । उनका पर्दाफाश करने वाला कोई नहीं होता । लो बेटी, मैं तो फिर बातों मे भटक गई, रमेश । बेटा पानी तो पिला दो, ओठ सूख रहे हैं ।"

रामू बैठा तो किताब लेकर था । लेकिन अपनी माँ की बातों मे इतना गहरा उतर गया था कि उसकी विचार धारा कहीं-की-कहीं पहुँच गई थी । इसीलिए उसने पहली आवाज मे नहीं सुना । लेकिन दूसरी आवाज मे जब उसने सुना कि माँ पानी माँग रही है, तो वह तुरन्त किताब रखकर पानी ले आया ।

पानी पीकर कृष्णा बोली—"जरा गुदडी दे दे बेटा, ठण्ड लग रही है ।" फिर सरयू से बोली—"बेटा सरयू । लगता है जैसे दीपक बुझने वाला है । मुझे और किसी बात की चिन्ता नहीं है । मेरा जी अटक रहा है रामू मे । यह बच्चा अनाथ हो जायगा । इसके आगे पीछे कोई नहीं है । कोई पूछनेवाला तक नहीं है । और चूँकि इसकी आदत अपने लिये कुछ भी माँगने की कतई नहीं है इस लिए और भी अधिक चिन्तित होती हूँ । इसका क्या होगा ? तुम पर मेरा पूरा भरोसा है । तुम इसे दुखित होते नहीं देख सकोगी, सही है । लेकिन तुम्हारी मानवीय, जातीय, पारि ारिक और गार्हस्थिक सीमितताएँ भी तो हैं । इसके लिए मैं तुम्हें कभी मजबूर नहीं करना चाहती । मैं तो यह चाहती हूँ बेटी, कि उन सीमितताओं मे रहकर इसके लिए कुछ कर सको तो करना—और यदि इसके लिए तुम्हें उन सीमितताओं से बाहर आना पड़े तो मत करना । उस समय भी यदि तुम भावना मे भर गईं, तो मेरी

आत्मा को शान्ति नहीं मिलेगी। बेटी, तुमसे कुछ ऐसी आत्मीयता हो गई है कि न कहते भी बहुतसी बातें कहनी पड़ जाती हैं।"

सरयू ने कहा—"माँ। जैसा मनोहर वैसा ही रामू। तुम किसी भी बात की चिन्ता न करो। रही तुम्हारी बात, सो यह भरोसा रखो कि ऐसा कोई काम नहीं होगा जो तुम्हारी पवित्र स्मृति के विरुद्ध हो। मैं भी देख रही हूँ कि अब तुम्हें शान्ति से विश्राम करना चाहिए। शरीर इस लायक अब नहीं रहा कि तुम तालाब नहाने जाओ। रामू से एक बाल्टी पानी मगवालो और घर ही नहाओ। एक बात और कहे देती हूँ—दिमाग पर जोर देना छोड दो। तुमने रामू को वैसे ही बहुत होशियार कर दिया है। दूसरे उसकी बुद्धि तेज है। वह अवश्य होनहार बच्चा है। उसका भविष्य उज्ज्वल है। कष्ट हर इन्सान को भुगतने पडते हैं। कष्ट इसको भी होंगे, लेकिन ये कष्ट आगे चलकर इसके मार्ग के प्रकाश-स्तम्भ होंगे। सूर्य्य के प्रकाश की तरह इसकी उन्नति को कोई नहीं रोक सकेगा। दुखों की घनघोर घटाएँ उसकी आड़ में आ सकती हैं। लेकिन अपने ध्येय पर वह दृढ रहना सीख जाएगा तो एक दिन वह सदा के लिए चमक जाएगा। तुम उसकी ओर से अपशकुन के विचार छोड दो, आराम से लेटो। यह निश्चय रखो, जो मैं कर सकूँगी, अवश्य करूंगी। तुम अच्छी तरह से ओढ कर सो जाओ। थोडी देर में गरमा जाओगी तो ठण्ड दूर हो जायेगी। रामू पढ रहा है। देखो, मनोहर आ रहा है। शायद उसके पिताजी आ गए हैं, बुला रहे होंगे। अच्छा तो इस

समय मैं चलती हूं। काम से निपट कर फिर आऊँगी।" इतना कह कर सरयू चली गई। उसका जाना था कि हाथ में हँसिया लिये जग्गू आ पहुँचा बोला—"कृष्णा माँ कैसी हो?"

"तबीअत गिर गई है बेटा, आओ, बैठो।"

जग्गू बैठ गया। फिर चारों ओर यह देख कर कि कोई सुन तो नहीं रहा है, वह बोला—"मनसुखा आया है माँ?"

कृष्णा गुदड़ी फेंक कर उठ बैठी बोली—"कहाँ है?"

जग्गू बोला—"ईख के खेत मे बैठा है। साझ को आएगा"

५

बरसात का सुहावना मौसम, चारों ओर छाई हुई मोहक हरियाली, आकाश में छाए हुये काले और सुफेद बादलों की उन्मादक उमड घुमड़, धीमी धीमी बूंदा-चाँदी की सरसता और हवा के ठंडे-ठंडे मस्त झोंकों के अल्हड़ छेड-छाड़ से—खेतों में काम करने वाला किसान न मालूम किस मस्ती भरे काव्य की रचना कर रहा था।

दूर टेकरी पर बैठा हुआ तनसुखा हरी हरी घास को चरती हुई भैंस की रखवाली कर रहा था। ठंडे मौसम से उत्तेजित भैंस कभी इधर से उधर और कभी उधर से इधर पागलों की तरह लम्बी-लम्बी घास को अपने शरीर से रगड़ती हुई पूँछ और कान ऊँचे किये मस्ता रही थी। तनसुखा अपने आप में मस्त

रहा था। उसने जोर से एक राग छेडा और दुनिया को भूल
। वह शायद अपनी पिछली प्रेम कहानी को काव्य-बद्ध करके
ीत मे भिगो रहा था।

वडी वडी हरिणी की-सी आँखों मे गहरा काजल भरे नैना
-सवरे वालों से लडती, सिर पर घास की गठरी धरे उधर
निकली। बीस-बाइस वर्ष की उम्र, गुलाव के फूल का सा
मकता चेहरा, छरहरे बदन पर कसी हुई चोली से उमडते
मन को दबाते यों जा रही थी जैसे आग और पानी की शक्ति
पहाड और ऊबड खाबड जमीन को चीर कर धडाधड दौडी
ने वाली रेलगाडी। कि उसने सुना—'न जाओ सजनी, प्रिय-
,से मुख मोड।' प्रियतम से मुख मोडना, ऐसे समय मे जब
समय स्वय प्रियतम से मिलने का तकाजा कर रहा था।
के पैर जैसे बँधने लगे। फिर सुना—'काजर कारे तोरे नैना
चमुच आँखों मे काजल लगा था और वेहद। बडा यो है तन-
ना, इतनी दूर से बैठा आँखों का काजल देख रहा है।"
किन हाय। वेचारा अकेला है, ओह बिल्कुल अकेला,
राम। इन अकेले आदमियों की जिन्दगी भी क्या है।
ान्त मे गा गा कर अपने मन के खुमार निकालते रहते हैं। राम
न, वेचारे। और सुनाई दिया—'मन की बात बता दूँ
नी।' सच है इन अकेले रहने वालों के मन मे भानमती के
टारे की तरह न जाने बताने के लिये क्या-क्या होता है।
ता है, जैसे दिल मे आग की भट्टियाँ की भट्टियाँ सुलग रही

हैं। जरा सुनना चाहिए तनसुखा के मन में क्या है ? —'पायल की झंकार मृदुल मन—भायी, मै हारा जीवन, ओ सजनी।' पायल की झंकार, रसीला भी तो कहता था—'नैना, जब तू ठुमुक-ठुमुक कर चलती है, तो लगता है जैसे सारा ससार सरस्वती की वीणा से गुञ्जायमान हो रहा है। मन मयूर पख फैलाकर आत्मानन्द मे लीन, जैसे नृत्य कर रहे हों। सभी आदमियों को पायल की झंकार अच्छी लगती है। तो क्या, सजनी के साजन जीवन भी हार जाते हैं इन पायलों के पीछे ? आखिर कैसे होते होंगे वे साजन ? तनसुखा गाता ही गया— 'तुझ बिन सूनी-सूनी रजनी।' बडे वो होते हैं ये लोग, हाय राम। ये साजन क्या अपनी सजनी को रात-रात भर अपने सामने बिठाए रखते हैं ? बेचारी को नींद नहीं आती होगी क्या ? बडे मतलबी होते हैं ये साजन।

इसी बीच तनसुखा की भैंस ने नैना के सिर पर रखी घास को मुँह मे दाब कर जोर से झटका दिया। वह घबरा गई। "हाय राम, यह कौन ?" मुडकर देखा तो भैस। डरकर भागी। उसके भागने से भैंस ने कौतुहल मे आकर उसका पीछा कर डाला। नैना के पैर मे हडबडाहट के कारण उसकी धोती का पल्ला आ गया। वह गिर पडी। भैंस को अपनी ओर जोर से दौडकर आती देख वह जोर से चिल्ला पडी—"हाय राम बचाओ, मैं तो मरी।"

तनसुखा ने तानकर एक लट्ठ भैस की खोपड़ी मे ऐसी मारी

कि वह दौड़कर एक ओर दूर जाकर खड़ी हो गई। फिर वह नैना के पास पहुँचा, पूछा—"कहीं चोट तो नहीं लगी नैना?"

अस्त-व्यस्त गीली धोती को ठीक करके—अपने शरीर को चारों ओर से यह देख करके कि वह ठीक तरह से ढँका है या नहीं, नैना बोली—"जाओ जी। भैंस को छोड़ दो कि लोगों को मारे और तुम बैठकर टेकरी पर राग अलापो। कोई मरे, कोई जिए, तुम्हारा क्या बनता बिगड़ता है। पूछते हो, कहीं चोट तो नहीं लगी।"

"मैं मैं बेखबर था नैना, वर्ना यह नहीं हो पाता।"

"जब यहाँ आकर इतने बेखबर हो जाते हो तो क्यों उस बेचारी कृष्णा के तीन पचीसी रुपये खर्च करवाए। रामू पर दया करना था। वह सब कुछ तो उस लड़के के लिए ही करती है। ऐसे बेखबर आदमी को इतनी जवाबदारी का काम नहीं लेना चाहिए। कहीं इस बेखबरी में कोई भैंस चुरा ले गया तो।"

तनसुख जोर से हँस दिया—"भैंस चुरा कर चल देगा? हा-हा-हा-भैंस की चोरी ही-ही-ही-अरे, इतनी बड़ी भैंस को कोई क्या चुराएगा नैना! हाँ, तुम्हारे बारे में कोई कहे कि नैना को अकेली न छोड़ो जंगल में, कोई उसे उठा कर ले जायगा, तो बात मानने में भी आ सकती है।"

"हटो जी, कैसी बातें करते हो? मुझे भला कोई क्या चुराएगा। मैं कोई जानवर हूँ।"

"जानवर को चुराना जरा कठिन काम है। आदमी का क्या? वह तो किसी समय भी चुराया जा सकता है।"

"हटो जी, ऐसी बातें हमे अच्छी नहीं लगतीं। सुनाओ उसे, जिसका अभी गीत गा रहे थे। और तुम्हारी ये चोरी की बातें भी तो समझ मे नहीं आतीं।"

'न तुम्हारी समझ मे आएँगी कभी ये बातें नैना। घास उठाओ और अपने घर जाओ। हाँ, यह बताओ कि यह तुम्हे पचहत्तर रुपये मे भैस खरीदने की बात किसने बताई ?'

"तुम्हारा मतलब ?"

"न न न मतलब कुछ नहीं, यों ही पूछ रहा था।"

"मुझे दीनू की दादी ने बताया था।"

"अच्छा। दीनू की दादी ने ? बडी चालाक है बुढिया। चलो छोडो। इस समय इस बात मे क्या धरा है। कोई और बात करें। हाँ, आज तुम्हारी आँखों का काजल तो इस घटा को भी लजा रहा है नैना।"

"हटो जी। तुम्हें बात करनी भी नहीं आती। आदमी का अपमान करते जाते हो और बडाई भी। अभी कहते थे घास उठा कर घर जाओ, तुम कुछ भी न समझोगी और अब कहते हो काजल—तुम मर्दों की बातों का कुछ ठिकाना भी है ?"

"कोई ठिकाना नहीं। दिल चीर कर देखो नैना, तो पता लगेगा कि सचमुच मर्दों की बातों का कोई ठिकाना नहीं ?"

"तुम तो न समझने वाली बात करते हो।"

"अब भी कहोगी कि मैंने अपमान की बात कही। अब नहीं कहोगी कि मैं समझ की बात करता हूँ। छोडो इस बहस को, आज का मौसम कैसा है ?"

"देखते नहीं, मेरे कपडे भीगे हुये हैं बारिस मे।'

"अब यह तो भैंस नहीं, जिसे म मार कर भगा दूँ।'

इस पर दोनों हँस पडे।

पीछे से सुनाई दिया—"तो अकेले-अकेले मे यों छिप छिप कर बातें होती है। हँसी के कहकहे लगते है।' फिर जहाँ नैना गिरी थी वहाँ की मुडी हुई घास और गीली जमीन मे पडे हुए गड्ढों को देख कर दीनू की दादी बोली—"राम राम, घोर कलजुग छाया हुआ है। अरी चुडैल, रॉड को कहीं कुछ हो गया तो जगत मे मुँह काला हो जायगा।" तनसुखा बीचमे कडक कर बोला—"दादी। मुँह सम्हाल कर बोलो—अभी तक हम भाई-बहन हैं।"

"छी छी" पाप छा गया है इस दुनिया मे। घोर पाप छा गया है। मैने सब अपनी आखों से देखा है, मे अन्धी नहीं हूँ जो मुँह से झूठी बात निकालूँ। एक तो पाप किया और ऊपर से कहता है मुँह न खोलूँ। मुझ बूढ़ी औरत को डाटता है। हाय राम। तू कहा है? आज इन पापी आखों को यह भी दिखा दिया। उस बुढिया कृष्णा से सौ रुपये लेकर पचहत्तर मे भैस मोल ली—पच्चीस रुपये इस निगोडी को चटा दिये। चोर कहीं का, ऊपर से कहता है कि मै मुँह सम्हाल कर बोलूँ। देख तो सही, आज कैसी बेइज्जती करती हूँ मैं तेरी गॉव मे। और इस चुडैल को आज गॉव से निकलवा कर न छोडूँ—तो मेरा नाम दीनू की दादी नहीं। ऊपर से कहता है भाई बहिन। अरे दुष्ट, भाई बहिन के नाम को लजाते हुये तू मर नहीं गया।"

तनसुखा ने कृष्णा से सौ रुपये लेकर पचहत्तर मे भैंस ली और पच्चीस रुपये खा जरूर गया था। यह उसका कसूर था। कृष्णा के सामने वह इस बात को जाने देना भी नहीं चाहता था। यहीं तक होता तो वह दीनू की दादी के पैरों पडकर और उसे दो रुपये और देकर मना भी लेता—जैसा कि उसने पहले भी किया था। इस बार रुपये देने मे उसे देर हो गई थी। दो तीन तगादे के बाद भी वह दे नहीं सका था। दीनू की दादी इस पर अत्यन्त चिढ गई थी। और इसीलिए उसने नैना से उस दिन बता भी दिया था कि तनसुखा ने ऐसी बेईमानी की है। दीनू की दादी ने नैना और तनसुखा को बातें करते देखा तो उसने तनसुखा से और भी कुछ पटाने की सोच ली थी। किन्तु तनसुखा के कडे शब्दों को सुनकर वह एकदम तिलमिला उठी और दोनों को बदनाम करने की धमकी दे बकझक करती हुई जल्दी-जल्दी गॉव की ओर बढ गई। तनसुखा ने सोचा कि चलो मना लें। दीनू की दादी ने सोचा– जरा रुक कर देखें, तनसुखा आता है कि नहीं। लेकिन झूठे पाप को लादने वाली बुढिया से बात तक करने मे तनसुखा को नफरत हुई। और वह पत्थर की तरह वहीं खडा रहा। जब बुढिया ने देखा कि वह नहीं आ रहा था तो वह और भी जोर-शोर से न-मालूम क्या-क्या बकती हुई शीघ्रता पूर्वक गॉव की ओर चली गई।

नैना ने चिन्ता प्रकट की—"अब क्या होगा तनसुख?" तनसुखा न-मालूम क्या सोच रहा था, बोला—"नैना, माफी तो

मैं नहीं मागूँगा, लेकिन मेरे मन मे पाप तो जरूर था। लेकिन जब मैंने तुम्हें अभी बहन कह दिया है, तो आज से इसी नाते को निभाने की कोशिश करूँगा।"

नैना बोली—'लेकिन मै पूछती हूँ, अब क्या होगा? यह बुढिया तो मेरा सब कुछ चौपट करके ही मानेगी। जानते नहीं हो, गाँव का बच्चा-बच्चा डरता है इससे। पक्की नारद है यह नारद।"

तनसुखा ने समझाने की गरज से कहा—"अरे नारद छोड कर नारद का बाप भी हो तो यह बुढिया तुम्हारा कुछ भी नहीं बिगाड सकेगी समझीं। इसकी तुम चिन्ता न करो। साँच को कभी आँच नहीं आती।"

नैना ने कहा -"यह तो मैं भी जानती हूँ तनसुखा, लेकिन गाँव मे बेइज्जती होगी, लोग हमारी बात करेंगे। माँ मुझे घर से निकाल देगी। मैं तो कहीं की भी नहीं रहूँगी।" वह रोने लगी।

तनसुखा बोला—"पगली कहीं की। इस बुढ़िया के कहने से माँ तुम्हे घर से निकाल देगी? तो, तुम मेरे पास रह जाना, बस। तुम्हे कोई तकलीफ न होने दूँगा। कर सकोगी तुम मुझ पर भरोसा?" इस पर नैना ज्योंही कुछ कहने को हुई कि

सहसा तनसुखा को याद आया, बोला—"अरे। भैंस कहाँ गई।" वह उसे खोजने दौडा। लेकिन कुछ ही दूर जाने पर उसने जो कुछ देखा, उसे देख कर अपना सिर पीट कर वह वहीं बैठ गया। नैना ने देखा तो वह भी आश्चर्य से दंग हो गई।

भैंस मर चुकी थी। जोर की जो लाठी भैंस को लगी थी, उससे उसका सिर फट गया था और आँख फूट गई थीं। नैना ने तनसुखा की लाठी उठा कर देखा तो उसमे लोहे की तीखी तीखी कई कीलें लगी हुई थीं।

तनसुखा एक लम्बी साँस लेकर बोला "सर्वनाश हो गया नैना। मैं अपनी बहिन को मुँह दिखाने लायक भी न रहा। अब मैं उसका बहुत बडा कर्जदार हो गया। मुझसे बडा नुकसान हो गया।"

नैना बोली—"इसका कारण मै ही हूँ तनसुख। न मैं तुम्हारा गीत सुनने रुकती और न यह बवण्डर खडा होता।"

तनसुखा बोला—"नहीं नैना, ऐसा न कहो। मै सचमुच बडा अभागा हूँ।"

× ×

दीनू की दादी के गाँव में पहुँचते-पहुँचते आधे गाँव को खबर मिल गई कि टेकरी के उस पार तनसुखा और नैना बुरे कर्म करते देखे गए। कि इसके बाद भी तनसुखा नैना को बहिन कहता है। कि तनसुखा ने कृष्णा माँ को भैंस के सौ रुपए बताए और पचहत्तर में खरीदी और पच्चीस रुपए नैना को चटाए। सूरज के डूबते-डूबते गाँव के बच्चे-बच्चे के मुँह पर यह बात हो गई। बडी भारी खलबली मच गई। नैना की माँ सिर पीटती-पीटती नन्दू पटेल के यहाँ पहुँची। कृष्णा सरयू के यहाँ बैठी हुई थी। उसने जब ऐसा सुना तो वह अपने आप को न रोक सकी।

ह बिना कुछ कहे-सुने वहां से उठ घर आकर छाती फाड़-फाड़ नेि लगी। अभी तक गाव-का-गाव चरित्र के मामले मे उसके र को एक आदर्श घर मानता था। हाय, सत्यानाश हो गया। उसे चारों ओर अन्धकार दिखाई देने लगा। क्योंकि उसे मालूम था कि इतनी बडी बदनामी के बाद तनसुखा कभी गांव मे नहीं ढेगा। और पिछले तीन-चार महीने से उसकी ओर से भेस इत्यादि के जरिए जो मदद मिल रही थी—वह अब नहीं मिल सकेगी। घी और दूध की बिक्री से कृष्णा को बडी आशा बँध गई थी। उसे विश्वास हो गया था कि उसके मरने के बाद भी रामू का पढना जारी रह सकेगा। लेकिन अब उसकी यह आशा भी टूट गई। रामू को गोदी मे भर कर कृष्णा फफक-फफक कर रोने लगी। हाय तनसुखा। तूने परिवार से यह किस जन्म का बदला निकाला। गांव के लोग कहने लगे—"ओ हो हो दुनिया से धर्म धुल गया। पाप को लोग पुण्य कहने लगे। उस बेचारी कृष्णा के तकदीर पर तो पत्थर पड़े हुए हैं। मनसुखा कैसा भाई मिला था। घर तो-घर गॉव-भर मे आनन्द की लहर छा गई थी। गांव मे वह एक नई जिन्दगी फूँक गया। लेकिन बुरा हो उस पटवारी रामधन का जिसने अपने जाल-चक्र से उसको इतना क्रोधित कर दिया और नतीजा यह हुआ कि उसे गॉव छोड़ना पड़ा। और कृष्णा की सारी उम्मीदों पर पानी फिर गया। और यह तनसुखा—ऐसा आया कि इसने घर-तो घर गॉव को भी बदनाम कर दिया। ऐसे आदमी को गॉव में नहीं रहने

देना चाहिए। और इस भ्रष्टा नैना को भी उसके साथ ही निकाल देना चाहिए।

रात को गाँव के लोगों की पचायत बैठी। पचायत ने वही फैसला दिया–जिसकी सभी आशा करते थे। तनसुखा और नैना पचों के सामने विवाह करें और गाँव छोड कर चले जाँय। भैंस वाले पच्चीस रुपयों पर भी बहस हुई। पचों ने फैसला दिया कि जाने के पहले तनसुखा कृष्णा को पच्चीस रुपए देकर जाए। अपने गाँव की किसी भी बहू बेटी को वे इस प्रकार ठगा जाना गाँव पर कलक समझते हैं।

तनसुखा ने पचों की दो बातें मान लीं। एक गाँव छोड कर चला जाना, दूसरे कृष्णा के रुपए लौटा देना। लेकिन नैना से विवाह करने पर उसने साफ इन्कार कर दिया। जिसे उसने बहिन कह दिया, उससे विवाह। वह ऐसा कभी नहीं कर सकता। इस पर पचों में बडी खलबली मच गई। कुछ ने कहा–पकड कर जबरदस्ती विवाह करवा दिया जाए। लडकी की जिन्दगी खराब करदी विवाह क्यों नहीं करेगा। पच की सभा मे उपस्थित नवयुवकों ने कहा—"तनसुखा को मार-मार कर हम उसका भुर्ता बना देंगे। गाँव की बहू-बेटियों की इज्जत मिट्टी मे मिलाना हम कभी बर्दाश्त नहीं करेंगे।" इस पर कुछ पचों ने कहा–"नैना से तो पूछ देखो, वह क्या कहती है।" अपराधिनी की भाति नैना पचों के सामने लाकर खड़ी की गई। पचों ने पूछा—"पचों का निर्णय तो तुझे मालूम हो ही गया नैना। तनसुखा के बारे मे त क्या कहना चाहती है ?"

नैना ने कहा—' निर्णय देने के बाद मुझसे कुछ पूछा जाए, यह कहाँ तक ठीक है, मैं नहीं जानती। हम दोनों निर्दोष हैं, हम पर रोप लगाना सभा का अन्याय है।" इस पर सभा में एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक फिर खलबली मच गई। पचों ने रोप में भर कर कहा—"तू कल की छोकरी सच बोलती है और अस्सी वर्ष की बुढिया, जिसे कल मरना है, झूठ बोलती है ? ऐसी बात फिर बोलेगी तो तुझ पर पचों के अपमान का दोष लगाया जायगा। हम तुझसे यह जानना चाहते हैं कि तू गॉव में रहना चाहती है या तनसुखा के साथ जाना चाहती है। और यह हम तुझसे इसलिए पूछ रहे हैं कि तू स्त्री की जात है। तेरे साथ कोई ज्यादती न हो।"

इस पर नैना की माँ बोली—"माँ-बाप पच मुझे क्षमा करें। मुझे इस गॉव में रहना है। मेरे और भी बच्चे और सम्बन्धी हैं। इस कलमुही को अपने यहाँ रख कर मैं सिर नीचा करके गॉव में नहीं घूमूँगी। मैं इसे अपने पास नहीं रखूगी। चाहे यह इस चाडाल तनसुखा के साथ चली जाय या गॉव में रहे।"

"बोल नैना तू क्या कहती है ?" पचों ने पूछा।

"मैं न्याय चाहती हूँ। और न्याय इस सभा में है नहीं। इसलिए मैं भाई तनसुखा के साथ परदेश चली जाऊँगी।" नैना ने कहा।

इस पर पच पुन क्रुद्ध होगए। उन्होंने आँख मीच कर निर्णय

देना चाहिए। और इस भ्रष्टा नैना को भी उसके साथ ही निकाल देना चाहिए।

रात को गाँव के लोगों की पचायत बैठी। पचायत ने वही फैसला दिया-जिसकी सभी आशा करते थे। तनसुखा और नैना पचों के सामने विवाह करें और गाँव छोड कर चले जांय। भैंस वाले पच्चीस रुपयों पर भी बहस हुई। पचों ने फैसला दिया कि जाने के पले तनसुखा कृष्णा को पच्चीस रुपए देकर जाए। अपने गाँव की किसी भी बहू बेटी को वे इस प्रकार ठगा जाना गाँव पर कलक समझते हैं।

तनसुखा ने पचों की दो बातें मान लीं। एक गाँव छोड कर चला जाना, दूसरे कृष्णा के रुपए लौटा देना। लेकिन नैना से विवाह करने पर उसने साफ इन्कार कर दिया। जिसे उसने बहिन कह दिया, उससे विवाह। वह ऐसा कभी नहीं कर सकता। इस पर पचों मे बडी खलबली मच गई। कुछ ने कहा-पकड कर जबरदस्ती विवाह करवा दिया जाए। लडकी की जिन्दगी खराब करदो विवाह क्यों नहीं करेगा। पच की सभा मे उपस्थित नव युवकों ने कहा—"तनसुखा को मार-मार कर हम उसका भुर्ता बना देंगे। गाँव की बहू-बेटियों की इज्जत मिट्टी मे मिलाना हम कभी बर्दाश्त नहीं करेंगे।" इस पर कुछ पचों ने कहा-"नैना से तो पूछ देखो, वह क्या कहती है।" अपराधिनी की भाँति नैना पचों के सामने लाकर खड़ी की गई। पचों ने पूछा—"पचों का निर्णय तो तुझे मालूम हो ही गया नैना। तनसुखा के बारे मे तू क्या कहना चाहती है?"

है। कसूर किसी का नहीं। कसूर इस जवानी का है। दो जवान स्त्री-पुरुष एकान्त मे एक साथ हँसते हुए देखे जॉय—समाज को क्योंकर वर्दाश्त हो ?"

"लेकिन तनसुख, दुनिया इसी तरह क्यों सोचती है ? क्या जवान स्त्री पुरुष एकान्त में दूसरे कारण से हँसते हुए नहीं देखे जा सकते ?"

"देखे जा सकते हैं। लेकिन देखने वाला भी तो हो। आज के समाज की आँखें रूढ़ि-ग्रस्त हैं। वह हर चीज मे वही देखती है, जो अब तक देखती आई है। अरे, दूसरी निगाह से एक जवान स्त्री और पुरुष को हँसता हुआ देख लिया जाय तो वह तो एक अजीब बात होगी। और वह अजीबपन ही क्रान्ति होगी। समाज की अन्य रूढ़ियों की जड़ों को खोदकर फेंक देनेवाली होगी। भला बताओ तो, जन्म-जन्म का वह चोंगा क्या यों ही उतार कर फेंक देने का है। फिर इन रामफटाका तिलकधारी पाखण्डियों को कौन पूछेगा ? इनके पेट कैसे भरेंगे ? आज मुझ और तुम पर यह बीती है। इसलिए हम सोच रहे हैं इस पर, पर बताओ तो, आज से पहले हमने कभी सोचा है इस ढंग से ? नहीं। जब हम ही इतने सोये हुए हैं। और आग लगने पर कुँआ खोदने लगते है तो इसका अन्त क्या होगा ? सोचने की बात है। मै कहता हूँ एक दिन एक भयकर आग लगेगी नैना, यह समाज खुद-बखुद उसमे जल कर खाक हो जाएगा। इसके लिए न तुम्हे प्रयत्न करना पड़ेगा न मुझे। हाँ, तुम और मुझ जैसे कितनों ही

दे दिया—"तो दोनों आदमी इसी समय गाँव से निकल जाँय।"

नैना और तनसुखा गॉव छोडने के लिए तैयार हो गये। तनसुखा ने नैना से कहा—"नैना, ईश्वर की ऐसी ही जब इच्छा है तो इसे कौन टाल सकता है। पता नहीं भविष्य के गर्भ मे क्या छिपा है। लेकिन तुम्हें मुझ पर विश्वास है न। क्योंकि अविश्वास की गाडी अधिक नहीं चल सकेगी। अभी मौका है, यहीं रहने की इच्छा हो तो गॉव वाले तुम्हारा प्रबन्ध यहॉ कर सकते है। उन्हें मुझसे दुश्मनी है। तुमसे नहीं।"

नैना ने कहा—"कैसी बातें करते हो तनु, स्त्री जिस पर एक बार मन से विश्वास कर लेती है, वह पत्थर की लकीर समझो। मुझे तुमसे क्या शिकायत है। गॉव वालों ने तुम्हारे और मेरे चरित्र पर सन्देह किया है। यह उनकी गलती है। न्याय करने वाले और साक्षी चूँकि बूढे है, इसलिए उनकी बातें बेबुनियाद नहीं समझी जातीं। फिर ये सामर्थ्यवान है। तुलसीदासजी ने भी कहा है कि—समरथ को नहिं दोष गोसाईं। अब तो हमे आगे की सोचना है। इतना अपमानित होकर मै इस गॉव मे एक क्षण भी नहीं रह सकती। चलो, जहॉ तुम ले चलोगे—चलूँगी। जैसे रखोगे—रहूँगी। पेड के नीचे जीवन बिताना पडे—बिता दूँगी। लेकिन इस गॉव का मुँह लौट कर नहीं देखूँगी, जिसमे अन्याय और अन्धविश्वास का बोलबाला है।"

तनसुखा बोला—"तुम भी ठीक कहती हो नैना। और ये गाँव वाले भी ठीक है। पंच भी ठीक हैं। दीनू की दादी भी ठीक

है। कसूर किसी का नहीं। कसूर इस जवानी का है। दो जवान स्त्री-पुरुष एकान्त मे एक साथ हँसते हुए देखे जॉय—समाज को क्योंकर वर्दाश्त हो?"-

"लेकिन तनसुख, दुनिया इसी तरह क्यों सोचती है? क्या जवान स्त्री पुरुष एकान्त मे दूसरे कारण से हँसते हुए नहीं देखे जा सकते?"

"देखे जा सकते हैं। लेकिन देखने वाला भी तो हो। आज के समाज की आँखें रूढि-ग्रस्त हैं। वह हर चीज मे वही देखती है, जो अब तक देखती आई हैं। अरे, दूसरी निगाह से एक जवान स्त्री और पुरुष को हँसता हुआ देख लिया जाय तो वह तो एक अजीब बात होगी। और वह अजीबपन ही क्रान्ति होगी। समाज की अन्य रूढियों की जडों को खोदकर फेंक देनेवाली होगी। भला बताओ तो, जन्म-जन्म का वह चौंगा क्या यों ही उतार कर फेंक देने का है। फिर इन रामफटाका तिलकधारी पाखण्डियों को कौन पूछेगा? इनके पेट कैसे भरेंगे? आज मुझ और तुम पर यह बीती है। इसलिए हम सोच रहे हैं इस पर, पर बताओ तो, आज से पहले हमने कभी सोचा है इस ढंग से? नहीं। जब हम ही इतने सोये हुए हैं। और आग लगने पर कुँआ खोदने लगते हैं तो इसका अन्त क्या होगा? सोचने की बात है। मै कहता हूँ एक दिन एक भयकर आग लगेगी नेना, यह समाज खुद-बखुद उसमे जल कर खाक हो जाएगा। इसके लिए न तुम्हें प्रयत्न करना पड़ेगा न मुझे। हाँ, तुम और मुझ जैसे कितनों ही

को चुपचाप अपनी बलि देनी होगी। देखा नहीं था, नन्दू का लडका और दीनू की दादी की लड़की जब पकडे गए थे बुरे कर्म करते हुए–तो बात कैसी दबा दी गई थी। इसलिए कि वे बडे थे। नियम बनाने वालों की सन्तान थे। मेरे और तुम्हारे स्थान पर वे पैसे वाले थे। इसलिए ऐसे ही उस प्रसग का रूप और ही हुआ। न मेरे आगे-पीछे कोई है, न कोई तुम्हारी चिन्ता करने वाला है। तम्हारी माँ जैसी अनेकों अभागी माताएँ हैं इस समाज में—जो लडकी को एक भार मानती है। तुमसे उसे छुट्टी मिली। ब्याह-शादी की झंझट से बची। लेकिन जिनकी चिन्ता करने वाला कोई है और उनके साथ ऐसी बीतती है, तो पंच के विधान का रूप और ही हो जाता है नैना। जब तक उनके साथ भी हम तुम जैसा व्यवहार न होगा—यह ढर्रा यों ही चलता रहेगा। इसे न तुम रोक सकोगी, न मै। कोई भी नहीं रोक सकेगा। इसे तो समय ही रोक सकेगा। इसीलिए तो कहता हूँ, बलिदान की आवश्यकता है। लेकिन हमारे तम्हारे बलिदान से कुछ नहीं होगा। बलिदान जो नहीं कर सकते उनके करने से होगा। क्योंकि उनके बलिदान की कीमत होगी। हम अपना बलिदान कर सकते है। इसलिए हमारे बलिदान की कोई कीमत नहीं। लो, अब चलने की तैयारी करो। लेकिन मेरे सामने एक कठिन समस्या आकर खडी हुई है। उसे पार पाना जरूरी है।"

"वह क्या ?" नैना ने पूछा।

"पंचों ने पच्चीस रुपये बहिन को दिलवाने का फैसला

दिया है। लेकिन जानती हो उसे मुझे कितने देने हैं? सौ रुपये?"

"क्यों?"

"उसका मुझसे पचहत्तर का और नुकसान हुआ है न नैना। भैंस मेरे हाथ से ही जो मरी है। मुझे रुपयों का प्रबन्ध करना है। इसके पहले मैं यहाँ से जा नहीं सकूँगा।"

इतने ही में रामू ने आकर कहा—"मामाजी। माँ पूछती है—भैंस अभी तक घर नहीं आई, क्या आज रात को जंगल ही में रहेगी? दुह लाए हो क्या उसे? तो दूध कहाँ है? मैं खाना खाने जो बैठता हूँ।"

तनसुखा ने रामू को गोद में उठा लिया—फिर आँखों में आँसू भर कर बोला—"रामू। तुझे और माँ को सुन कर बड़ा दुःख होगा भैया कि भैंस टेकरी पर ही मर गई है आज।"

"भैंस मर गई?" रामू का मुँह फटा-का फटा रह गया। वह फिर बोला—"कैसे मर गई मामाजी?"

"उसे साँप ने काट खाया था रामू।" नैना ने बीच में बात काट कर कहा। तनसुखा ने उसकी ओर इस दृष्टि से देखा मानो कह रहा हो कि अब क्यों झूठ बोलने पर मजबूर कर रही हो मुझे। रामू तनसुखा की गोद से उतर पड़ा और उदास होकर घर की ओर चल दिया।

कृष्णा ने जब सुना कि जब भैंस मर गई तो वह अवाक् रह गई। कितने कठिन परिश्रम से कमाया हुआ पैसा था वह

मनसुखा का। तनसुखा के चरित्र भ्रष्ट होने का दुख तो उसे था ही ऊपर से भैंस की मृत्यु का शोक। अब उसके पास कुछ भी सहारा न बचा था। मनसुखा पहले ही चला गया था। कुछ रुपये थे वे यों बरबाद हो गए। थोडी बहुत मदद करने वाले तनसुखा की यह दशा हुई, आँखें उसकी जवाब दे रहीं थीं। शरीर थक गया था। रामू को पढा-लिखा देखने की मन में तीव्र लालसा थी। गाँव में इज्जत थी। वह तनसुखा ने यों धूल में मिला दी। अब क्या मुँह लेकर जाएगी वह सरयू के पास। धनराज सेठ के ताने कितने तीखे होंगे। सर्वनाश तनसुखा ने यह क्या किया? कृष्णा अचेत होकर पृथ्वी पर धडाम-से जा गिरी। रामू किंकर्तव्य विमूढ हो गया। माँ की इस मूर्च्छा को वह कैसे दूर करे? उसे कुछ भी न सूझ पडा वह जोर से चीख कर रो दिया।

लाख प्रयत्न करने पर भी तनसुखा रुपयों का प्रबन्ध नहीं कर सका। आज यदि उसे कोई गुलाम की तरह खरीदने को तैयार होता तो भी वह अपने आपको बेच देता, लेकिन गाँव के एक भी आदमी ने उससे बात तक नहीं की। निराश होकर उसने नैना से आकर कहा—"नैना, विपत्ति चारों ओर से आ पडी है। असह्य है। लेकिन सोचता हूँ वह इन्सान क्या—जो मुसीबतों को सह नहीं सकता। अब तो डट कर मोर्चा लेना है। तो तैयार हो? चलो?"

"मुझे कौन-सी गाडी जोतना है तनसुख? चलो। लेकिन फिर कृष्णा मा के रुपयों का क्या होगा?"

"शहर में जाकर अपने आपको बेच दूँगा नैना। वहाँ से रुपये भेज दूँगा।"

६

दिन छिपने के बाद जब गाँव में मालूम हुआ कि कृष्णा के यहाँ—एक नए चारण जयदेव नाम के आए हुए हैं—तो एक-एक करके गाँव-भर के जवान, बूढ़े और बच्चे एकत्रित होने लगे—थोडी ही देर में कृष्णा की बैठक में एक भारी भीड़ जमा हो गई।

चारण जयदेव ने पहले एक मगलाचरण न मालूम किस भाषा में गाया जो गाँव वालों की समझ में कतई नहीं आया। जब तक मगलाचरण होता रहा—लोग एक दूसरे के मुह की ओर ताकते रहे। कुछ तम्बाकू पीते रहे—और कुछ घर की तरफ देख आने या बैलों को घास डाल आने के बहाने समय काटने के लिए उठकर चल दिए। लेकिन ज्योंही मगलाचरण समाप्त हुआ, सब लोग चारण जयदेव के मुँह की ओर ताकने लगे। उठ कर जाने वाले बैठ गए। तम्बाकू पीने वाले चिलम रोक बैठे। चारण जयदेव बोले—"भाइयो, माताओ और बहिनो, आज मैं आपके सामने एक नए चारण के रूप में उपस्थित हूँ। मैं और चारणों की तरह आप लोगों के सामने पृथ्वीराज चौहान, राणा प्रताप, विक्रमादित्य, भरथरी या राजा गोपीचन्द की कहानी नहीं कहूँगा। जमाना बदल रहा है। देश, काल और अवस्था को देखकर

चलना ही लाभदायक है। आज का जमाना गई-गुजरी बातों को लेकर रोने को ठीक नहीं समझता। और ठीक भी है। पिछली बातों को कभी-कभी याद कर लेना बुरा नहीं है—और न पिछली बातों की जानकारी रखना ही बुरा है। लेकिन—बुरा है और बहुत बुरा है यह कि हम अपनी पिछली कीर्ति को लेकर उसकी प्रसशा मे सब कुछ भुला दें। और आज की अपनी दयनीय स्थिति पर विचार न करें। हम यह थे—हम वह थे—हमारी पताकाएँ समस्त ससार पर फहराती थीं—बुद्ध ने चीन और जापान मे अपना धर्म फैलाया—रामचन्द्रजी ने अपनी मरियादा रखने के वास्ते अग्नि-परीक्षा होने के बाद भी लोक-मत को सम्मान देने की गरज से सीता जी को बनवास दिया—महाराणा प्रताप ने घास की रोटी खाई—शिवाजी ने आजन्म मुगलों से लोहा लिया—अकबर ने दीनइलाही धर्म चलाया। इन सब बातों की जानकारी रखना आवश्यक है। किन्तु इनकी जानकारी रखना मात्र ही हमारे लिए आज सब कुछ नहीं है। जो बीता सो बीता। वह तो वे थे ही। अब देखना है कि हम क्या है और कहाँ है। हम उनके से हैं या नहीं हैं तो क्या उनसे हम आगे बढ नहीं सकते ? और उनके से नहीं हैं, तो क्यों ? उनके समान बनने मे हमारे सामने क्या-क्या कठिनाइयाँ है। उन्हें हम कैसे दूर कर सकते हैं। इन सब बातों की गहराई मे बैठना हमारे लिए आज अत्यावश्यक हो जाता है। इसी दृष्टिकोण को सामने रखकर मैं इस वक्त आप सब लोगों से निवेदन करूँगा कि आप मुझसे उन

बातों के बारे मे पूछें—जो आज आपकी समझ मे नहीं आ रही हैं—और जिनकी वजह से आप लोग दिन रात नुकसान पर-नुकसान उठा रहे हैं।

इस पर उपस्थित लोग एक दूसरे के मुँह की ओर देखने लगे। प्राचीन काल के राजाओं की कहानियाँ सुनने के लिए जो लोग आए थे—वे निराश हो गए। वृद्धों ने अपनी चिलम सम्हाली। बच्चे उठकर घर जाने लगे। नौजवान एक दूसरे की ओर देखकर आश्चर्य करने लगे। आपस मे एक दूसरे को कुरेदने लगे। प्रश्नों की भूमिकाएँ बाँधने लगे। पहले तो एक दो अहलकों मे कुछ उत्साह दिखाई दिया। फिर तुरन्त ही सन्नाटा छा गया। सभी चक्कर मे पडे कि क्या पूछा जाय और क्या नहीं। और पूछा जाय तो कैसे ? यह चारण तो बडा ही अजीब ढग का आदमी है। कहानी किस्से छोडकर उटपटाग बातें पकड ली है इसने। कोई कहने लगा-"अरे, इसको कुछ आता ही नहीं - यों ही समय काटने के लिए आ गया है।' इसी बीच कुछ लोग उठकर चल भी दिए। जयदेव को बडी निराशा हुई। मन मे कहने लगा-ओह, देश मे कितनी बेखबरी छा गई है। लोग अपने हित की बात भी नहीं सोच सकते। लगता है जैसे मनुष्य एक मशीन का पुर्जा बन गया है। जहाँ फिट कर दिया गया है, वहीं लगा हुआ है। मशीन घूमी तो नियमानुसार वह भी घूम गया। बस। इसी प्रकार ये गाव के किसान हैं। सुबह घर से बैल लेकर जगल मे चले जाते हैं। दिन भर खेतों में काम

करते है। और शाम को घर आ जाते हैं। फसल कटती है तो कोई हिसाब नहीं। आधा अनाज बनिया ले गया। आधे मे सरकारी लगान चुक गई। और शाम को घर मे खाने के लिए सेर भर अनाज भी नहीं रहा—लेकिन इस पर कभी किसी ने सोचा तक नहीं कि इसका क्या कारण है। इस पहेली मे न उलझने के बहाने वह किसान बनिए की दुकान पर पहुँच जाता है और उसमे फिर सदा के लिए फँस जाता है। क्या अजीब बात है? अपनी बरबादी के कारण को जानने से कैसी अनाकानी? कैसा दुराव? इस प्रकार तो इस देश का भला हो चुका। एक भारी क्रान्ति की जरूरत है। सब को जगाना होगा। उठाना होगा। और उनकी बरबादी के मूल कारण को बरबस उनके कानों मे फूँकना होगा। री, विदेशी सत्ता, तू ने देश के मानसिक स्तर को कैसा निकम्मा बना दिया है।

जिन लोगों मे मैं इतना रहा हूँ। जिनको मैंने इतना सिखाया। जिन पर मेरा इतना प्रभाव पडा कि पटवारी के मामले मे किसी ने चूँ तक नहीं की। जिस गॉव मे इतनी जागृति हो गई थी। कुछ ही समय मे वहाँ इतना परिवर्तन। सब ज्ञान-शून्य। सब विचार शून्य। सब सत्यानाश।

इतने ही मे कुछ लोग, जो कुछ सोचने विचारने के लिए दल बॉधकर उठकर अलग अलग चले गए थे, वापस आते दिखाई दिए। उनका अगुआ जयदेव के पास आकर बोला—"चारण जी। हमारे यहाँ मनसुखा जी थे जो बड़े-बड़े लोगों के

कान काटते थे। लेकिन दुर्भाग्यवश वे आज हमारे बीच मे नहीं हैं। यदि वे होते तो इसी वक्त आपसे ऐसी ऐसी बातें पूछते कि आप भी खुश हो जाते। हम मे से तो कोई बोलना भी नहीं जानता। जो दो तीन आदमी हैं, वे आज कुछ भी पूछना नहीं चाहते। उनका विचार है कि कल दिन मे कुछ सोच-समझ कर आपसे पूछेंगे। यदि आप तब तक इस गाँव मे रुके रहे तो आपका बडा उपकार होगा।"

इस पर जयदेव ने कहा -"मेरे प्यारे दोस्तो। दु ख की बात है कि एक मनसुखा के न होने से आज इस गाँव पर एकदम मूकता की छाप लग गई है। आपको चाहिए था कि एक मनसुखा के जाते ही आप लोगों मे से दस मनसुखा और तैयार करते। मुझे एक बहुत ही जरूरी काम है। इसलिए मैं रुक नहीं सकूँगा। सुबह ही चला जाऊंगा। जब तक मैं उधर से लौट कर आऊँ—आप लोग प्रश्नों की एक लम्बी-चौडी सूची तैयार कर लें। अच्छा, तो—अब मैं आप लोगों से छुट्टी चाहता हूँ। साथ ही प्रार्थना करता हूँ कि अपने-अपने घर जाकर आप लोग आज के वाकये पर सोचें। आराम न करें। यह बडे शर्म की बात है।"

जैजै राम करने के बाद बैठे हुए लोगों ने कृष्णा की बैठक खाली कर दी। एक-एक करके सभी चले गए। सब के चले जाने के बाद दो आदमी, जिनमे एक नवयुवक और एक अधेड था—जयदेव के पास आकर बोले—"चारणजी, बात वास्तव मे जो है—उसे आप बिना जाने ही चले जाँय, यह हमें पसन्द नहीं।

मनसुखा जैसे आदमी जिस गाँव मे रह जॉय—वह गाँव—इतना गिरा हुआ नहीं हो सकता। यह आप विश्वास रखें। बात और है। और वह यह कि पटवारी की वारदात के बाद धनराज सेठ के यहाँ जो दो नौकर आए हुए हैं देखने मे तो सीधे-सादे और भले मानुस लगते हैं, लेकिन वे हैं गुप्तचर। गाँव की एक-एक बात प्रति दिन ठाकुर साहेब के पास पहुँचाते रहते हैं। हर महाने गाँव वालों को तग किया जाता है। उनके आदमी आकर हर पन्द्रहवें दिन कोडे बताते हैं। झूठ-मूठ तोहमद लगाते हैं। तग करते हैं। मारते है और ऊपर से पैसा खाते हैं। कहते हैं। मनसुखा राजनीतिक दल का आदमी है। तुम उससे मिले हुए हो। तुम्हारे पास उसकी चिट्ठी आती है। तुम लोगों को उसका पता मालूम है। बता दो। नहीं बताओगे तो किसी दिन तुम्हारा गाँव जला दिया जायगा। लूट लिया जायगा। सो साहब गाँव वाले बहुत ही डरे हुए हैं। और वे इस प्रकार की वातों मे पडने से बडे डरते हैं। सोचते हैं – कौन रास्ते चलते झंझट मोल ले। रिपोर्ट हो गई तो बाल-बच्चों से भी गए। खेती-बारी बरबाद हुई और कैदखाने मे सडना पड़े सो अलग। यही कारण है कि स्पष्ट रूप से कोई कुछ भी नहीं कहना चाहता। नहीं तो क्या आप समझते हैं कि यह गाँव बेदर्दी है? इसकी बरबादी पर इसे दर्द नहीं है? चारणजी, इस गाँव के लोगों के दिल पर वो-वो फफोले पडे हुए हैं कि जिनका कुछ कहना ही नहीं। पीब भरा हुआ है। जरा-सा दबाने से जान निकलती है। लेकिन क्या करें।

मजबूरी मे यह सब कुछ सहना पड रहा है। क्या हम पूछ नहीं सकते कि ठाकुर-बनियों द्वारा किसानों को चूस लेने मे क्यों मदद करते है? किसानों की फसलें खेतों-ही-खेतों मे क्यों नीलाम करवा दी जाती है। बिना कारण उन्हें घर बार, जमीन और बैलों से क्यों बेदखल किया जाता है? पटवारी, दरोगा और कचहरी के कारकुन क्यों घूस लेते है? प्रजा को क्यों कष्ट देते है? क्यों ऊँचे अफसर गाँवों मे आकर किसानों की बहू-बेटियों की इज्जत खराब करते हैं? और उनकी इज्जत बचाने वालों को नगा करके कोड़ों से पीटते है? लेकिन क्या किया जाय, सबकी जबान बन्द है। आप तो चले जायँगे। सकट गाँव वालों को उठाना पड़ेगा। मनसुखा की हलचलों का नतीजा गाँव वाले आज तक भुगत रहे है। और न-मालूम कब तक भुगतते रहेंगे।"

चारण जयदेव की आँखों मे अब आँसू आ गए। मन मे कहने लगे—हाय-हाय, निर्बलता कितनी नीच है। मजबूरी कैसी घृणित है। यह मनुष्य को क्या-क्या करने के लिए मजबूर नहीं करती। कल गाँव पर सकट आ जायगा—इसलिए बेचारे किसान आपस मे मिल कर अपने उजडे हुए घर पर रो भी नहीं सकते। दुख-दर्द भी प्रकट नहीं कर सकते। इसे कहते हैं—मारे और न रोने दे। जब तक अन्याय की जड नहीं काटी जायगी—तब तक अराजकता का अन्त नहीं होगा। इन किसानों मे एकता और जागृति की सख्त जरूरत है।

जयदेव को वडी देर तक ध्यान-मग्न रहते देख—वे दोनों आदमी चुपचाप चले गए। जग्गू ने उठ कर कहा—"चलो मनसुखा दादा, भीतर चलो। कृष्णा माँ से बात करलो। समय बहुत थोडा है। तुम्हें जल्दी जाना भी तो है। कहीं किसी को मालूम हो गया तो नाहक में झंझट उठ खडा होगा। धनराज के वे दोनों नौकर वडी पैनी दृष्टि से तुम्हारी ओर देख रहे थे। सुन लिया न, सब गाँव का हाल। तुम या मैं पटवारी के लिए ऐसी जल्दबाजी नहीं करते तो शायद हम लोग अब तक कोई काम कर लिए होते। अब तो मामला बेढब हो गया है। सच तो यह है कि हम दोनों ने मिल कर गाँव पर यह सकट बुलाया है। हम वह गलती नही करते तो अच्छा था।"

"गई-गुजरी बातों के लिए पछतावा नहीं करते जग्गू। फिर वही बात मुझे तुम्हारे सामने क्यों दुहरानी पड रही है। अब तो देखना है कि आगे क्या हो? चलो, बहिन शायद प्रतीक्षा कर रही होंगी।"

"दोनों चलने लगे। रास्ते में जग्गू ने कहा—"कृष्णा माँ की हालत बहुत गिर गई है। मुझे तो, वडा डर लग रहा है। रामू को सम्भालने वाला कोई नहीं दीखता।"

"सब अपने आप ठीक हो जाया करता है जग्गू। तकलीफ तो इसे सहनी पडेगी, लेकिन बहादुरों की तरह सहेगा तो कल एक बडा आदमी बन जाएगा। मुझे उधर कितना समय लग जायेगा—पता नहीं—नहीं तो मैं इसे अपने ही पास रखता।

तुम्हारे भरोसे मैं इसे छोड़ना नहीं चाहता, क्योंकि तुम ठहरे बहुत भले आदमी, पैसा है नहीं—जमीन गिरवी रख दोगे। बिल्कुल सच कह रहा हूं। इसके लिए कोई दूसरा प्रबन्ध करना पड़ेगा। हाँ, याद आया, हमारे एक और भाई साहब हैं—नाम है भूखनजी। निकम्मे हैं। रहें। खर्च का मैं प्रबन्ध कर ही दूंगा। बस। उन्हें तो केवल देख भाल के लिए ही कहना है।'

दोनों आकर कृष्णा के पास खड़े हो गये। जयदेव के इशारे से जग्गू ने दरवाजा बन्द कर लिया।

कृष्णा बोली—"आज की बातों से तुम दुख मना रहे हो भैया। देखो तो, गाँव वालों को तुमने कितनी कठिनाइयों में डाल दिया। लेकिन इसमें तुम्हारा दोष भी क्या है? इन सबकी तो हिम्मत ही मर गई है। और हिम्मत भी अकेली क्या करे भैया। गाँव में एकता नहीं है, न कोई किसी की सुनता है, न मानता है। आपस के घर के बखेड़ों से इन्हें फुर्सत ही कहाँ। कचरू की जमीन पर जीनू जबर्दस्ती अपना हक्क जमाना चाहता है। यही नहीं, उसके खेतों में बागड़ खड़ी करना चाहता है। गाँव वालों के बैलों को पानी नहीं पीने देता उस तालाब में। उस दिन की बात है भैया, शहर से गुण्डों को ले आया और गाँव वालों को बुरी तरह पिटवाया। स्त्रियों की इज्जत उतरवाई। कहता है। सरहद बाँध कर ही रहूँगा। ठाकुर भी उसकी मदद करता है। न जाने क्या चक्कर है भैया। अरे तुम बैठो न, मैं तो कहना ही भूल गई।"

मनसुखा और जगू कृष्णा के पास जमीन पर बैठ गए। कृष्णा बोली - "आँखों से अब दीखता नहीं। जगू कहता है कि तुमने भेष ऐसा बनाया है कि सबको चक्कर में डाल दिया, भेष के साथ ही आवाज बदलना भी तुमने खूब सीख लिया। तो अब कहाँ हो, क्या कर रहे हो भैया ?'

कहाँ हूँ और क्या कर रहा हूँ यह बता कर तुम्हें अब अधिक थकाना नहीं चाहता। तुम्हें आराम चाहिए। और थोड़े ही में अपनी बात खतम करके इसी वक्त चल भी देना चाहता हूँ। क्योंकि आसार कुछ अच्छे नहीं दिखाई दे रहे हैं। अभी जो एक आदमी निकल गया है। मुझे उस पर शक हो रहा है। इसलिए अधिक ठहरना खतरनाक होगा। हाँ, मैं तुम्हारे चरणों की धूल लेने आया हूँ। और आखरी बिदा भी। क्योंकि खतरे की जिन्दगी का कोई भरोसा नहीं। हमारे सब के कुछ लोग सिंगापुर जा रहे हैं। दो-तीन साल वहाँ रह कर कुछ जरूरी क्षेत्र और चीजें तैयार करनी हैं। डाक्टर भी जा रहे हैं। जनता पत्र के सम्पादक और टाइम्स के विदेशी रिपोर्टर भी हमारे साथ जाएँगे। वहाँ के लोगों से बडी-बडी आशा जनक बातें हुई हैं। बस इतना ही। चरण-धूलि दो और माथे पर हाथ फेरो। दर्शन हो ही गए हैं। अब चला। हाँ, तुम्हें किसी प्रकार की चिन्ता नहीं करना है। रमेश तुम्हारी ही इच्छा के मुताबिक पढेगा। मैं सातवें समुद्र के तले में भी होऊँगा तो भी उसके लिए खर्च भेजने का प्रबन्ध करूँगा। निश्चय।"

मनसुखा और जग्गू कृष्णा के पास जमीन पर बैठ गए। कृष्णा बोली - "आँखों से अब दीखता नहीं। 'जग्गू कहता है कि तुमने भेष ऐसा बनाया है कि सबको चक्कर मे डाल दिया, भेष के साथ ही आवाज बदलना भी तुमने खूब सीख लिया। तो अब कहाँ हो, क्या कर रहे हो भैया ?'

कहाँ हूँ और क्या कर रहा हूँ यह बता कर तुम्हें अब अधिक थकाना नहीं चाहता। तुम्हें आराम चाहिए। और थोडे ही मे अपनी बात खतम करके इसी वक्त चल भी देना चाहता हूँ। क्योंकि आसार कुछ अच्छे नहीं दिखाई दे रहे है। अभी जो एक आदमी निकल गया है। मुझे उस पर शक हो रहा है। इसलिए अधिक ठहरना खतरनाक होगा। हा, मैं तुम्हारे चरणों की धूल लेने आया हूँ। और आखरी विदा भी। क्योंकि खतरे की जिन्दगी का कोई भरोसा नहीं। हमारे सघ के कुछ लोग सिगापुर जा रहे है। दो-तीन साल वहाँ रह कर कुछ जरूरी चेत्र और चीजें तैयार करनी है। डाक्टर भी जा रहे हैं। जनता पत्र के सम्पादक और टाइम्स के विदेशी रिपोर्टर भी हमारे साथ जाएंगे। वहाँ के लोगों से बडी-बडी आशा जनक बातें हुई है। बस इतना ही। चरण-धूलि दो और माथे पर हाथ फेरो। दर्शन हो ही गए है। अब चला। हाँ, तुम्हे किसी प्रकार की चिन्ता नहीं करना है। रमेश तुम्हारी ही इच्छा के मुताबिक पढेगा। मैं सातवें समुद्र के तले मे भी होऊँगा तो भी उसके लिए खर्च भेजने का प्रबन्ध करूँगा। निश्चय।"

गई। रामू अब तक सो रहा था। इस चीख ने उसे जगा कर चौंका दिया। नींद खुलने पर उसने जो कुछ देखा-उसे देख कर वह थर-थर काँपने लगा, जग्गू को ठाकुर के आदमियों ने बाँध लिया था। वे उसे खींच कर बाहर लिए जा रहे थे। फिर रामू ने अपनी माँ की ओर देखा तो वह एक जोर की चीख मार कर बोला—"हाय मेरी माँ, यह क्या हो गया, क्या इन राक्षसों ने तुम्हें भी मारा ?" कृष्णा के सिर को दोनों हाथों मे लेकर उसने फिर पूछा—"माँ, माँ, बोलती क्यों नहीं माँ, तुम्हें क्या हो गया है माँ, मेरी अच्छी माँ, मुझसे बोलो।" आधी रात के गहरे अन्धकार में रामू की आवाज दूर तक पहुँच गई थी—माँ, माँ, किन्तु 'माँ' के कान चिरकाल के लिए बन्द हो गए थे और आँख सदा के लिए पथरागई थीं।

७

नैना और तनसुखा के गाँव से निकल कर दो-तीन मील चलने के बाद ही घोर वर्षा आरम्भ होगई। वर्षा से बचने के लिए वे एक पेड के नीचे खडे होगये। तन सुखा केपास एक दुपट्टा और कुछ रुपयों को छोड़ कर कुछ भी नहीं था। नैना के पास एक पुटलिया थी—जिसमें क्या बधा था -इसका उसे छोड और किसी को पता नहीं था। वह एक साफ धोती पहने हुए थी। उसके नंगे थे पैर, मुँह पर उदासी और हृदय मे विद्रोह था।

लाट साहेब बोल रहा हो। ले चल, तू भी क्या याद करेगा कि किसी के सामने लाट साहबी बरती थी। बडा घमण्ड हो आया है बेटे को, जनता नहीं गडासिंह को " इतना कह कर गडासिंह नामक आदमी ने सटा-सटा चार-पॉच डण्डे जग्गू की पीठ और पुट्ठे तथा हाथों मे जमा दिए। जग्गू ने उन्हे चुपचाप सह लिया। वह सिर्फ इतना बोला—"मारने की कोई बात नहीं है। जमादार साहेब, आपको इससे कोई फायदा नहीं होगा।" इस पर जमादार और भी क्रोध मे भर आया। उसने लात, घूँसों, तमाचों और डण्डों से एक साथ काम लेना शुरू किया। दूसरे दो आदमी जग्गू को इधर से उधर और उधर से इधर धक्के देने लगे। जग्गू के मुँह से इस भारी मार के कारण एक जोर की चीख निकल पडी। उसका चीखना था कि तीनों आदमी फिर उस पर टूट पडे और धडाधड पीटने लगे। कृष्णा से यह सब देखा नहीं गया। उसने कहा—"अरे, ठाकुर के आदमी हो तो क्या आदमी नहीं हो? कैसा धडाधड बेरहमी से इसे मार रहे हो। क्या यही जनता की सेवा हो रही है? पहले यह तो बताओ कि आखिर इस गरीब आदमी का कसूर क्या है? सच है, इस दुनिया मे अब इन्सान, इन्सान नहीं रहे। छोड दो इसे मत मारो।" अशक्त होते हुए भी कृष्णा उठ कर खडी हो गई। और ठाकुर के आदमियों के हाथ रोकने का विफल प्रयास करने लगी। जमादार कुछ बोला नहीं—उसने कृष्णा को केवल जोर से एक झटका दिया। वह खम्भे से टकरा कर एक चीख के साथ गिर कर बेहोश हो

गई। रामू अब तक सो रहा था। इस चीख ने उसे जगा कर चौंका दिया। नींद खुलने पर उसने जो कुछ देखा–उसे देख कर वह थर-थर कॉपने लगा, जग्गू को ठाकुर के आदमियों ने बॉध लिया था। वे उसे खींच कर बाहर लिए जा रहे थे। फिर रामू ने अपनी मॉं की ओर देखा तो वह एक जोर की चीख मार कर बोला –"हाय मेरी मॉं, यह क्या हो गया, क्या इन राक्षसों ने तुम्हे भी मारा ?" कृष्णा के सिर को दोनों हाथों में लेकर उसने फिर पूछा—"मॉं, मॉं, बोलती क्यों नहीं मॉं, तुम्हे क्या हो गया है मॉं, मेरी अच्छी मॉं, मुझसे बोलो।" आधी रात के गहरे अन्धकार में रामू की आवाज दूर तक पहुॅच गई थी— मॉं, मा, किन्तु 'मॉं' के कान चिरकाल के लिए बन्द हो गए थे और ऑंखे सदा के लिए पथरागई थीं।

७

नैना और तनसुखा के गॉंव से निकल कर दो तीन मील चलने के बाद ही घोर वर्षा आरम्भ होगई। वर्षा से बचने के लिए वे एक पेड के नीचे खडे होगये। तन सुखा केपास एक दुपट्टा और कुछ रुपयों को छोड़ कर कुछ भी नहीं था। नैना के पास एक पुटलिया थी —जिसमे क्या बंधा था -इसका उसे छोड और किसी को पता नहीं था। वह एक साफ धोती पहने हुए थी। उसके नंगे थे पैर, मुँह पर उदासी और हृदय मे विद्रोह था।

बिजली कौंध रही थी—बादल गर्जना कर रहे थे—और पानी मूसलाधार होकर बरस रहा था। जिस पेड के नीचे वे दोनों खड थे-वह उन्हें बचाने मे अब असमर्थ होगया। दोनों के शरीर पर पत्तों द्वारा पानी धारावाहिक गिरने लगा। दोनों बुरी तरह से भीग गए। गीली धोती नैना के शरीर से चिपट गई थी। उसका छरहरा गोरा शरीर धोती मे से बाहर स्पष्ट रूप से झाँकने लगा। लेकिन नैना खडी-खडी न मालूम क्या सोच रही थी-जैसे इस वर्षा और दुनिया से बेखबर। उसके लम्बे-लम्बे बालों में से पानी चू-चू कर उसके कपोलों पर बह रहा था। दो चार बार अनजाने ही जब उसने अपने कपोलों से पानी पोंछ लिया—तो उसके दोनों गालों पर लाली दौड आई।

तनसुखा ने जब देखा कि नैना भीग कर ठण्ड मे काँप रही है—तो उसने सहानुभूति भरे शब्दों मे कहा – 'तुम्हारा शरीर ठड से काँप रहा है नना, कैसे असमय मे हम निकले, ओढ के लिए भी तो कुछ नहीं है।"

अपने आपको इस अवस्था मे पाकर नैना लजा गई। फिर तुरन्त बोली 'पानी रुकने पर सब ठीक हो जायगा। तुम क्यों इतना दुख मना रहे हो तनसुख।'

तनसुखा चिन्तायुक्त शब्दों मे बोला-'दुख की बात है नैना, मै कितना अभागा हूँ कि आज तुम्हे लेकर उस स्थान मे खडा हूँ-जहाँ—न आदमी है। न सुख है। न बैठने की जगह है। न पानी से बचने का साधन है। न ठौर है। न ठिकाना है। न घर है।

न द्वार है। न कपड़ा है। न ओढ़ना है। न बिछौना है। न खाना है। न गाँव है। न पहचान है।'

मैना मुस्करा दी—बोली—"कविता कर रहे हो तनसुख।" फिर गम्भीर होकर कहने लगी—"अपने मन को दुखी मत करो तनसुख, मैं ऐसे आदमी में रहना नहीं चाहती जो आदमी न हो। आज के आदमी आदमी कहाँ हैं? आदमी के दिल होता है। उसमें आत्मीयत होती है। विश्वास होता है। नीर-क्षीर के पहचानने की उसमें शक्ति होती है। वह अन्यायी नहीं होता। यहाँ के आदमी तुमने देखे हैं न — कैसी कैसी—सुनी बातों पर आँख मीच कर विश्वास कर लेते हैं। आज के आदमी का हंस उड़ गया तनसुख। मैं उससे कहीं यहाँ अच्छी हूँ। तुम्हारे बारे में मैं अधिक कुछ नहीं जानती। लेकिन तुम्हारी बातें आदमी की-सी मालूम पड़ती हैं। मैं उस आदमी के संग, बैठने की जगह, उसके बचाव के साधन, उसका ठौर ठिकाना और घर-बार, कपड़ा-लत्ता, ओढ़ना बिछौना खाना और उसके गाँव तथा उसकी पहचान से सख्त नफरत करती हूँ जिसके दिल में इन्सान का दिल नहीं। उससे कहीं लाख दर्जे अच्छा मैं यहीं पानी में डूबकर मर जाना ही पसन्द करूँगी। तुम्हें दुःख मनाने का कोई कारण नहीं निकलना चाहिए।"

"मैना, सुख दुःख का अनुभव करना आदमी का धर्म है। आज मेरा मन दुःख मान रहा है, तो मैं कैसे दुःख नहीं मनाऊँ? और चाहे कुछ मानो, लेकिन मैं यह मानने के लिए कतई तैयार

नहीं हूँ कि तुम जैसी सुभाषिनी और ईश्वर की सृष्टि की सबसे सुन्दर वस्तु–ऐसे कष्टों मे छोड दी जाओ। भला यह तो बताओ कि आदमी को आदमी बनने के लिए कष्ट उठाने की क्यों जरूरत? भगवान का कैसा न्याय है? जो आदमी के मायने मे सच्चा है वह कष्ट उठाता रहे आजन्म। और आदमी के मायने मे जो झूठा है—दुनिया का सुख और ऐश्वर्य्य वही लूटे। कैसी असमानता है। मै कहता हूँ आदमी को फिर अच्छा बनने की जरूरत क्यों? तुम्हें ठड लग रही है। मै व्यर्थ की बकझक कर रहा हूँ। बताओ मै क्या करूँ? इस समय तुम्हारे पास कैसा अभागा आदमी है। जो तुम्हें ठड से नहीं बचा सकता। एक फटा पुराना कम्बल तक हाथ नहीं। अकर्मण्य मनुष्य दुनिया मे सबसे बडा अभागा है। आज मेरी अकर्मण्यता ने मुझसे यह बदला लिया। मैं लज्जित हूँ एक नारी के समक्ष। नारी पुकार-पुकार कर रक्षा के लिए कह रही है। और एक मैं हूँ कि खडा खडा हाथ मल रहा हूँ। अकर्मण्यता का ही दूसरा नाम लाचारी और मजबूरी है। आज यदि मेरा जीवन पुरुषार्थी होता तो मै ईश्वर की भेंट का आदर कर पाता। लेकिन सुबह का भूला हुआ सध्या घर पहुचे तो वह भूला हुआ नहीं कहाता। अब कर्म ने मुझे ललकारा है। स्वयं भगवान ने मुझे कर्म का सन्देश दिया है। पुरुषार्थ करने का सकेत किया है। आज का डूबने वाला सूरज मेरे पिछले दिनों की आकर्मण्यता को लेकर डूबेगा–और कल का उगने वाला सूरज मेरी एक नई जिन्दगी लेकर उदित होगा। नैना, तुम विश्वास रखो,

नहीं हूँ कि तुम जैसी सुभाषिनी और ईश्वर की सृष्टि की सबसे सुन्दर वस्तु-ऐसे कष्टों मे छोड दी जाओ। भला यह तो बताओ कि आदमी को आदमी बनने के लिए कष्ट उठाने की क्यों जरूरत? भगवान का कैसा न्याय है? जो आदमी के मायने में सच्चा है वह कष्ट उठाता रहे आजन्म। और आदमी के मायने मे जो झूठा है—दुनिया का सुख और ऐश्वर्य्य वही लूटे। कैसी असमानता है। मैं कहता हूँ आदमी को फिर अच्छा बनने की जरूरत क्यों? तुम्हें ठड लग रही है। मैं व्यर्थ की बकझक कर रहा हूँ। बताओ मे क्या करूँ? इस समय तुम्हारे पास कैसा अभागा आदमी है। जो तुम्हें ठड से नहीं बचा सकता। एक फटा पुराना कम्बल तक हाथ नहीं। अकर्मण्य मनुष्य दुनिया मे सबसे बडा अभागा है। आज मेरी अकमरायता ने मुझसे यह बदला लिया। मैं लज्जित हूँ एक नारी के समक्ष। नारी पुकार-पुकार कर रक्षा के लिए कह रही है। और एक मैं हूँ कि खडा खडा हाथ मल रहा हूँ। अकर्मण्यता का ही दूसरा नाम लाचारी और मजबूरी है। आज यदि मेरा जीवन पुरुषार्थी होता तो मै ईश्वर की भेंट का आदर कर पाता। लेकिन सुबह का भूला हुआ सध्या घर पहुचे तो वह भूला हुआ नहीं कहाता। अब कर्म ने मुझे ललकारा है। स्वय भगवान ने मुझे कर्म का सन्देश दिया है। पुरुषार्थ करने का सकेत किया है। आज का डूबने वाला सूरज मेरे पिछले दिनों की आकर्मण्यता को लेकर डूबेगा—और कल का उगने वाला सूरज मेरी एक नई जिन्दगी लेकर उदित होगा। नेना, तुम विश्वास रखो,

यही तो कारण है कि दीनू की दादी मुझ से इतना जलती है। उसकी बातों का मैं फटाफट उत्तर दे देकर उन्हें काट जो देती हूँ। इन अनपढ़ बूढ़ियों की एक आदत होती है। वह यह कि सच हो या झूठ वे अपनी बातों को मना कर ही टलने की ठानती हैं। इस बुढ़िया में भी यही बात है। मेरी मा भी मुझसे इसलिए चिढ़ने लगी कि मैंने उसे साफ कह दिया कि मैं किसी पढे लिखे आदमी के साथ ब्याह करूँगी। रसीला पढा लिखा मिला था लेकिन बदचलन था। फिर माँ ने रमेश के साथ ब्याह करने की बात कही। लेकिन तुम ही कहो, वह कितना छोटा है।" कहने के लिए तो वह कह गई किन्तु ज्योंहि उसे मालूम हुआ कि वह अपने ब्याह के बारे में बात कह रही है तो वह एकदम चुप हो गई। शरमा कर उसनेअपना सिर नीचा कर लिया और चोरी की आँखों से यह देखने लगी कि तनसुखा उसकी तरफ देख तो नहीं रहा है। जब तनसुखा ने उसकी ओर देखा तो वह लाज के मारे गडी जाने लगी। उसने कहा "जाओ जी। मैं तुमसे नहीं बोलती, कवारी लडकियों के मुँह से ब्याह की बातें सुनते हो।" तनसखा ने नैना की ओर देखा। वह अपने दोनों हाथों से धोती खींच कर अपने आपको सम्पूर्ण ढकने का प्रयास कर रही थी।

लेकिन एकदम मोड़ कर जब नैना तनसखा से लिपट गई तो वह आश्चर्य चकित हो गया। ऐसा क्यों हुआ ? यह सोचने के पहले ही उसने देखा कि कुछ दूरी

मन नहीं लगा। कुछ दिनों तक मैंने एक पुस्तकालय में नौकरी की थी। वहाँ मेरा मन ग्रब लग गया था। इसका कारण यह था कि वहाँ के अध्यक्ष ने मुझे पढना-लिखना सिखा दिया था। पढने के बाद मैंने कई पोथियाँ बाँच डाली। अब मुझे ज्ञान हो गया है। मैं तो सच कहता हूँ। अनपढ और बैल बराबर होते हैं। गाँव वाले अनपढ गसटों से मैंने इसीलिए तो अधिक कहा सुनी नहीं की। क्योंकि मैं यह जानता था कि उन मूर्खों के दिमाग में कुछ भी नहीं घुसेगा, चाहे कोई कितना ही सिर फोड़ कर मर जाय। लेकिन तुम्हारी बातें सुनकर तो मैं हैरान हूँ। पढे लिखों से भी ये अधिक तथ्यवान है। क्या पढना-ि सीखा है तुमने ?'

"हा मैंने पढना सीखा है, लेकिन गाव के बहुत को यह मालूम है। दीनू की दादी को मालूम है। ह बूढे सन्यासी बाबा आया करते थे। वे महीनों ह डेरा डालकर रहते थे। खाली समय मे जब मै

यही तो कारण है कि टीनू की दादी मुझ से इतना जलती है। उसकी बातों का मैं फटाफट उत्तर दे देकर उन्हें काट जो देती हूँ। इन अनपढ बूढियों को एक आदत होती है। वह यह कि सच हो या झूठ वे अपनी बातों को मना कर ही टलने की ठानती हैं। इस बुढिया मे भी यही बात है। मेरी मा भी मुझसे इसलिए चिढने लगी कि मैंने उसे साफ कह दिया कि मैं किसी पढे लिखे आदमी के साथ ब्याह करूँगी। रसीला पढा लिखा मिला था लेकिन बदचलन था। फिर माँ ने रमेश के साथ ब्याह करने की बात कही। लेकिन तुम ही कहो वह कितना छोटा है।" कहने के लिए तो वह कह गई किन्तु ज्योंहि उसे मालूम हुआ कि वह अपने ब्याह के बारे में बात कह रही है तो वह एकदम चुप हो गई। शरमा कर उसने अपना सिर नीचा कर लिया और चोरी की आँखों से यह देखने लगी कि तनसुखा उसकी तरफ देख ता नहीं रहा है। जब तनसुखा ने उसकी ओर देखा तो वह लाज के मारे गडी जाने लगी। उसने कहा "आओ जी। मैं तुमसे नहीं बोलती, कुवारी लडकियों के मुँह से ब्याह की बातें सुनते हो।" तनसखा ने नैना की ओर देखा। वह अपने दोनों हाथों से धोती खींच कर अपने आपको सम्पूर्ण ढकने का प्रयास कर रही थी।

लेकिन एकदम दौड़ कर जब नैना तनसखा से लिपट गई तो वह आश्चर्य चकित हो गया। ऐसा क्यों हुआ? यह सोचने के पहले ही उसने देखा कि कुछ दूरी पर एक भुजग अपनी

मन नहीं लगा। कुछ दिनों तक मैंने एक पुस्तकालय में नौकरी की थी। वहां मेरा मन खूब लग गया था। इसका कारण यह था कि वहाँ के अध्यक्ष ने मुझे पढ़ना-लिखना सिखा दिया था। पढ़ने के बाद मैंने कई पोथियाँ बाँच डाली। अब मुझे ज्ञान हो गया है। मैं तो सच कहता हूँ। अनपढ़ और बैल बराबर होते हैं। गाँव वाले अनपढ़ खूसटों से मने इसीलिए तो अधिक कहा सुनी नहीं की। क्योंकि मैं यह जानता था कि उन मूर्खों के दिमाग मे कुछ भी नही घुसेगा, चाहे कोई कितना ही सिर फोड़ कर मर जाय। लेकिन तुम्हारी बातें सुनकर तो मै हैरान हूँ। पढ़े लिखों से भी ये अधिक तथ्यवान हैं। क्या पढ़ना लिखना सीखा है तुमने?"

"हा मैने पढ़ना सीखा है, लेकिन गाँव के बहुत कम लोगों को यह मालूम है। दीनू की दादी को मालूम है। हमारे यहा एक बूढ़े सन्यासी बाबा आया करते थे। वे महीनों हमारे ही यहाँ डेरा डालकर रहते थे। खाली समय मे जब मै काम काज से निपटती तो बाबा के पास बैठ जाती थी। पढ़ना लिखना सिखाने के साथ-साथ वे और भी बहुत सी ज्ञान की बातें बताया करते थे। कुछ दिन तो मेरी समझ मे कुछ भी नहीं आया। लेकिन धीरे-धीरे मुझे उनकी बातों मे बड़ा रस आने लगा और बाद मे तो मैं उनसे तरह तरह की बातें शका कर के पूछने लगी। कभी कभी मेरे प्रश्न को लेकर वे दिन दिन भर पोथी पतड़े उलटते पलटते रहते और साँझ को जब मैं उनके पास बैठती तो वे उनका समाधान करते।

यही तो कारण है कि टीनू की दादी मुझ से इतना जलती है। उसकी बातों का मैं फटाफट उत्तर दे देकर उन्हें काट जो देती हूँ। इन अनपढ बूढियों की एक आदत होती है। वह यह कि सच हो या झूठ वे अपनी बातों को मना कर ही टलने की ठानती हैं। इस बुढिया मे भी यही बात है। मेरी मा भी मुझसे इसलिए चिढने लगी कि मैने उसे साफ कह दिया कि मै किसी पढे लिखे आदमी के साथ ब्याह करूँगी। रसीला पढा लिखा मिला था लेकिन बदचलन था। फिर माँ ने रमेश के साथ ब्याह करने की बात कही। लेकिन तुम ही कहो, वह कितना छोटा है।" कहने के लिए तो वह कह गई किन्तु ज्योंहि उसे मालूम हुआ कि वह अपने ब्याह के बारे मे बात कह रही है तो वह एकदम चुप हो गई। शरमा कर उसनेअपना सिर नीचा कर लिया और चोरी की आँखों से यह देखने लगी कि तनसुखा उसकी तरफ देखता नहीं रहा है। जब तनसुखा ने उसकी ओर देखा तो वह लाज के मारे गड़ी जाने लगी। उसने कहा "जाओ जी। मैं तुमसे नहीं बोलती, कवारी लडकियों के मुँह से ब्याह की बातें सुनते हो।" तनसखा ने नैना की ओर देखा। वह अपने दोनों हाथों से धोती खींच कर अपने आपको सम्पूर्ण ढकने का प्रयास कर रही थी।

लेकिन एकदम दौड कर जब नैना तनसखा से लिपट गई तो वह आश्चर्य चकित हो गया। ऐसा क्यों हुआ ? यह सोचने से पहले ही उसने देखा कि कुछ दूरी पर एक भुजग अपनी

ठोढी ऊपर कर के जमीन से बहुत ऊँचा उठने की कोशिश कर रहा था। वह समझ गया। उसने हँस कर कहा—"अरे यह तो तुम्हारा तत्त्वज्ञान सुनने के लिए अपने कान खडे किए हुए है नैना। कुछ सुनाओ न बेचारे को।" इस पर नैना कुछ भी नहीं बोली। वह कुप कुपा कर और भी तनसुखा से सट गई। इस पर तनसुखा ने कहा—"जानवर है, इसे छेडना अच्छा नहीं। पानी रुक गया है। चलो, चल दें। सूर्यास्त के पहले ही स्टेशन पहुच जाना है। ग्यारह बजे रात को गाडी मिलेगी। स्टेशन पर जाकर कुछ खाना-पीना भी करना होगा। कहीं और बारिस आ गई तो बस। आओ चलें। बूँदा-बाँदी तो होती ही रहेगी। बारिस के दिन जो है।" फिर तनसुखा ने पेड़ से एक पतली डाल तोड़कर उसका लट्ठ बना लिया। और उसे कधे पर रख कर वह चलने लगा।

८

नैना के डिब्बे मे बहुत-सी जवान बूढ़ी स्त्रियाँ पहले से ही बैठी हुई थीं। किसी ने उसे बैठने की जगह नहीं दी। कुछ देर इधर-उधर जगह के लिये वह देखती रही। फिर चुपचाप अपनी गठरी को सम्हाले नीचे ही बैठ गई। कोने की लगभग चार पाँच सीटों पर दो बूढ़ी स्त्रियाँ अपना अन्डबन्ड सामान फैलाए बैठी-बैठी आपस मे बातें कर रहीं थीं। उनमे से प्रत्येक ने नैना पर

गहरी दृष्टि डाली। उसे सिर से पैर तक वे देखती ही रहीं—देखती ही रहीं। फिर एक ने दूसरे के कान में अपना मुँह लेजा कर कहा-"कुछ दाल में जरूर काला है। किसी के साथ भागकर जा रही है। जो विठाने आया था शायद वही इसको लिए जा रहा है।" दूसरी ने नैना को फिर सिर से पैर तक तौल कर देखा और कहा—"मालूम होता है क्वारी ही है। राम राम, कैसा जमाना आगया है, दुनिया में धर्म तो रहा ही नहीं। इन आज कल की छोकरियों ने तो आग बरसा रखी है। जरा-सी ब्याह शादी में देर हुई, बस भाग निकलीं घर से किसी के साथ। यह लड़की जरूर अपने माँ-बाप का मुँह काला करके जा रही है, तुम ठीक कहती हो बहिन।" तब पहली ने कहा —"जरा पता लेना चाहिए। डिब्बे की कुछ स्त्रियाँ अभी जाग रही हैं, जब सो जाएँगी तो इसे अपने पास बुला कर पता लेंगी।" इसके बाद वे पुन किन्हीं गम्भीर बातों में डूब गईं। साथ ही-साथ अपना कुछ सामान सिमेट कर नैना को विठाने के लिए स्थान भी बनाने लगीं। नैना के सामने ही एक युवती अर्ध-निद्रित अवस्था में सो रही थी। उसकी गोद में दो साल का एक बच्चा था। जिसके कुलबुलाने पर बार-बार आँखें खोल कर वह उसे देख लेती थी। जितनी बार उसने आँखें खोलीं, उतनी ही बार उसने नैना की ओर देखा। इस बार जब उसने आँखें खोलीं तो पूरे डिब्बे पर दृष्टि डाली। देखा कि दो बूढ़ियों को छोड कर सभी आराम से सो रहीं थीं। सोने में उन्होंने काफी-काफी स्थान घेर रखा था।

समझती है। मैं यहीं पर अच्छी हूँ। बैठी रहने दें। आपके पास बच्चा है। कष्ट होगा।"

"तुम्हारी जबान से मालूम होता है कि तुम पढ़ी लिखी हो। मैं तो समझी थी कि तुम किसी गाँव की हो। क्या तुम गांव से नहीं आ रही हो? अरे आओ न, यहा आकर बैठो। मुन्ना तो सो रहा है, इसे कोई कष्ट न होगा। न मुझे ही, बल्कि यहाँ बैठ कर बातें करेंगी तो दोनों को आनन्द आएगा। आओ।"

नैना ने अधिक जिद नहीं की। वह उठकर युवती के पास बैठ गई। फिर बोली—"आपका अनुमान ठीक है, मैं गाँव की हूँ और गाँव से ही आ रही हूँ। योंही थोडा सा पढ लिया है। इसलिए उसी अन्दाज से बोल भी लेती हूँ। वर्ना हमारे यहाँ की स्त्रियों का विशेष शृङ्गार तो निरक्षरता ही है। आप कहाँ से आ रही है? कहाँ जायेंगी? अकेली ही हैं क्या?"

"नहीं तो, अकेली नहीं हूँ। वे साथ हैं। पास के डिब्बे मे बैठे है। मर्दों के साथ बैठने मे मुझे अपनी स्वतन्त्रता मे बाधा मालूम होती है। इसलिये मैंने जनाना डिब्बा ही पसन्द किया। लम्बी सफर, गाडी मे तरह तरह के आदमी होते है। तरह-तरह की बातें करते हैं। लुच्चे लफगों की कमी नहीं। मै इन बातों से चिढ़ती हूँ। आज कल के आदमी तो औरतों की तरफ इस तरह से घूरते हैं, मानों हम कोई इस दुनिया के आदमी ही नहीं। मैंने उन्हे कह दिया कि मुझे तो जनाने डिब्बे मे ही बिठा दो। आखिर ये डिब्बे हैं किस लिये? इनका उपयोग अवश्य होना

चाहिए। वे बम्बई की एक मिल के आफिस मे काम करते है। मुझे लिवाने आए थे। अपनी माँ के यहाँ थी मैं। दो महीने से ज्यादा हो गया। क्या बताऊँ बहन, मर्दों को कभी छुट्टी नहीं देनी चाहिए। इसमे घर की बरबादी है। जब मैं उनके पास होती हूँ तो अस्सी रुपये महीने मे सब काम चला लेती हूँ। खाना, पीना, मुन्ना का दूध, उनके दोस्तों की चाय, आना-जाना, वार त्योहार-आदि के लिए भी उसी मे से बचा लेती हूँ। यह देखती हो मेरे गले की माला—इसके लिए रुपये मैंने उनसे नहीं लिए। यह खर्चे मे से तीन साल की बचत के रुपयों का फल है। दो सौ रुपयों मे बनी है। हम जैसे लोगों को बड़ा ही चौकन्ना होकर चलना पड़ता है। देखो न तीन महीने के लगभग मैं अपनी माँ के यहाँ रही। तुम सोचती होगी कि हमारे श्रीमान जी ने काफी रुपया बचा लिया होगा। क्योंकि खर्च इकहरा ही रह गया था। एक आदमी के खर्च से दो आदमी का खर्च अधिक होता है। मैं अपनी माँ के यहा रही, इस लिए उधर का खर्च भी बच गया होगा। लेकिन तुम सनोगी तो आश्चर्य करोगी। हमारे श्रीमान जी ने डेढ़ सौ रुपया महीना तो अपनी पूरी तनख्वाह का साफ कर दिया। ऊपर से मित्रों से कर्ज लेकर खर्च किया सो अलग। तुम कहोगी कि बड़े खर्चीले होंगे। लेकिन मैं कहूँगी कि नहीं, बेचारे मुझ से भी कजूस हैं। एक पैसा भी अधिक खर्च करते उनका मन हजार बार दुखता है। लेकिन जहाँ आदमी अकेला रह जाता है वहाँ खर्च तीन चार

गुना बढ़ जाता है। जितने खर्च में चार आदमी मिल कर एक घर मे आनन्द पूर्वक और अच्छा खाना खा लेते हैं— उतने ही खर्च मे केवल एक आदमी को होटल मे गन्दा बासी और बेमनका सड़ा गला खाना मिलता है। इन्हें देखकर मुझे तो बड़ी चिन्ता हो आई। अच्छे-भले छोड़ कर आई थी। अब देखती हूँ कि आधा ही शरीर रह गया है। पेट मे दर्द पाल लिया है। खाँसी हो गई है। बदहजमी ने पेट मे घर कर लिया है। होटल का खाना बड़ा खराब होता है। मेरे सामने बैठ कर चार फुलके खा लेते थे। अब दो फुलके रह रह कर खाते है। चार गुना खाने का खर्च और शरीर की यह दशा। फिर होटल का एक ढंगा खाना—मर्द को हमेशा कुछ-न-कुछ बदल कर खाने को चाहिए—इसलिए अलावा चाट का खर्च। होटल की चाय। घर मे स्त्री और बच्चे होने पर आफिस मे आने के बाद आदमी उनमे मन लगा लेता है। किन्तु जब घर मे कोई नहीं होता है तो बडी मुश्किल हो जाती है। मित्रों के यहाँ भी रोज रोज जाना अच्छा नहीं जान पड़ता। इसलिए मन-मार कर सिनेमा मे मन बहलाने जाना भी पड़ जाता है। एक सिनेमा का खर्च दूसरे वहाँ से आने जाने का खर्च। फिर मित्रों का साथ हुआ और लिहाज करना पडा तो डबल। इस प्रकार देखती हूँ कि घर मे स्त्री के न रहने पर आदमी को तरह-तरह के नए-नए अनिवार्य खर्च करने पड़ जाते हैं। इन तीन महीनों का इन्होंने जो खर्च बताया—मैं तो दंग रह गई। अब कान

पकड़ लिये। कभी बचपन नहीं करूँगी इन्हें छोड़ कर जाने का। और तो और धोबी का खर्च भी दूना हो गया। मैं छोटे मोटे कपड़े हाथ से धो लिया करती हूँ और इन्हें रुमाल भी धोबी को देना पड़ा।

सच तो मैं यह जानती हूँ ननी, कि घर का खर्च बढ़ाना और कम करना जितना अच्छा स्त्री जानती है, मर्द कभी नहीं समझ सकते। वे आदमी गलत ख्याल के हैं, जो यह सोचते हैं कि स्त्री को पास रखने में खर्चा अधिक बैठता है, वास्तव में उन्होंने स्त्री को अपने पास रख करके घर का खर्च देखा ही नहीं। घर में स्त्री जो रुपये खर्च कर दो आदमियों के लिये जितना सुन्दर और सन्तोषदायक प्रबन्ध कर सकती है उतना स्त्री से दूर रह कर आदमी आठ रुपये में भी नहीं कर सकता। और मैं तो कहती हूँ कि आदमी इन झंझटों में क्यों पड़े। घर की बातों की झगझट में वह अपनी शक्ति नष्ट कर देगा तो आफिस के काम में क्या मन और शक्ति लगावेगा ? खाक। घर की बात सोचेगा या आफिस की। घर की बात सोचने में हानि है। आफिस की बात सोचने में लाभ है। क्योंकि आफिस के बारे में वह जितना अधिक सोचेगा—आफिस को उतना अधिक लाभ होगा। और लाभ ही आफिस की उन्नति है। आफिस की उन्नति सब की उन्नति है। क्योंकि आफिस को फायदा होने पर ही तो आफिस के कर्मचारियों की तरक्की होती है। इसलिये मैं सब स्त्रियों के लिये यही कहूँगी कि वे घर-बार के किसी भी

झगडे से अपने पति को परेशान न करें। घर का प्रबन्ध वे खुद करें। मैं स्वय सब्जी लेने जाती हूँ। बाजार से आवश्यक सभी सामान खुद खरीद लाती हूँ। अरे जब वे बेचारे खर्च देते हैं तो व्यर्थ मे सभी बातों मे उन्हे घसीटने से क्या लाभ। एक तो आफिस की चिन्ता दूसरे घर की चिन्ता उन पर और। बेचारे आदमी ही नहीं हुए—बैल ही हुए। फिर हम हैं किस लिए? गृहिणी कहलाती है तो उसके पूर्ण अर्थ को स्पष्ट करना चाहिए। गृहिणी का अर्थ यही है कि घरवाली वह—जो अपने घर की किसी भी बात से अपने पति को तग न करे। मै बहुत-सी अपनी पडोसिन स्त्रियों को जानती हूँ। जो पति के आफिस से आते ही उन्हे घर के काम मे जोत देती हैं। बेचारा आदमी आफिस मे आया नहीं कि फरमान हुआ—घर मे सब्जी नहीं है, खाना नहीं बनेगा। चीनी नहीं है, चाय नहीं बनेगी। जलाने के लिये लकडी या कोयला नहीं है, खाना नहीं मिलेगा। बाजार जा रहे हो तो जरा मुन्ना को घुमाते लाना—और देखना, जरा एक धोती भी लेते आना, आज फलॉ जगह गई थी तो मुझे बडी शर्म आई। यहा तो एक भी गहना नहीं है। अमुक की स्त्री के उसके पति के कम कमाने पर भी यह गहना है और वह गहना है। दोपहर को धोबी आया था, पैसे मांग रहा था। बनिया भी पैसों के लिए कह गया है। आदमी बेचारे काम से परेशान होकर घर में आराम की उम्मीद लेकर आता है—और देखा, उसे कैसा आराम मिलता है। अब क्या दफ्तर मे काम करेगा

तबियत लगा कर वह आदमी जब कि सुबह और श्याम दोनों टाइम उसे घर के झंझटों में ही सिर खपाना पड़ता है। बहिन, आदमी की उन्नति में उसकी स्त्री का बड़ा हाथ है। यदि स्त्री चतुर हुई तो उसका पति अवश्य ही एक दिन बहुत बड़ी तरक्की कर सकता है। लो, मैं भी तुम्हारे सामने रामायण खोल कर बैठ गई। तुम भी मन में क्या कहती होगी कि अच्छी मिली जो अपनी ही कहे जा रही है, ये लो स्टेशन भी आगया।"

युवती के लेक्चर को लम्बा से लम्बा होता जाता देख कर वे दोनों वृद्धाएँ उस अवसर की खोज में सो गईं—जिसमें उन्होंने नैना को बुलाकर यह जानना तै किया था कि क्या वह दरअसल किसी के साथ भाग कर जारही है। स्टेशन आजाने पर भी उनकी नींद नहीं खुली।

रात का वक्त था। गाड़ी भूसावल स्टेशन पर रुकी हुई थी। तनसुख अपने डिब्बे में से दौड़कर उतरा और जनाने डिब्बे में नैना को देखने आया। नैना को अब तक जगती देख उसने बड़े ही प्यार से पूछा—"तुम्हें अभी तक नींद नहीं आई, क्या सोने को जगह नहीं मिली? यहाँ आराम न मिलता हो तो आगे के डिब्बे में चलो। मैं देख आया हूँ। वहाँ जगह है। तुम आराम से सो सकोगी। डर तो नहीं लगता? पानी लाऊँ। पिओगी।' पानी लाऊँ पिओगी, उसने कह तो दिया किन्तु वह तुरन्त शरमा गया। क्योंकि पानी वह लाता किसमें। उसके पास लोटा तो था ही नहीं। फिर उसने पूछा—"भूख लगी होगी तुम्हें, थोड़ी मिठाई ले

आऊँ ? क्या कहती हो चलती हो उस डिब्बे मे ?"

नैना ने अपनी गठरी से लोटा निकाल कर कहा—"प्यास तो लगी है। तुम्हें तकलीफ क्यों दूँ। मैं ही जाकर ले आऊँ। भूख नहीं लगी है। इस डिब्बे मे तकलीफ तो जरूर है, लेकिन वह—युवती की ओर सकेत करके—इनके साथ के सामने कुछ भी नहीं है। मैं तो यहीं बैठना पसन्द करूँगी। हाँ, अब डर नहीं लगता। तो मैं पानी ले आऊँ। तम अपने डिब्बे मे चले जाओ—मै वहीं पानी पहुँचा दूँगी।" तनसुखा ने नैना के हाथ से लोटा ले लिया, फिर बोला—"डिब्बे से उतरकर यह कहने नहीं आया हूँ कि तुम्हें प्यास लगी है - और उतर कर पानी पी लो और मुझे भी पिलाओ। मैं अभी लाए देता हूँ। गाडी से उतरना मत। नहीं चल देगी तो यहीं रह जाओगी। मै पानी लेकर अभी आया।" इतना कह कर तनसुखा नल की ओर पानी लेने चला गया।

नैना ने युवती की ओर मुडकर कहा 'जीजी, मुझे तुम्हारी बातें बहुत अच्छी लगती हैं। मैं तो सच कहती हूँ। भाग्य से ही इतने अच्छे लोगों का साथ होता है। यह अच्छा हुआ कि तुम भी बम्बई ही जा रही हो, साथ रहेगा। कहीं बीच मे ही उतर जातीं, तो मन बडा दुखी होता। आपके पतिदेव नहीं आए ?"

"आपके तो आगए।" कहकर युवती ने नैना को चुटकी भर-ली। "अब हमारे वे दिन गए कि जब नींद खुली, उठ बैठे। तुम्हारे पति देव बडे अधीर है जी। झट से दौड पडे। सोचा होगा कोई उठाकर न ले गया हो। वर्ना इतनी सुन्दर बहू इस जन्म में नहीं

मिलने की क्यों ?" उसने आँखें नचाकर पूछा।

"हटो, जी जी। तुम तो ऐसी मसखरी भी करती हो। मैं नहीं बोलूँगी।" नैना के मन में हिलोरें उठने लगीं।

युवती बोली "मालूम होता है, ब्याह अभी ही हुआ है। बहुत खुले हुए मालूम पड़ते हो दोनों और बहुत कम खुले हुए भी। क्या तुम भी बम्बई जारही हो।"

ब्याह के प्रश्न को टालने की गरज़ से नैना तुरन्त बोली—"हाँ बम्बई ही जा रहे हैं। तुम अपना पता बता दोगी, तो मैं तुम्हारे यहाँ रोज आया करूंगी।"

"मालूम होता है, तुम पहली बार बम्बई जा रही हो। अरे पगली, वहाँ रोज कोई भी किसी से नहीं मिल सकता। बम्बई इतना भारी शहर है कि एक मोहल्ले में रहने वाले लोग भी महीनों तक नहीं मिल पाते। क्या तुम्हारे पतिदेव ने यह नहीं बताया। वह लो, पानी भी आगया। बड़े भोले मालूम होते हैं तुम्हारे देवता। देखो तो कितनी हड़बड़ी से चले आरहे हैं। जैसे गाड़ी तुम्हें लिए जारही है—और वे यहीं छूटे रहे जारहे हैं।"

तनसुखा ने पानी का लोटा नैना को दे दिया। फिर कुछ पूछने की भूमिका बांधने के सिलसिले में कुछ देर खड़ा रहा। गाड़ी ने सीटी देदी। नैना बोली —"बस, पानी आगया, मुझे अब किसी चीज की जरूरत नहीं है। आप जाकर अपने डिब्बे में बैठ जाँय ?

पहली बार तनसुखा ने अपने जीवन में किसी स्त्री के मुँह से ऐसा 'आप' सुना। इस 'आप' में क्या भरा था, वह खोजने का

प्रयत्न करने लगा। उसके मन मे गुद-गुदी उठने लगी। नना ने उसे 'आप' कहा। उसने मन मे कहा—इस 'आप' को कहाँ रक्खूँ नेना। मै तो बावला हुआ जारहा हूँ। इस 'आप' मे तुमने क्या कहा है। क्या तुमने नहीं सुना कि मैने तुम्हे बहिन कहा है। उसे लगा जैसे बहिन कह कर वह नैना से दूर हो गया। सहानुभूति खो दी है। उसने अपने हृदय मे गहरे बैठ कर देखा। चोर बैठा है। समय की ताक मे है। लेकिन चाहे कुछ हो जाय। नैना के सामने यह कभी गिरेगा नहीं। बस, वह जैसा कहेगी, वैसा ही करेगा। वह देख रहा है कि अपना सम्पूर्ण हार रहा है। आज उसे बार-बार पछतावा हो रहा है कि क्यों नादानी की कि बहिन कह दिया नैना को। चाहे कुछ हो इस 'आप' मे नैना की ओर से नैना का भाई कदापि नहीं है। गाडी धडाधड जा रही थी। तनसुख के मन मे नाना भावनाएँ दौड रही थीं। उसे याद आ रहा था बार-बार नैना का वह प्यार भरा चेहरा और वे बडी-बडी आँखें जिन्होंने 'आप' मे न मालूम किस वस्तु को उढेल दिया था। उसकी इच्छा हुई पानी का लोटा देते समय उसकी उंगलियाँ काश नैना की ऊँगलियों का स्पर्श कर पातीं। लेकिन उसने यहाँ तुरन्त अपने आप को सावधान कर दिया—कहीं नैना का यह भाव न हुआ तो। कुछ भी हो उसकी ओर से नैना को कभी ऐसा आभास नहीं मिलेगा।

युवती का बच्चा जाग उठा था। पानी के लिये हठ कर बैठा। उसके पास पानी नहीं था। नैना के लोटे मे पानी अभी ज्यों का

रहीं भग था। उसने युवती से प्रार्थना की कि बच्चे को पानी पिला देने में यदि वह कोई हर्ज नहीं मानती तो पिला दे।

युवती ने कहा—'तुम्हारा संकेत शायद जात पांत की ओर है नैना। हमारे देश का यह दुर्भाग्य है कि यहां अनेकों जातियां-उपजातियां बनी हुई हैं। यहीं तक ही होता तो कोई बात नहीं थी। और देशों में भी ऐसा है। लेकिन जातियों की आड में छूआछूत जो घुसी हुई है उसने समाज को खोखला कर दिया है। लेकिन प्रसन्नता की बात है कि अब लोग जागरूक हो गए हैं। छूआछूत को बुरा मानने लगे हैं। मैं भी उनमें से हूँ। लाओ इसे पानी पिला दूं। लेकिन तुम प्यासी रह जाओगी।"

"मेरी बात भली कही तुमने। बच्चे से बढ़कर भला और क्या हो सकता है।" नैना ने कहा।

युवती बोली—"यह बात अच्छी तरह तो उस समय समझ में आएगी। जब नन्हा गोद में होगा।'

नैना की आंखों में प्यार भर आया। गालों पर लाली दौड़ आई। अपने शरीर को धोती से ढकने का प्रयास करके ओठों में मुस्कुराकर उसने कहा—"हटो जीजी, मैं नहीं बोलूँगी। दबते हुए आदमी को बारबार दबाना अच्छा नहीं लगता।"

युवती ने कहा—"दबने वाली चीज को ही तो बार-बार दबाया जाता है। और दबने पर ही अच्छा लगता है। क्यों है न? अच्छा लगता है न बताओ? दबने पर दबने वाले को अच्छा लगता है या दबाने वाले को, कुछ तो बोलो?"

"मे कुछ भी नहीं बोलूँगी। ऐसी बात कहोगी तो मै सो जाऊँगी, मुँह फेरकर।" नैना बोली।

"अभी तक कितनी वार मुह फेर कर सोई हो, जरा बताना। मुझे तो नहीं दीखता की एक वार भी सोई हो। देखूँ।" इतना कहकर युवती ने नैना की ठोडी पकड कर ऊँची की। नैना के रोम-रोम मे गुदगुदी हो आई। उसने युवती की गोद मे मुँह छिपाकर कहा—"जीजी, मे तुम्हारे हाथ जोडती हूँ।"

"देखो नैना, अब हम दोनों सखियाँ हो गई हैं। आपस में एक दूसरे की बात छिपाना पाप है। सखियाँ तो ऐसी बातें करती ही रहती है। इसमे लज्जा की क्या बात है।"

"तुम ठीक कहती हो जीजी, लेकिन मैं तुम्हे इससे पहले अपनी वडी वहिन मान चुकी हूँ। मै तुम्हे श्रद्धा करने लगी हूँ।"

"अच्छा तो यह बात है, तुम हो वडी चालाक। गुरु जी बना कर मुझसे तो सब कुछ ले लेना चाहती हो और खुद के पास देने के नाम से गुरु जी को दक्षिणा तक नहीं।"

"शिष्या ने तो अपने आप को सम्पूर्ण समर्पित कर दिया है गुरुदेव।"

"ना, ना, ना, बाबा—यह समर्पण-इत्यादि का झगडा वडा बेढब है। मुझे सब समर्पित कर दोगी तो—तुम्हारे पतिदेव बेचारे क्या करेंगे। केवल चलती गाडी में पानी ही पिलाना उनके भाग मे रहेगा क्या?"

६

कंधे पर हल रखे जग्गू अपने बैलों के पीछे पीछे जगल की ओर जा रहा था। सहसा उसे कुछ दूरी पर रोने की आवाज सुनाई दी। वह रुक गया। इधर उधर कान लगाकर सुनने लगा। जिधर से रोने की आवाज आरही थी, उधर मुड़ा। देखा कि एक झाडी की ओट मे बैठा-बैठा रामू रो रहा था। उसने पूछा—"क्यों रोते हो रामू, क्या बात है, मां की याद आगई? रोना नहीं चाहिए। क्योंकि अब रोने से फायदा नहीं है। नुकसान ही अधिक है। कोई और दुख हो तो मुझे बताओ भैया।'

अपनी मॉ के मरने के बाद रामू को पहिली बार ऐसे सहानुभूति पूर्ण शब्द सुनने को मिले। उसका हृदय और भी भर आया। अब वह जोर-जोर से ढॉढे मार-मार कर रोने लगा। जग्गू ने हल नीचे रख दिया। फिर रामू के पास जाकर उसे अपने हृदय से लगा कर बोला—"रोओ नहीं रामू। सबके मां बाप बैठे नहीं रहते। एक न एक दिन मरते ही हैं। तुम तो पढे-लिखे हो, तुम्हे समझाना हम जैसे अनपढ लोग क्या जानें? रोओ मत।"

रामू ने रोते-रोते कहा—"मुझे मां के मरने का इतना दुख नहीं है दादा-जितना कि मेरी पढाई छूटने का। मेरी परीक्षा के दिन बहुत ही पास पास आते जा रहे हैं और मामाजी मुझे

खाता है। लडका दिन भर काम करता है। पसे लाता है मेहनत मजदूरी करके। और उन पैसों को वह घर बैठे बैठे आराम से खाता है। उस कुँए के पास के पेड के नीचे दिन भर बैठा बैठा तम्बाकू फूँका करता है। आने जाने वाले आदमियों को अपने पास बिठा लेता है और घण्टों गाँव की बहू बेटियों की बातें करता रहता है। अरे उस दिन मै उधर से निकल गई, तुझे क्या कहूँ बेटा। गाँजे की बदबू से मेरी तो नाक फट गई। बातें सुनी तो कान खडे हो गए। मैं तो कहती हूँ यह भूखन इस लडके की जिन्दगी को धल मे मिला देगा। अ ह ह ह क्या क्या दुख नहीं उठाए उस बेचारी कृष्णा ने इस बच्चे के पीछे।" फिर जग्गू के और पास जाकर बोली—"जग्गू, इस लडके की आत्मा दुआ देगी तुझे बेटा, किसी तरह गाँव वालों को तो राजी कर ले—कि इसकी मजूरी के पैसे इसे ही मिला करें। इस बच्चे की सब की सब कमाई गाँजा-भँग मे ही उडती है रे।" और अधिक पास सरक कर- "बेटा तुझसे क्या कहूँ। एक बार तनसुखा के बारे मे मैने झूठ बोला है। पर अब झूठ नहीं बोलूँगी—कल भूखन ने रामी को आठ आने दिए और कहा—और जरूरत पडे तो और ले लेना। लेकिन कल उस तालाब की पाल पर जरूर मिलना। बोल तो बेटा। अरे इस अनाथ बच्चे की कमाई इस प्रकार बरबाद क्यों हो। यह गाँव वालों को क्यों होने देना चाहिए। कल मैं जरूर उधर जाऊँगी। इनका ऐसा भाण्डा फोडूँगी कि जन्म जन्म तक याद करेंगे—

जरा सोच तो बेटा। अरे बेचारा राम् तो पोथी पतडों के लिए तरसे और यह मुआ उसकी कमाई से पाप करे। मैं तो इसे कभी बरदाश्त नहीं करूँगी। कुछ भी हो बेटा राम् का पढना फिर लग जाए ऐसा काम करदो। मैं भी आज दीनू से कहूँगी। अरे यह लड़का तो पढने के लिए रोता है रोता बेचारा। किस बच्चे में हैं ऐसे गुण ? हमारे इन्हीं को देखो न पढने का नाम लेते ही माँ-बाप को मारने दौडते है। जब इसका पढने में मन लगता है तो इसका ढोल जरूर होना चाहिए। अरे अपने ही गाँव का नाम ऊँचा होगा। पढ-लिख कर पटवारी हो जायेगा तो हम लोगों को ही सुख मिलेगा। इतना दुःख उठाएगा तो सच कहती हूँ—यह बच्चा मर जायेगा। तुम जरूर कुछ करो। अरे, दुनिया में आकर बडे-बडे पाप किए हैं जग्गू। कुछ पुन्न भी करना चाहिए

अच्छा बेटा। जा रही हूँ। कृष्णा के उपकार तुम पर भी कुछ कम नहीं हैं। तुम्हारी घरवाली को वह नहीं समझाती तो आज तुम्हारा घर घर नहीं होता जग्गू। बच्चों का मुँह देखना भी नसीब नहीं होता। भूले तो नहीं हो न। मैं जानती हूँ, पैसों लत्तों से तुम उसकी मदद नहीं कर सकते। न सही। दौड धूप ही कर दो बच्चे के लिए। अच्छा तो मैं चली।' इतना कह कर मीनू की दादी झट पट चल दी।

जग्गू सोचने लगा। आदमी इतने नीच हो सकते हैं। क्यों मनसुखा ने इस गंदे आदमी के हाथ इस बच्चे को सौंपा है।

× × × ×

गाँव वालों ने जब देखा कि भूखन किसी भी तरह रामू को मदरसे भेजने पर राजी नहीं होता, तो वे एक एक करके उठ कर चलते बने। थोड़ी ही देर मे जब सब चले गए तो भूखन ने बीडी सुलगाई और पीने लगा। एकाएक उधर से रामी निकली। भूखन तुरन्त उठ कर उसके पीछे पीछे हो लिया।

रामी सन्नाटा बन्द भागी जारही थी। उतनी ही जल्दी मे दूसरे रास्ते से भूखन भी उसकी दिशा मे चल पडा। थोडी ही देर मे दोनों अलग अलग रास्तों से तालाब के पास वाली उस घनी झाडी मे अदृश्य हो गए।

तालाब की उस निर्जन पाल से बडी दूर जाकर रामी खडी हो गई। भूखन भी कटीले झाडों से कपडे फडवाता कूदता फाँदता, झख मारता उसके पास जा पहुँचा। बोला–"कहो जी! हैं न हम बात के पक्के, कैसे आगए।" इसका रामी ने कोई जवाब नहीं दिया। भूखन फिर बोला—"ओहो। नाराज हो गई। बोलती नहीं।" तब भी रामी कुछ नहीं बोली। भूखन बोला— 'समझ गया तुम क्यों नहीं बोलती हो। यह देखो।" इतना कह कर उसने अपनी जेब के पैसों को खनखनाया। अब रामी हिली। भूखन उसके अत्यन्त पास सट कर खडा हो गया, बोला—"अब भी भरोसा नहीं होता। अच्छा चार आने पहले ले लो। अब तो हँसो।" इस पर रामी बोली—"हँसने से क्या मिल जायगा। भूखन! मेरे हँसने से क्या तुम्हारा पेट भर जायगा।" और हँस कर उसने अपने पीले-पीले मैले लम्बे लम्बे दांत बाहर निकाल

दिय।हँसने से उसका चेहरा और भी विकृत हो गया। गालों पर अनेकों सल पड गए। लगता था जसे अमचूर धूप मे सूख-कर सिकुड रहे हों। शरीर से बदबू छूट रही थी। फिर भी माननी की तरह भूखन मे आकर्षण पैदा करने के लिहाज से बोली—"जाओ जी, तुम बडे वो हो। जरा भी सबर नहीं होता। झट से पीछे-पीछे हो लिए।"

"इस वखत जो मांगेगी सो मिल जायेगा रामी, मन काबू मे नहीं है।" भूखन अधीर भाषा मे बोला। आँखें लाल हो रहीं थीं। मानो नशे मे किसी का खून करने पर तुला हुआ हो। रामी खखार भर मुँह से बोली-"मन काबू मे नहीं है तो मै क्या करूँ ? क्या मैंने सब के मन काबू मे करने का ठेका ले लिया है। जिस को देखो वही कहता है मन काबू मे नहीं है रामी।" भूखन बे काबू हो चुका था। उसने जैसे ही रामी को हाथ पकड कर खींचने की कोशिश की, पीछे से सुनाई दिया 'खबरदार।" दोनों को जैस किसी ने आसमान से जमीन पर पटक दिया। दीनू की दादी खडी थी। भूखन को काटो तो खून नहीं। शरीर से पसीना बहन लगा। रामी अपनी ओढनी ठीक करके इधर-उधर देखने लगी कि किधर से भाग जाए। दीनू की दादी बोली—"खबरदार चुडैल जो भागने को कोशिश की, गाँव भर का तूने बिगाड दिया। अरे नीच अधबूढी हो गई। अब भी पाप की कमाई खाना नहीं छोडती। कितनों ही के तो घर खागई। अब भी अपना मुँह लप लपाती है। नीच, तुझे अपने सिर मे आए सफेद बालों की जरा

भी चिन्ता नहीं। डायन। तूने गाँव के किसी भी आदमी को नहीं छोड़ा, सब पर डोरे डाल चुकी है। बहुत दिनों से मैं तेरी फिकर मे थी। आज अब तेरा चालान करवाती हूँ इस गाँव से। और तू पापी! पराई औरत को पैसे देकर फुसलाता है। उस अनाथ बच्चे की कमाई से व्यभिचार करता है। तेरे रोम-रोम मे कीड़े पड़ें चाण्डाल! आज देख तो सही गाँव मे तेरी क्या दशा करवाती हूँ। वो हड्डियाँ तुड़वाऊँगी कि जिन्दगी भर याद करेगा। गावों मे कीड़े पड़ें और लोग देख-देख कर हँसें। चलो तुम दोनों चलो। हो लो मेरे आगे। तुम मे से एक को भी छोड़ना पाप है। बेचारे रामू की पढाई छुड़वा कर उसे तो भेजता है, खेतों में मजदूरी करने। और तू औरतों को पैसे चटा-चटा कर पाप-कर्म करता है। गाँव मे भला आदमी बनता है। आज सब निकालूँगी तेरा पाखण्डीपन, चल तो सही मुए।"

दोनों सिर नीचे किए सुनते रहे। एक भी उनमें से नहीं बोला। दीनू की दादी आगे बढ़ी। जमीन पर पड़ी हुई एक आडी टेढ़ी लकड़ी उठाई। दो तीन चार रामी के पुट्ठों पर खींच कर वह मारी की रामी हाय हाय कर उठी। उसके पैरों मे जा पड़ी। बोली—"दादी माँ! अब आज के पीछे कभी ऐसा पाप करते देखो तो मुझे जिन्दी जला देना, पर आज छोड़ दो अब कभी मैं ऐसा काम नहीं करूँगी। तुम्हारे चरणों की सौगंध खाती हूँ। मुझे बचालो। मेरा घरवाला सुनेगा तो चीर कर मेरे दो टुकड़े कर डालेगा। मेरे दोनों बच्चे बिलख कर मर जाएँगे।"

"तो ऐसा पहले ही सोचना था। क्या मर गई थी यहाँ आने के पहले और इस पापात्मा से आठ आने के पैसे ऐंठ कर पल्ले में बाँधने के पहले। अब मैं तुझे किसी भी तरह नहीं छोड़ूँगी चुड़ैल। आज मैं तुम दोनों को ही इस गाँव से निकलवा कर छोड़ूँगी। चल रे, मुए। आगे होकर लम्बा बनता चल।" इस पर रामी ने दीनू की दादी के दोनों पैर जोर से पकड़ लिए। बोली —"नहीं माँ, मैं यहीं मर जाऊँगी पर जाऊँगी नहीं। आज तो तुम्हें मुझे बचाना ही पड़ेगा।"

"अगर बचना ही है तो उठ, मेरी बात सुन।" दीनू की दादी बोली।

"एक नहीं एक हजार बात कहो माँ। मैं तुम्हारे पैरों में पड़ी पड़ी सुनूँगी।"

"तो सुन, तुझे पंचों में यह कहना पड़ेगा कि भूरान ने तेरे साथ जबरदस्ती करने की कोशिश की—और मैंने तुझे बचाया। मैं नहीं होती तो तेरा न मालूम क्या हाल होता। बस। इतना कह देना, बाकी की बात मैं सम्हाल लूँगी। इस नीच को बदनाम करके गाँव से निकालना है। उस अनाथ बच्चे को इसने बहुत तंग कर रखा है। आज मजा चखाती हूँ। यह भी जिन्दगी भर याद करेगा कि किसी से पाला पड़ा था।"

भूरान बुरी तरह फँसा था। वह थर थर काँपने लगा। मन में सोचा—यह बुढ़िया आज मेरा सत्यानाश करके ही रहेगी। रामी तो छूट रही है। इसे यह बचा भी लेगी। लेकिन मैं मर जाऊँगा।

जरा खुशामद करके ही देखलूँ। कोई रास्ता निकाल कर बचाले। वह भी उसके पैरों मे गिर पडा। बोला—"माँ, पाप जो हो गया है सो तो हो ही गया है। लेकिन आज तुम्हे वचन देता हूँ कि आगे अब जिन्दगी मे यह बात कभी नहीं होगी। मै तुम्हारे चरणों की सौगंध खाता हूँ।" दीनू की दादी अपने पैर बचा पीछे हट कर बोलीं—"चुप रह चाण्डाल। गंदे मुँह से मेरा नाम न ले। गाँव को गंदा करने वाले पापी। अब तेरा यहाँ कोई काम नहीं।"

इस पर भूखन गिड-गिडाया—"माँ। जब तुम इस पापिन को बचाने का रास्ता निकाल सकती हो तो—एक बार मुझे भी बचा सकती हो। मै भगवान को साची रखकर कहता हूँ कि अब ऐसे बुरे कर्म नहीं करूँगा-नहीं करूँगा-मुझे बदनामी से बचालो-इस बार सिर्फ इस बार। अब कभी ऐसा देखो तो मेरे मुँह मे गरम करके लोहा घुसेड देना।"

उस पर दीनू की दादी बोली—"मैं तुझे एक बात पर छोड सकती हूँ, बता, है मजूर?"

"अगर तुम इस बदनामी से बचाती हो तो मै आग मे कूदने के लिए भी तैयार हूँ। बोलो माँ। बताओ मै क्या करूँ।"

"कल से रामू को काम छुडाकर मदरसे मे पढने भेज। और देख कि उसकी परीक्षा होने तक तू उससे कोई काम न ले। कल से तू काम पर जा और उसके लिये कपड़ा, खाना और पोथी लाकर दे। बोल क्या कहता है।"

"तुम्हारी आज्ञा सर माथे पर मा। कल से रामू पढने जाएगा। मैं उसे कोई तकलीफ नहीं होने दूँगा।

१०

नौ वर्ष पुरानी तेल मे गदी टोपी को हटा कर गजी खोपडी को खुजलाते हुए—हेडमास्टर भुगाचरण जी ने अपने सहयोगी जगजीवन राम को बुलाकर कहा—'जगजीवन जी। इस बार तरक्की की कोई उम्मीद नहीं रही। बुरा हो रामू की मा की मौत का जो हमारी तरक्की को भी इस दुनिया से उठा लेगई।"

यह एक अपर प्राइमरी स्कूल था जहा चार दर्जे तक पढाई होती थी। दो मास्टर थे जो तीन तीन दर्जे पढाते थे। हेड मास्टर की तनख्वाह बीस रुपये थी जो चार वर्ष मे रामू के सात स्कूलों के बालकों मे प्रति नए अन्वल आने से बढ कर पच्चीस रुपये हो गई थी। जगजीवनराम सहायक अध्यापक थे जिन्हे तेरह रुपया महीना मिलता था और चार वर्षों मे रामू के अच्छे फल के कारण प्रति वर्ष बढ कर अठारह रुपये हो गये थे। दोनों अध्यापक इस कारण रामू को बहुत ही प्यार करते थे। कभी मारते नहीं और बड़े प्रेम से पढ़ाते थे। हर महीने बारी-बारी से दोनों अध्यापक अच्छी पढाई के उपलक्ष मे रामू को दो-दो अंगुल की पेन्सिल इनाम दिया करते थे। परीक्षा के दिनों में उसे अपने यहाँ ही रख लेते। घर-भर का काम करवाते, बर्तन मँजवाते, पानी

भरवाते, कपडे धुलवाते और घर साफ करवाते। बचे समय में अपने बच्चों को भी सौंप दिया करते। जिन्हें उसे खिलाना पडता। अ, ब और एक से लगा कर चार क्लासों को मिला कर छः जुमला दर्जों मे कोई पचास विद्यार्थी पढते थे। किन्तु इन्स्पेक्टर के दौरे के समय कुछ और छोटे-मोटे बालक-बालिकाओं को घेर-घार कर स्कूल में बिठा दिया जाता था, जिससे उपस्थिति बढी हुई प्रतीत होती। क्योंकि इन्स्पेक्टर कई बार धमकी दे चुके थे कि बालकों की उपस्थिति कम होने की सूरत मे स्कूल को किसी भी समय तोड दिया जा सकता है। लेकिन इधर रामू के बराबर अव्वल आने ने इन्स्पेक्टर को बहुत खुश कर दिया था। और दोनों अध्यापक उनके बड़े ही कृपा-पात्र होकर प्रति वर्ष तरक्की भी पाते रहते थे।

रामू के दो महीने गैरहाजिर रहने से दोनों अध्यापक बड़े ही चिन्तित हो उठे। एक तो उसका चौथे क्लास मे होना—दूसरे उसकी माता की मृत्यु—तीसरे स्कूल मे नहीं आना—यह उसके ऐन मौके पर हाजिर होने पर—अव्वल नम्बर न आ सकने मे शका उत्पन्न कर रहे थे। और अव्वल न आने पर अध्यापक महोदयों को तरक्की न मिलने का भी सवाल था। अतः हेडमास्टर बडे चिन्तित हो उठे और उन्होंने जगजीवनराम को बुला कर रामू के बारे मे बात छेडी।

जगजीवनराम बोले—"सचमुच, बड़ी चिन्ता का विषय है। यदि आप आज्ञा दें तो मैं रमेश को उसके गाँव जाकर देखूँ कि आखिर

बात क्या है ? उसकी माँ को मरे काफी समय हो गया। अब तो उसे स्कूल आना चाहिये। परीक्षा का समय भी निकटतम आता जा रहा है। चौथे दर्जे की पढ़ाई कब खतम करेगा ?'

सिर पर टोपी को जमाते हुए सुखचरण जी बोले—"इसी लिए मैंने आपको बुलाया है। मेरा ख्याल है कि आप उसके गाँव हो ही आएँ तो अच्छा है। यदि ऐसे लड़के को घर से खर्च देकर पढ़ाया जाय तो भी लाभ ही समझिये। देखिए न, इन चार वर्षों में कितनी तरक्की मिल गई। अच्छे अच्छे अध्यापक इस स्कूल में अपना तबादिला कराने में उत्सुक हो रहे हैं। ऐसे लड़के का मिलना तो सौभाग्य की बात है। स्कूल की नाक है नाक। देखा न, सैकड़ों लड़कों में हर साल पहला नम्बर लाता है। छाती बालिश्त भर फूल जाती है—जब इन्सपेक्टर साहेब खड़े होकर हमारे स्कूल का परीक्षा फल सुनाते हैं। मेरा ख्याल है— इस वक्त घड़ी में साढ़े दस बज रहे हैं। आप यहाँ से चल दें। साढ़े ग्यारह को पहुँच जायँगे। जाइए, तैयार हो जाइए—हाँ, कान पर से अपना जनेऊ तो उतारिये।"

जगजीवनराम शरमा गए। उन्होंने तुरन्त कान पर से जनेऊ उतार कर उसे कुर्ते के अन्दर कर लिया। फिर चोटी सहलाने लगे। इस पर सुखचरण जी बोले —"चलिए, छोड़िए, 'यह तो आपकी पुरानी आदत है। दिन दिन भर आप कान से जनेऊ नहीं उतारते हैं, यह मैंने अक्सर देखा है। लड़के भी मजाक बनाते हैं। लेकिन स्मरण रहे, इन्सपेक्टर साहेब जब स्कूल का

मुआयना करने आएँ, तो आप खबरदार रहें। उस वक्त कान पर जनेऊ टँगा रहना—बड़ी भारी असावधानी होगी। दूसरे आप कोट के बटन कभी नहीं लगाते। यह भी एटीक्वेट के बाहिर की बात है।" इतना कह कर प्रधान अध्यापक, स्वय अपने कोट के टूटे हुए बटन वाले छेद को खींच-खींच कर उसे ठीक करने का प्रयत्न करने लगे। लेकिन जब उन्होंने देखा कि जगजीवनराम उनकी उस क्रिया को बड़े ध्यान से देख रहे हैं, तो उन्होंने कहा-"देखिए आप यहीं देर लगा देंगे तो फिर गाँव पहुँचने मे बड़ी देर हो जायगी। सब लोग खेतों मे काम करने चले जाएँगे तो फिर बच्चे का पता लगाना कठिन हो जाएगा। आप तैयार होकर तुरन्त चल दीजिए।"

"बहुत अच्छा जी, मैं अभी चला।" कह कर जगजीवनराम तैयार होने चल दिए। पुराने कोट पर फटा डुपट्टा डाल हाथ मे छड़ी ले वह एक कोठरी में घुस कर ठपाठप की आवाज करने लगे। बात यह थी कि पोस्ट आफिस भी इसी स्कूल मे था। और जगजीवनराम के सुपुर्द इसका काम किया गया था। जिसके लिए इन्हे पाँच रुपये अलाउन्स मिलता था। दो बार डाक तैयार करते थे। एक सुबह और दूसरे शाम को। इस समय वे सुबह की डाक तैयार करने मे लग गए थे। जगजीवनराम बड़े सीधे आदमी थे। कभी-कभी वे चिट्ठियाँ भी स्वय बाँट आया करते थे।

देर होती देख हेड मास्टर साहेब को क्रोध आने लगा।

वे जगजीवनराम से उनका काम लेकर खुद करने का विचार करके पोस्ट आफिस के कमरे की ओर चले। लेकिन दो ही कदम चले थे कि दरवाजे में बगल में किताबें दबाए उन्हें रामू दिखाई दिया। वे उछल पड़े। उनके मुँह से जोर से निकल पड़ा—"आ गया, आ गया, जीनवराम जी रामू बेटा आ गया।" इतना कह कर उन्होंने रामू का हाथ पकड़ा और वे उसे पोस्ट आफिस के कमरे में जगजीवनराम को दिखाने ले गए। जगजीवनराम ने देखते ही कहा—"शाबाश बेटा रमेश। तुम आ गए बड़े बहादुर हो।" इसके बाद दोनों अध्यापकों ने बारी बारी से रामू को उसकी माँ के मरने पर दुःख न मनाने के लिए समझाया। माँ की याद में जब रामू के आँसू निकल आए तो दोनों मास्टरों ने बारी-बारी से उसके आँसू अपनी अपनी धोतियों से पोंछे। उसे चुप किया।

\+ \+ \+ \+

जगजीवनराम ने कुर्ते की बाँहें ऊपर चढा कर कहा—"रामू बेटा। जरा यह स्टूल तो यहाँ उठा लाओ। क्यों मास्टर साहेब—'सादा जीवन बिताओ' - यहाँ लगा दें? दरवाजे से घुसते ही दृष्टिगोचर होगा।"

जेब में से चश्मा निकाल उसे नासिकासीन कर हेड मास्टर सुखचरण जी बोले—"नहीं जगजीवन जी, यहाँ तो - "होई है जो राम रचि राखा, को करि तर्क बढावहिं शाखा' लगाना चाहिए। क्योंकि इस कील से 'तुलसीदास जी की तस्वीर टाँगी

जाएगी—केशव को मैंने भेजा है। लेकर आता ही होगा, उसके पिता से कह कर आया हूँ।"

"तो स्टूल फिर यहीं रखो बेटा रामू। क्यों साहब। यहाँ सामने कैसी रहेगी यह तख्ती ? 'सदा ऊँचे विचार रखो'—के पास।" हथौड़ा उठाते हुए जगजीवनराम सहायक अध्यापक ने पूछा।

"सुन्दर, अति सुन्दर, वाह। क्या कहने मास्टर साहेब! 'सादा जीवन बिताओ'—'सदा ऊँचे विचार रखो।' कैसा मेल बैठा है। क्या कहने, कितने सुन्दर अक्षर बने हैं।'

"अक्षर तो एक या दो क्या सभी तख्तियों के अति सुन्दर हैं। बहुत प्रसन्न होंगे इन्सपेक्टर साहेब इन्हे देख कर। अच्छा साहेब, तो, यह तो यह हुआ।' तख्ती को टाँग कर जगजीवनराम स्टूल से नीचे उतर आए।

इसके बाद रामू की सहायता से जगजीवनराम और सुखचरण जी ने स्कूल की सभी दीवारों को—'जा पर जाकेहु सत्य सनेहू, तेहि सो मिलहिं न कछु सन्देहू'—'कृष्णात् परम तत्व किमपि मह न जाने'—'सब जीवों पर दया करो'—'मुँह से कभी बुरे शब्द मत बोलो'—'दया धर्म का मूल है'—'लालच कभी मत करो'—'सदा सच बोलो'—'विनम्रता ही महान मनुष्यत्व है'—'साँच बरोबर तप नहीं, झूठ बरोबर पाप'—आदि अनेकों सुन्दर अक्षरों मे लिखी गई तख्तियों से—सजा दीं। स्कूल के प्रधान-द्वार पर बहुत बडे-बड़े अक्षरों मे 'सुस्वागतम्'

लगा दिया गया। स्कूल के बगीचे में जाने वाले मार्ग पर भी—"आनन्द विलास वाटिका"—टांग दिया गया।

दूसरे लड़कों ने स्कूल के अन्दर और बाहर तथा बगीचे में इधर से उधर तक रंग-बिरंगी कागज की लगियाँ तान दीं। स्कूल में चारों ओर उत्साह छा गया। दूर-दूर के विद्यार्थी जो परीक्षा में सम्मिलित होने आए थे इस बढ़िया सजावट को देखकर प्रसन्नता प्रकट करने लगे।

डाक्टर गुप्ता रोज ही इस स्कूल के सामने से होकर अस्पताल जाते थे। उनको आते देख सुखचरण जी हेडमास्टर ने जगजीवन राम से कहा—"मास्टर साहेब, डाक्टर साहेब आ रहे हैं—जरा उन्हें रोक कर सब दिखा दें तो कैसा रहे।"

'अति उत्तम। अति सुन्दर। अवश्य दिखाया जाय। आखिर हमने और लड़कों ने इतना परिश्रम किया है तो क्यों? वे आ गए, रोक लीजिए।"

दोनों मास्टरों ने आगे बढ़कर डाक्टर साहेब को नमस्कार किया। डाक्टर साहेब ने बड़ी ही मृदुल हँसी के साथ अध्यापक महोदयों के नमस्कार को अभिवादन करके पूछा—"ओ हो। आज तो आपने स्कूल की काया पलट ही कर दी। यहाँ से वहाँ तक नवीनता ही नवीनता। कितना नयनाभिराम दृश्य खड़ा कर दिया है आप लोगों ने। आज आने वाले हैं क्या इन्स्पेक्टर साहेब?"

"जी हाँ, आज तीन बजे की गाड़ी से आने वाले हैं। यदि

समय हो और कष्ट न हो तो जरा स्कूल के भीतर चलकर देख लें तो बड़ा सन्तोष होगा। बच्चों ने परिश्रम किया है। उनका उत्साह बढ़ जायगा।" सुखचरण जी हेडमास्टर ने कहा। जगजीवन राम ने भी आग्रह के साथ हां में हाँ मिलायी।

"अवश्य, अवश्य, मुझे ऐसे दृश्य देखने का बड़ा चाव है। हम भी अपने स्कूल को ऐसा ही सजाया करते थे। चलिए।"

भीतर पहुँच कर डाक्टर साहेब ने देखा तो आश्चर्य-चकित हो गए। बोले—"इतनी तख्तियों को छपाने में तो बड़ा खर्च पड़ा होगा। कितने सुन्दर-सुन्दर भावपूर्ण वाक्य चुने हैं आपने।"

"वाक्यों को आपने पसन्द किया, इसके लिए हम आपके अत्यन्त आभारी हैं। किन्तु ये तख्तियाँ छपाई नहीं गई हैं। हाथ से लिखी गई हैं।" सुखचरण जी बोले।

"ये तख्तियाँ हाथ से लिखी गई हैं? आश्चर्य महान आश्चर्य। छापे के अक्षरों को भी मात कर दिया। किसने लिखी हैं ये। आप में से किसी ने?"

"जी नहीं" जगजीवनराम अपने कुर्ते की बाहों को नीचे उतार कर और कानों को सम्हाल कर कि कहीं जनेऊ तो नहीं टँगा है—बोले—"रामू हमारे स्कूल के विद्यार्थी, दर्जा चार ने लिखी हैं।"

"जी हाँ" अपने कोट के बटन को ठीक करते हुए प्रधान अध्यापक सुखचरण जी बोले—"रामू ने—वही रामू जो यहा से

नील गाँव से रोज पढ़ने आता है—जिसके नमस्कार
ा को आपने बहुत पसन्द किया है। उस दिन बता रहे
आप।''

"रामू, वह रामू, उस रामू ने लिखी हैं ये तख्तियाँ?
। कितने सुन्दर अक्षर लिखता है यह बच्चा। जरा उसे
ने का कष्ट करेंगे आप?"

"जी अभी लीजिए।" जगजीवन राम स्कूल के बाहर
कल कर चिल्लाए—"रामू, ओ रामू, रामू बेटा, कहाँ हो
? अरे केशव। जरा बगीचे में से रामू को तो भेजना।
ल्दी से, दौड़ कर।'

रामू वहीं से चिल्लाया—"जी पंडित जी।'

"अरे बेटा दौड़कर जरा इधर तो आ।" जगजीवनराम
कर चिल्लाए।

रामू दौड़कर जगजीवनराम के पास आ पहुंचा। उन्होंने
सके गले के बटन ठीक करके कहा—"डाक्टर साहब बुला
हे हैं तुझे। हेडमास्टर साहब भी भीतर हैं। जरा झुककर
नमस्कार करना, है।"

रामू 'जी' कहकर जगजीवनराम के पीछे पीछे डाक्टर
साहब के सामने जा पहुचा। उसने झुककर प्रणाम किया।

डाक्टर साहब ने रामू को अपनी ओर खींच कर उसकी
पीठ थपथपाई, फिर बोले—"रामू। तुम रोज नमस्कार करते हो
मुझे अपने गाँव से आते हुए। मुझे बहुत अच्छे लगते हो तुम।

लेकिन यह देख कर तो बेटा मैं अत्यन्त ही प्रसन्न हो रहा हू कि तुम्हारे अक्षर इतने सुन्दर हैं ।" तख्तियों की ओर डाक्टर साहेब ने सकेत किया।

इतनी प्रसशा उसने अब तक अपने जीवन मे कभी नहीं सुनी थी। गांव के लोगों के सामने उसकी इन अच्छाइयों का कोई भी मूल्य नहीं था। डाक्टर साहेब और मास्टर साहेब की इतनी बड़ी कृपा के बदले उसकी आखों से आँसू निकल आए।

डाक्टर साहेब ने उसका मुँह ऊपर उठाया तो वे दग रह गए। बोले—"अरे! तू तो रोता है बेटा—हसना चाहिये-प्रसन्न होना चाहिए तुझे तो, हम तेरी प्रसशा कर रहे हैं।"

सुखचरण जी बड़े ही आर्द्र होकर बोले—'डाक्टर साहेब, यह बच्चा अनाथ हो गया है। दो तीन महीने हुए—इसके परिवार मे केवल इसकी माँ थी, सो भी चल बसी। जिन लोगों के आश्रित है—वे इसे रात दिन कष्ट देते हैं। बड़ा ही दुःखी है यह बच्चा। इसकी सम्हाल करने वाला कोई भी नहीं है। मुझे बड़ा दुःख होता है इसे देख कर। इसीलिए तो इसको सामने देखकर तुरन्त मैं अपना मुँह फेर लेता हू। इसका दुःखी चेहरा मुझ से देखा ही नहीं जाता।"

डाक्टर साहेब ने देखा कि सुखचरण जी की आँखों से अश्रु बह रहे थे। जगजीवनराम भी दूसरी ओर मुँह फेर कर आँसू पोंछ रहे थे। बोले—"इतने प्यारे और होनहार बच्चे के यह हाल है। डाक्टर साहेब क्या किया जाए?'

डाक्टर साहब ने रामू को अपने से और भी चिपका लिया। बोले—"हाय! हाय! क्या हो गया था रामू तेरी माँ को।"

रामू का हृदय भर आया। वह बोल नहीं सका। सुबकियाँ भरने लगा।

"गाँवों की बीमारियों का क्या पूछते हैं डाक्टर साहब—आप तो भली-भाँति जानते हैं। उनकी बीमारियों की कौन चिन्ता करता है।' सुगनचरण जी ने कहा।

"सो सही है। कतई सही है। मैंने लिखा था कि मुझे गाँवों का दौरा करने का मौका दिया जाय तो जवाब मिला कि प्रान्त मे डाक्टरों की कमी है। अत आपकी माग पर अभी बिचार नहीं किया जा सकता। क्या करें? लाचारी है। नहीं तो मुझे तो इन धरती के देवताओं की सेवा करने का बड़ा चाव है। हाँ, तो बेटा रामू। बोलो तुम्हें क्या चाहिए।"

रामू शायद अवसर की ताक मे था। उसने डाक्टर साहब के पैर पकड़ लिए। उनके पैरों पर टपाटप आसू गिरने लगे। उनका भी हृदय भर आया। उन्होंने रामू को उठाया फिर उसके मुँह को दोनों हाथों से दबाकर बोले—"रोओ नहीं बेटा। सबके माता-पिता जिन्दे नहीं रहते। बोलो, बोलो तुम क्या चाहते हो। हमे बताओ?"

रामू ने झुककर फिर डाक्टर साहब के पैर पकड़ लिए। फिर रोता हुआ बोला—'मैं. . मैं बस और [illegible] चाहता। मैं आगे पढ़ना चाहता हू।" और इसके बाद [illegible] जोर [illegible]

रोन लगा कि उसे चुप करना मुश्किल हो गया।

डाक्टर साहेब ने कहा—"तुम आगे पढना चाहते हो तो तुम्हें कौन रोक सकता है बोलो बेटा, हम तुम्हारी बात से बहुत प्रसन्न हुए। लो, खुश हो लो—हम तुम्हारी आगे की पढाई का प्रबन्ध करेंगे।"

तीन वर्ष में राम् काफी समझदार हो गया। डाक्टर गुप्ता और अध्यापक वासुदेव जी के सरक्षण और सहयोग से उसने जो कुछ पाया वह अमूल्य अकथनीय और उसकी परिस्थिति के लडके के भाग्य से परे की बात थी। आगे हाई-स्कूल की पढाई के लिये डाक्टर गुप्ता ने उसका प्रबन्ध शहर में कर दिया था।

रमेश ने चलते वक्त अध्यापक वासुदेव जी के चरण छूकर उनसे आशीर्वाद माँगा। वासुदेव जी ने उसे अपने हृदय से लगाते हुए कहा—"रमेशचन्द्र, अब तक सैकड़ों विद्यार्थी मुझसे इस प्रकार विदा लेकर चले गए हैं। उनमे से बहुत से बडे आदमी बन गए। तुम भी बहुत बडे आदमी बनो। यही मेरा आशीर्वाद है। वैसे आते-जाते और पत्र-द्वारा तुम मुझे अवश्य अपनी बातों से अवगत कराते रहोगे। मैं भी तुम्हें समयानुसार आवश्यक बातें बताता रहूँगा। लेकिन इस समय मैं कई बार कही गई यही बात फिर दुहराऊँगा बेटा कि पढ-लिखकर अच्छी नौकरी पा लेना, ब्याह कर लेना, बच्चे पैदा कर लेना, समाज मे प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर लेना और सम्पत्ति प्राप्त कर लेना, मनवाञ्छित वस्तु प्राप्त कर लेना और आराम से जीवन बिताना

यही सब कुछ नहीं है। इसके अतिरिक्त तुम जैसे इस देश के लाखों नवजवानों के लिए एक और भी बहुत बड़ा काम है। बेटा, आज देश के लाखों श्रमिक और लाखों किसान नवजवानों और विदेशी सत्ता द्वारा दिन दिन, पल-पल सताए जा रहे हैं। उनका खून चूस-चूस कर पिया जा रहा है। जिस प्रकार रुई को बिनौले से अलग करने वाली मशीन बिना देखे और बिना जाने रुई को पीसती रहती है। उसी प्रकार ये पूँजीपति श्रमिकों को हीनता, निर्ममता, स्वार्थपरता और उन्हें मटियामेट कर देने वाली चक्की से दिन-रात पीसते रहते हैं। उनकी सम्पूर्ण शक्ति का वे अपने लिए मनमाना उपयोग करते हैं बच्चों, नवयुवकों और प्रौढ़ आदमी और स्त्रियों के जीवन के उत्तमोत्तम भाग का वे अपने लिए सर्वश्रेष्ठ उपयोग कर लेते हैं, किन्तु उसके बदले वे उन्हें भर पेट भोजन तक नहीं देते। दिन-भर और रात भर वे अपने कारखानों में उनसे जी तोड़ परिश्रम तो लेते हैं, लेकिन उनके आराम का कतई ख्याल नहीं रखते। सन्ध्या समय चमचमाती कार में सुन्दर रमणी के साथ बैठा हुआ पूँजीपति क्लबों में मन बहलाने, सिनेमा में मनोरंजन करने और बारों में शराब पीने तो निकल जाता है लेकिन जिसकी कमाई पर वह पूँजीपति बना हुआ है उनको वह बेमौत मरने के लिए छोड़ देता है। न उनके आराम का ख्याल उसे है, न उनके बच्चों के स्वास्थ्य का। रहने के लिए उन्हें एक गंदा सा कमरा सौंप दिया जाता है जिसमें घुट घुट कर वे अपने प्राण देते रहते हैं। न उनके बच्चों की पढ़ाई का

कोई प्रबन्ध है। न उनके खेलने-कूदने और उनके मानसिक विकास का कोई साधन ही उपलब्ध रहता है। तरह-तरह की बीमारियाँ उनको घेरे रहती है। उनके लिए वे न कोई अस्पताल बनाते है न किसी डाक्टर को ही उनकी देख भाल के लिए रखते है। लाखों श्रमिक अनपढ़ है। उन्हें पढाने लिखाने का कोई प्रबन्ध नहीं किया जाता। न वे करना ही चाहते है। क्योंकि इसमे वे अपना नुकसान समझते है। उनका खयाल है, पढा-लिखा मजदूर अधिक वेतन माँगेगा और तरह-तरह की सुविधाओं की माँग करेगा। इस प्रकार के व्यक्तियों को आश्रय देना वे आस्तीन का साँप पालना समझते है। यदि कोई व्यक्ति मजदूरों के लिए बोलता है, उनके अधिकारों के लिए लड़ता है, उनके अधिकारों की माँग करता है, तो वे उसे पहले तो साम, दाम, दण्ड, भेद से काबू मे करने की कोशिश करते हैं। और जब वे सब प्रकार से उसे अपने वश मे नहीं कर पाते, तो उसे देश द्रोही, बागी और मजदूरों का दुश्मन आदि नाना नामों से बदनाम कर के श्रमिकों-द्वारा ही अपमानित करवा-करवा कर उसे दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंकते है। यही नहीं, ये पूँजीपति उस व्यक्ति की जान तक के भूखे हो जाते हैं और उसे इस दुनिया से नेस्त नाबूद कर के ही रहते है। तुम शहर जा रहे हो वहाँ के कारखानों मे काम करने वाले मजदूरों को जब तुम देखोगे तो तुम्हे पता चलेगा कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह सौवाँ अंश भी नहीं है। भैया, ये पूँजीपति बडी ही राक्षस

प्रवृत्ति के होते हैं। मनुष्य को जानवर बनाकर उससे काम लेने की तरकीबें खूब जानते हैं। अस्पताल, पुस्तकालय, स्कूल तथा खेल-कूद के साधनों को मजदूरों के लिए जुटाने में उनके पास दिक्कतों के बड़े बड़े कारण मौजूद हैं किन्तु ताड़ी, गांजा, भंग और शराब तथा चरित्र-भ्रष्ट करने वाली चीजों को इन्होंने वहाँ खूब जुटा रखा है। शराब और ताड़ी तथा अन्य बुरे व्यसनों में पड़ जाने वाला मजदूर अपने मनुष्यत्व को खो देता है। नशा कर के वह बेटियों की इज्जत पर हाथ डालता है। वेश्याओं में जाने लगता है। मार पीट करता है। गन्दा रहता है। गाली गलौज करता है, और भी न करने के कर्म करता है। ऐसा मनुष्य ज्ञान शून्य हो जाता है। जानवर हो जाता है। दिन भर कारखाने में काम करने के बाद रात को बद-फैली करता है। बद-फैली नशा और अन्य बुरे व्यसनों में फँसा आदमी किसी भी तरह पैसा पैदा करने की धुन में रहता है। और कारखानों से जब उसे पैसे मिलते हैं तो वह मशीन की तरह उनमें जुट जाता है। सब पूँजीपति श्रमिक के जीवन को ऐसा ही बनाए रखते हैं। क्योंकि वह अपना भला इसी में समझता है। देखा न, अपने लाभ के लिए मनुष्य को जानवर तक बनाने पर उतारू हो जाता है यह वर्ग। देश के अगणित व्यक्तियों की जब ऐसी मनोवृत्ति है तो बेटा सोचो, तुम जैसे नवजवान जब श्रमिकों को सीधे रास्ते पर नलाओगे और उन्हें आदमी बनाने पर कमर नहीं कसोगे तो हमारे देश का बेड़ा पार कैसे हो सकेगा ?

किसानों की बात। इससे तुम भली-भाँति परिचित हो ही। वहाँ भी न स्कूल है। न अस्पताल है। न पुस्तकालय है। न जीवन है। न जाग्रति है। किसान अपनी सारी उम्र अपने कंधे पर हल ढोता रहता है। बैलों के साथ सिर फोड़ता रहता है। लेकिन उसे कभी सुख नसीब नहीं। कमा कर वह दुनिया को खिलाता है। अन्न पैदा कर के देश के लाखों आदमियों का पेट पालता है। लेकिन खुद भूखों मरता है। नगा रहता है। वह और उसकी स्त्री और उसके बाल-बच्चे अन्न को तरसते हैं। कपड़ों को रोते हैं। आराम की जिन्दगी की कामना करते हैं। लेकिन उन्हें इनमें से एक भी सुलभ नहीं। क्यों? फसल आई नहीं कि सरकार उसकी छाती पर चढ़कर लगान वसूल कर लेती है। बनिया दस रुपए के हजार रुपए करके उसका घर, उसकी जमीन, उसके बैल और उसकी स्त्री के गहने तक यदि हुए तो नीलाम करवा लेता है। इन लोगों को अपने पैसों से काम। सरकार को लगान मिल गई। बस। फिर चाहे किसान के घर में बीज न हो, उसके लिए खाने को अन्न न हो, पहनने के लिए कपड़े न हों, उसे इससे कोई मतलब ही नहीं। और बनियों का तो कहना ही क्या? जिनकी जिन्दगी ही दूसरों का हड़प कर अपना पेट भरना है—उनसे मनुष्यत्व की उम्मीद करना बेकार है। पर बेटा, उनकी इन आदतों का भी सुधारना है। उन्हें भी मनुष्यता सिखाना है। मनुष्य की तरह रहना बताना है। उन्हें भी आदमी का मोल बताना है।

हमारा देश भारतवर्ष एक गरीब देश है। यहाँ की गरीबी दुनिया के लिए उदाहरण है। यह देश के लिए कलंक है। इसे जड़ से खोद फैंकने का प्रत्येक नवयुवक को बीड़ा उठाना है। यही तो देश की सच्ची सेवा है। यदि प्रत्येक नवयुवक प्रण कर ले कि वह अपने देश के दो आदमियों को आदमी बनाने में अपना जीवन लगा देगा तो बेटा, हमारे देश की दशा सुधरने में चन्द दिन ही लगेंगे। देश के लीडरों पर निर्भर रहना व्यर्थ है। वे केवल मार्ग प्रदर्शन ही कर सकते हैं। उनके पास इन बातों पर अमल करने का समय नहीं। और फिर सच्चे नेता तो उँगली पर भी गिने जाने लायक नहीं—फिर उनसे इतनी भारी आशा रखना तो उनके साथ अन्याय ही समझना चाहिए। चाहिए तो यह कि प्रत्येक युवक अपने आप को नेता समझे। नेता का अर्थ कहीं गलत मत लगाना। नेता मैं उसी को कहूँगा जो स्वयं सत्पथ पर चलता हो। जिसने अपने लिए जनता की सेवा ही एक मार्ग चुन लिया हो। सच्चे मायने में नेता एक सच्चा सेवक है। उसे अपने आपको जनता का अगुआ नहीं मानना चाहिए। उसे यह समझना चाहिए कि वह जनता का एक अनन्य सेवक है, उसका शिर-मौर नहीं। जो लोग अपने आपको नेता के अर्थ में जनता का शिर-मौर मानते हैं वे पथ-भ्रष्ट होते हैं। थोड़े ही दिनों में जनता उन पर से विश्वास खो बैठती है। यदि जनता को यह सिखाने की जरूरत पड़े कि उसे अपने आपकी बलि देना है तो जनता के सेवक को

अपने आपकी बलि देना चाहिए । आज हमारे देश के माने हुए नेता गण जेलों को ही अपना घर समझते है। इसका कारण यही है कि वे जनता को यह बताना चाहते हैं कि अन्याय से लडने के लिए जेल बुरी जगह नहीं है। वह मंदिर है। यदि प्रत्येक नवजवान यह सोच ले तो मैं फिर कहता हू बेटा कि आज जो विदेशी हमारे देश मे अपना जाल फैलाये बठे हैं, वे तुम दबाकर तुरन्त ही यहाँ से पलायन कर जॉय।

एक बात और। आज तुम देश की दशा देख ही रहे हो। मै क्लास मे तुम लोगों को समाचार पत्रों की घटनाओं के बारे मे सुनाया करता हूँ। कितने दु ख की बात है कि इस देश की मिट्टी मे पैदा हुए और इसी मिट्टी मे मिल जाने वाले हिन्दू और मुसलमान आपस मे खून की होली खेलते रहते है। इन विदेशियों के आने के पहले, तुमने इतिहास पढा है बताओ कब हुए थे मन्दिर और मस्जिद पर झगडे। कब हुए थे पाकिस्तान और अखण्ड हिन्दुस्तान पर झगडे ? यह सब इन्हीं गोरी जातियों की करामात है। यह राजनीति है बेटा, राजनीति बडी ही रहस्यपूर्ण होती है। इन्होंने कभी हिन्दुओं को मुसलमानों के विरुद्ध भडकाया और कभी मुसलमानों को हिन्दुओं के विरुद्ध। कभी हिन्दुओं को मस्जिद के पास मन्दिर बॉधने के लिए उकसाया। कभी मुसलमानों को मंदिर के पास मस्जिद बॉधने के लिए। मन्दिर और मस्जिद मे यों भेद डाला। आपस मे भाई-भाई को लडा दिया। हमारी इस कम

जोरी से फायदा उठा कर हम संसार में बदनाम कर दिया।

राजनीति एक दुहरी चाल है। इसी लिए तो कहता हूँ बेटा, जब तक देश का एक एक नवजवान साफ मन से अपने-आपको मातृभूमि के अर्पित न कर देगा, तब तक यह सब होता ही रहेगा। और भविष्य में शायद इससे और भी भयकर रूप हो। यह विदेशी सत्ता का ही प्रताप है। जब तक यह रहेगी और जब तक इसे टुकडखोर मिलते रहेंगे, देश में यह अन्याय और उपद्रव होता ही रहेगा। और उग्र रूप से होता रहेगा। गाडी का समय होता आया। अब मैं तुम्हारा अधिक समय नहीं लूँगा। मैं तुमसे यही कहूँगा कि अन्याय के लिए लडो, जहाँ अन्याय होता हो, वहाँ जीना पाप समझो। या तो उसकी जड खोद कर फेंक दो, या खुद मिट जाओ। भारत माता का हृदय तभी शान्त होगा। और तभी देश में शान्ति कायम हो सकेगी। तभी देश धन धान्य से परिपूर्ण होगा। तभी यहाँ के सूर, तुलसी, मीरा, राम, कृष्ण, गीता, रामायण, कुरान और गाँधी का सम्मान हो सकेगा। तभी संसार इनको मानेगा। वर्ना इनको तरफ देख कर प्रत्येक परराष्ट्र का व्यक्ति मुँह बना कर कहेगा—ऊँह, गुलाम देश के व्यक्ति, गुलाम देश के ग्रन्थ। इनमें गुलामी ही भरी होगी। क्योंकि इनका देश गुलामी की जजीरों को अभी तक नहीं तोड सका। न छुओ इन्हें, न परखो इन्हें, वर्ना छूत लग जायगी। कहीं गुलामी न चिपट जाय, छी-छी'। सुनने में यह बात कैसी अपमानजनक है। लेकिन इसे इस रूप में देखने पर

ही हमारी नसों मे खून दौडेगा। तभी हमारा खून खौलेगा। तो बेटा, तुम जाओ। ईश्वर तुम्हें सद्बुद्धि दे। खूब पढो खूब लिखो और देश के काम आओ। हाँ, डाक्टर गुप्ता को कभी मत भूलना। यही तुम्हारे माता और यही तुम्हारे पिता हैं। इन्हीं के चरणों के प्रताप से तुम इस लायक हुए हो कि तुम्हें इतनी बातें सीखने समझने और सुनने का अवसर मिला। याद रखो चरित्र इस दुनिया मे सब से बडी वस्तु है। इसे खोना अपने आपको खो देना है। शहरों मे बडे-बडे प्रलोभन मिलते हैं। बाहरी तडक-भडक, सौन्दर्य और न जाने क्या-क्या मिलता है। तुम्हे भी मिलेगा। लेकिन उसमे भूलना मत। अपने ध्येय को सदा समक्ष रखना। अपना स्वार्थ निकालने के लिए लोग सदा चिकनी-चुपडी बातें किया करते हैं, हितैषी बनते है। उनसे बचना और सदा खुश रहना। अभ्यास मे मन लगाना। जाओ। मेरा आशीर्वाद सदा ही तुम्हारे साथ है। और रहेगा। जब तक तुम अपने ध्येय पर सच्चे हो।

रमेश ने पुन अध्यापक वासुदेव जी को प्रणाम किया। फिर बोला—"गुरुदेव, गलती करना मनुष्य का स्वभाव है—इसका अर्थ यह नहीं कि वह जानबूझ कर गलती-पर-गलती करता रहे। यह आपने बताया है—लेकिन मनुष्य-स्वभावानुसार भविष्य में यदि गलती मुझसे भी हो जाय तो उसे आप सदा की तरह प्यार की नजरों से देखेंगे यह मुझे पूर्ण आशा है। लेकिन आपके चरणों की सौगन्ध लेकर कहता हूँ कि यह जीवन दुखियों के प्रति अर्पित

है—अन्याय की जड खोदने के लिए है। आप आशीर्वाद दें कि समय इसका परिचय देने की मुझे सामर्थ्य दे।' फिर डाक्टर गुप्ता के चरणों मे झुक कर उसने कहा "पिता जी। आप आशीर्वाद दें कि मुझे गुरुदेव-द्वारा बताए गए और मेरे द्वारा किए गए प्रण को निभाने की पूर्ण शक्ति मिले। मेरे रग रग मे आपका अन्न-जल समाया हुआ है। मैं उसे सार्थक करने मे अपने प्राणों को होम दूँगा।'

डाक्टर साहेब बोले—"रमेश, मुझे तुमसे यही उम्मीद है। मैं और कुछ नहीं कहूँगा। शहर मे भाई साहेब के यहाँ तुम्हें कोई कष्ट न होगा। तुम उन्हे प्रसन्न कर लोगे। मुझे पूरी आशा है तुमसे। जाओ।"

११

बम्बई पहुँच कर तनसुखा ने उसी पुस्तकाल मे नौकरी करली जहाँ वह पहले कभी नौकर होकर रहा था। प्रमादवश या अज्ञानता वश उस समय तनसुखा मगलदास को नहीं पहचान सका था। इसका एक कारण यह भी था कि मगलदास ने उस समय उसे अपनी देश सेवा की गुप्त हल-चलों से अवगत कराना ठीक नहीं समझा था। क्योंकि जब भी कभी उन्होंने उसके सामने देश भक्ति, राष्ट्र सेवा इत्यादि का जिक्र किया—तनसुखा ने उस ओर न रुचि दिखाई और न उत्साह ही। उसमे समझ और

शिक्षा का अभाव समझकर मंगलदास ने कुछ समय के लिए उस के सामने ऐसी बातें करना छोड दीं। इसके बजाय उन्होंने उसे और भी जोर-शोर-से पढाना लिखाना प्रारम्भ कर दिया। लेकिन ज्यों ही तनसुखा का अध्ययन गंभीर हुआ—और मंगलदास ने उसके सामने फिर अपने मन की बातें रखने की सोची—तनसुखा अपनी मनमौजी आदत के अनुसार वहां से भाग खडा हुआ। तनसुखा में एक बात बहुत अच्छी थी—जिसकी वजह से मंगलदास उसे जी से चाहते थे। वह यह कि उसे कितना ही कठिन-से-कठिन काम दिया जाता—वह चुटकियों में कर डालता। कैसा भी काम उससे लिया जाता—वह कभी नहीं घबराता था। न होने का काम यदि उसे ठीक प्रकार से समझा दिया जाता तो फिर उसमें कभी चूक नहीं होने देता। जरूरत थी उससे काम लेने वाले की। अपने मन से वह कुछ भी करना नहीं चाहता था। मंगलदास एक ही आदमी थे। बालू में से तेल निकाल लेना उनका काम था। वे उसे एक अच्छा देश-भक्त बनाने की ठान चुके थे। अब, जब वह उनके फिर से हाथ लग गया तो उन्होंने उस पर अपना पुराना मंत्र फिर चलाया। जब उन्होंने देखा कि उनका परिश्रम सफल हो रहा था तो वे उसके पीछे पड गये। और कुछ ही समय में तनसुखा मंगलदास का दाहिना हाथ बन गया।

एक दिन तनसुखा को इतने जोर का बुखार चढा कि वह बेहोश हो गया। नैना बहुत ही घबरा उठी। आँखों में आँसू बहने

लगे। क्या करे और क्या न करे इसी सोच में कभी इधर और कभी उधर घूमने लगी। फिर तनसुखा के बिस्तर के पास आकर उसके माथे पर हाथ रखा। गरम तवे की तरह जल रहा था। चिन्ता के मारे उसका दम घुटने लगा। माथे पर हाथ रखकर वह सोचने लगी—हाय अब क्या करूं? कहां जाऊँ? किसे बुलाऊं? किसे सहायता के लिये पुकारूं? कौन मेरी आवाज पर दौडने के लिये बैठा हुआ है? आखिर जी कड़ा करके उसने पुस्तकालय के नौकर को पुकारा। नौकर आकर सामने खड़ा हो गया तो वह बोली—"बन्नू भैया! जरा अपने बाबू जी को तो बुलादो। ये तो मुँह से भी नहीं बोलते। बहुत ही जोर का बुखार चढा है। बेहोश है। बुला तो दो भैया उन्हें।"

बन्नू चला गया, लेकिन लौट कर नहीं आया। देर होती देख नैना फूट-फूट कर रोने लगी। उसने मन में कहा—सच है—दुनिया में मेरी तरह सब फालतू तो नहीं बैठे हुए हैं। सबके पीछे अपना-अपना काम लगा हुआ है। कौन किसकी परवाह करने लगा। इतने बड़े शहर में बिना जान पहचान के कौन किसे पूछता है। बिना जान पहचान के ही क्यों—शहर के जान पहचान वाले भी तो बेदर्द होते हैं। उन्हें किसी की चिन्ता क्यों होने लगी। हाय राम। मैं अब क्या करूँ? लेकिन मंगलदास तो ऐसे नहीं हैं।

इतने ही में मंगलदास डाक्टर राय के साथ आ धमके' बोले—' मुझे देर तो नहीं हुई नैना। बन्नू ने कहा कि तनसुख

को बहोशी है तो ऐसी हालत में मैंने व्यर्थ समय खोना ठीक नहीं समझा। तुरन्त डाक्टर साहेब को लिवाने दौड पड़ा। कागजात फैले हुए थे। चन्द्र को वहीं बिठा आया हूँ। उन्हें सिमेट लूंगा तो उसे यहीं रहने को भज दूँगा। हाँ, क्या हाल हैं डाक्टर साहेब तनसुख पे, बताइयेगा जरा ? दो दिन हुए मैंने एक काम से इन्हें भेज दिया था। आज वर्षा में भीगते-भीगते आए हैं हजरत। मेरे ख्याल से सर्दी लग गई होगी।'

नाडी देख कर डाक्टर ने स्टेथोस्कोप से उसके फेफड़ों की जॉच की—फिर बोले—"आप ठीक कहते हैं, बडे जोर की ठड बैठी है। लगता है कपडे शरीर पर ही सूखाए हैं। मालूम होता है चार पॉच रोज से सोए भी नहीं हैं। कमजोर बहुत हो गए हैं। लेकिन डर की कोई बात नहीं। मै दवा दे रहा हूँ। थोड़ी ही देर मे सब ठीक हो जायगा। बेहोशी तो यों जाती है। सध्या को मुझे इनकी हालत की रिपोर्ट भेज दीजियेगा। इस दवा के बाद तो मेरे आने की भी जरूरत नहीं पडेगी। इतना कह कर बेग मे से उन्होंने चार छोटी-छोटी कागज की पुड़िया निकाल कर मंगलदास के हाथ में थमा दी—फिर बोले—'आध-आध घण्टे मे गरम पानी के साथ दीजिएगा। हवा से बचाइये। भूख लगे तो दूध दें दें—चा माँगें तो चा, उसमे तुलसी के पत्त डालना न भूलें। अच्छा तो मैं चला।"

डाक्टर बेग उठा कर चलते बने। मंगलदास डाक्टर को दरवाजे तक पहुँचाने गए। लौट कर बोले-"अब डरने की कोई

बात नहीं है। जरा-जरा सी बात में तुम बहुत घबरा जाती हो मैना। अभी तो तुम्हें बड़े बड़े काम करने हैं। इतने ही में हार जाओगी तो, बस हो चुकी देश सेवा। अपने मन को स्वस्थ रखो। तनसुखा को अभी होश आए जाता है। कुछ नहीं हुआ है—डाक्टर ने कहा न कि ठेस लग गई है बस। क्या बताए ? किसी काम को करने के लिए इन हजरत से कहना ऐसी आफत मोल लेना है। अपने शरीर की चिन्ता करना तो इस भले आदमी ने जैसे सीखा ही नहीं। खैर। तुम इन्हीं के पास बैठो। देखना बेहोशी में उखाड़े न होने पावें। हवा लगने का डर है। तो अब तुम निश्चिन्त हो जाओ। मैं चलता हूं। कागजों को सम्हाल लेता हूँ तो नौकर का भेज दूँ। यहीं रहेगा। जरूरत के वक्त काम लेना उससे।" इतना कहकर मगलदास पुस्तकालय में घुस गए।

मगलदास और डाक्टर के आने तथा तनसुखा को दवाई इत्यादि मिलने से मैना को बहुत बड़ा सन्तोष मिला। वह तन सुखा के होश में आने की तीव्र प्रतीक्षा करने लगी। कुछ देर इधर-उधर करने के बाद उसने तनसुखा का सिर अपनी गोद में उठा लिया। फिर उसे धीरे धीरे दबाने लगी। एकाएक उसकी दृष्टि तनसुखा के चेहरे पर जाकर रुक गई। उसने देख कर मन में कहा—कितना विशाल ललाट है। कितने सुन्दर घुँघराले बाल हैं। ओठों के ऊपर मूँछों की कतार कितनी सुहावनी है। भावावेश में अनजाने ही उसने तनसुखा के मूँछों पर अपनी पतली-पतली अँगुलियाँ फिरा दीं। अँगुलियों के मूँछों से लगते

ही नैना के सारे शरीर में जैसे विद्युत लहर दौड़ गई। उसका सारा शरीर गुदगुदा उठा। वह झिझक कर उठ बैठी। तनमुख का सिर पूर्ववत तकिए के सहारे हो गया। नैना दूर जाकर खड़ी हो गई। फिर सोचने लगी—कौन कहता है कि इनका जन्म किसी गाव में हुआ है। शहर के कितने ही लोगों से यह सुन्दर है हृष्ट-पुष्ट हैं। बलवान है। एक ही लाठी से भैंस का दम निकल गया। कितने स्वच्छन्द थे ये तब वहाँ? और आज, जैसे चारों ओर से जवाबदारियाँ इन्हीं पर हैं। कितनी चिन्ता करते हैं ये मेरी? कभी धोती, कभी साडी, कभी ब्लाउज का कपडा, कभी चूडिया, कभी बिन्दी, कभी क्या, कभी क्या, पैसे हाथ में आए कि कुछ-न-कुछ लाते ही रहते हैं। लगता है जैसे मेरे सुख के सिवा और कुछ सोचते ही नहीं। वह पुन तनसुख के सिरहाने के पास जाकर जमीन में बैठ गई। फिर उसके सिर को अपने दोनों हाथों से दबाने लगी। इस बार उसने भगवान से प्रार्थना की—"हे दीन बन्धो। इन्हे जल्दी अच्छा करदो। मेरे कारण इनको इतना कष्ट न उठाने दो।"

लगभग आधी रात का समय होने आया। इसी बीच कई बार मगलदास आकर तनसुख की तबियत के बारे में पूछ कर और कुछ देर बैठकर चले गये। नैना की आँख नहीं लगी। जैसे उसकी नींद उड़ गई। एकाएक तनसुख के शरीर में सचालन हुआ। नैना प्रसन्न हो गई। जैसे उसे न मालूम कौन-सा खजाना मिल गया। उसके मुँह से निकल पडा—"हे ईश्वर। तुम्हे

प्रसन्नयों धन्यवाद । कितने अच्छे हैं मगलदास । कितन अच्छे है डाक्टर । कितनी अच्छी है दवा । अहा । इन्हे होश आ गया ।" यह तनसुखा के और भी पास खिसक आई । करवट बदल कर तनसुखा कुछ दूर पड़ा रहा । फिर चित लेट गया । कुछ देर इस प्रकार पड़े रहने के बाद उसने आंखें खोली । नैना की आखों मे प्रसन्नता के अश्रु झलक आए । उसने धीमी आवाज मे मीठास भर कर उतावले पन से पूछा–"पानी पियेंगे ? लाऊं ? पिलाऊँ ?" तनसुखा ने हां का भाव दर्शाया । नैना दौड़ कर एक गिलास में गरम पानी ले आई । उसने तनसुखा की पीठ मे हाथ लगा कर उसे बैठने का सा रूप देकर बोली—"मैं पानी लाई हूँ , मुँह खोलो , पीलो पानी ।" तनसुखा ने मुँह खोल दिया । पानी पीते-पीते उसे अनुभव हुआ कि उसकी पीठ मे नैना के कोमल-कोमल हाथों का सहारा है । उसका कन्धा नैना के वक्षस्थलों को छू रहा है । उसके शरीर मे एक मीठी लहर दौड़ पड़ी । नैना को जब खयाल हुआ कि उसका वक्षस्थल तनसुखा के कन्धे से लग रहा है तो उसे जैसे एक झटका लगा । लजाकर तुरन्त दूर होने के लिए उसने तनसुखा को पानी पिलाने के बाद पूर्ववत लिटाना चाहा । तनसुखा ने शायद नैना के मन की बात ताडली । उसने डरते डरते कहा—'कोई हर्ज न हो तो जरा मुझे ऐसे ही बिठाए रखो नैना , लेटे लेटे थक गया हूँ ।' नैना भी शायद तनसुखा के मन की बात ताड़ गई । उसने कहा— 'बैठने की शक्ति आप में तनिक भी नहीं है । लेट जाइए । बैठने से तो आप और थक जाएँगे ।

हवा लगने का डर है ।' इतना कह कर वह उसे लिटाने लगी। लटते-लेटते तनमुखा ने नैना का हाथ अपने हाथ में ले लिया। नैना ने हाथ नहीं छुड़ाया। दोनों के शरीर में कम्पन होने लगा। तनमुखा कुछ सावधान होकर बोला—"यह क्या हो रहा है नैना ? क्या ऐसा होना ठीक है ?" नैना चुप रही। वह लजा रही थी। तनसुखा फिर बोला - "जवाब नहीं देती नैना । कुछ अनचाहा हो रहा है ।"

नैना अब की बार बोली —"आप मेरे लिये इतना कष्ट उठा रहे हैं। क्या इस बीमारी में भी आप अपनी सेवा मुझे नहीं करने देंगे ?"

तनसुखा बोला —"तो तुम नाराज तो नहीं हो ?"

नैना ने अपनी आँखे उठाकर तनसुखा की ओर देखा। दोनों आँखों-ही-आँखों में कुछ देर देखते रहे। फिर नैना ने लजाकर अपनी आखें नीची करली। तनसुखा ने फिर पूछा—' मेरी बात का उत्तर नही दिया नैना ?"

नैना नीचा सिर किए हुए ही बोली—' इसमे नाराजी की क्या बात है ? मैं खुद जो आपकी सेवा करना चाहती हूँ ।"

तनसुखा ने फिर नैना के दोनों हाथ अपन हाथों म ले लिए। नैना ने इन्कार नहीं किया। बल्कि उसने अपने आपको तनसुखा को समर्पित करते हुए कहा—"आपको अधिकार है।"

+ + + +

सध्या के आठ बजे का समय होगा। मगलदास और तन

सुखा यम्बई शहर से दूर जगल की ओर सपाटे से जा रहे थे।
एकाएक मगलदास बोले—"तनसुख , आज मैं तुम्हे एक ऐसे
स्थान पर लिये जा रहा हूँ—जहा तुम कल तक वहाँ जाने के
योग्य नहीं समझे जाते थे। तुमने देखा होगा पिछले दिनों कि
जब भी कभी मुझे इधर आना था - मैंने तुम्हें साथ नहीं लिया।
अब मुझे तुम पर पूरा विश्वास हो गया है। अत में तुम्हें उस
स्थान पर लिए जा रहा हूँ—जहा का जरा भी किसी को पता
लगने पर हमारी जिन्दगी खतम हो सकती है। तुम जो कुछ भी
देखो और सुनो उसे खूब समझो और अपने मन में रखो लेकिन
उस विषय में कहने के नाम पर अपने आपसे कहना भी भूल
जाओ। तुमने उस दिन वर्षा में अपनी जान को हथेली में रख
कर 'सच' के लिए जो कुछ कर दिखाया उसने मेरे हृदय में तुम्हारे
प्रति बहुत बड़ा आदर और विश्वास उत्पन्न कर दिया। उसका
फल तुम्हें आज मिलेगा।"

तनसुख ने कहा—"दादा, आपने तो अभी तक कोई ऐसा
मौका नहीं दिया--जहाँ मैं यह दिखा पाता कि आपकी आज्ञा
मेरे प्राणों से बढ़कर है। मैं हर वक्त यह इच्छा रखता हूँ कि
आप मुझे किसी मौत के स्थान पर भेजें।"

"सो यह सदा खयाल रखो कि मेरे साथ तुम सदा मौत के
मुँह में ही हो। तुम्हारी उस दिन परीक्षा हो गई। यदि सुधीर
को उस दिन षडयन्त्रकारियों के पञ्जों से छुड़ाकर न ले आते तो
उस दिन हमारा एक बहुत बड़ा कार्य कर्ता—मारा जाता। हालाकि

तुम्हारे सकट मे पड़ने पर या असफल होने पर मैंने एक और प्रबन्ध भी कर रखा था।"

"तो सुधीर भैया अब कहाँ है ?"

' वहीं तो हम चल रहे है। वहाँ और लोगों को भी तुम देख लोगे। आज से तुम्हारा नाम हमारे खास रजिस्टर मे लिखा जायगा। लेकिन नलिन से बात करते वक्त खबरदार रहना। वह बड़ा टेढ़ा आदमी है।

समुद्र के किनारे-किनारे बड़ी दूर चलने पर एक पहाड़ी की नीची सतह मे मगलदास और तनसुखा उतर पड़े। तरह तरह के पेड पत्तियों और झाड-झंखाड़ों के बीच से निकलते हुए वे एक दूसरी छोटी पहाडी की कन्दरा के द्वार पर जाकर रुक गए। थोडी ही देर मे एक पास वाले छोटे से वृक्ष के पत्ते हिले। काले-काले वस्त्रों मे लिपटे एक आदमी ने आकर मगलदास को विचित्र ढग से अभिवादन किया। मगलदास ने पूछा—"भीतर लोग आगए सब ?" वह आदमी कुछ बोला नहीं–लेकिन गुप्त इशारे से उसने मगलदास से न मालूम क्या कहा। मगलदास ने कहा "तो ठीक है चलो।" लेकिन वह आदमी ठिटका ही रहा। मगलदास आशय समझ गए। बोले—"तो बॉध दो ऑखें।" तनसुखा की ऑखें बाध दी गई। फिर उसे घुमाकर कुछ ऐसे आडे-टेढे रास्तों से ले जाया गया कि चलते-चलते उसे ऐसा अनुभव हो रहा था कि जैसे उसके पैर नीचे-से-नीचे टपाटप गिरते जा रहे थे। कोई बीस मीनिट तक चलने के बाद वे रुके। तनसुखा की आखें खोल दी गई।

तनसुखा ने देखा—वह एक बड़ी भारी गुफा के बहुत नीचे एक बड़े ही सकरे स्थान में खड़ा था। एक प्रकाश न मालूम कहा से आ रहा था जो केवल वहां पर एकत्रित व्यक्तियों को बहुत ही धुँधले धुँधले रूप में दिखा रहा था। लेकिन गौर से देखने पर कुछ ही देर बाद वहां के प्रत्येक व्यक्ति का हुलिया स्पष्ट रूप से दीख पड़ने लगा। तनसुखा देख कर दंग रह गया। उसने देखा कि उसके सामने खड़े हुए व्यक्ति वही सज्जन थे जिन्हें उसने कई बार पल्टनों की सलामी लेते देखा है। दूसरे व्यक्ति जो दिखाई दिए वे शहर के एक बहुत बड़े अस्पताल के डीन थे जो इङ्गलैण्ड, अमेरिका, फ्रान्स, जर्मनी, चीन, रूस और जापान आदि देशों में रह कर हिन्दुस्तान आए थे। तीसरे सज्जन जो दिखे तो तनसुखा और भी दंग रह गया। वह एक कान्स्टेबुल था, जो कभी दादर, कभी चौपाटी, कभी परेल, कभी फोर्ट और कभी कालबादेवी पर ड्यूटी देता हुआ तनसुखा-द्वारा कई बार देखा गया था। चौथे को देखकर वह और भी आश्चर्य में पड गया। ये हजरत शहर में दिन भर "चने जोर गरम बाबू" करने वाले महाशयों में से थे। पाँचवें व्यक्ति को देखकर तनसुखा की आँखें खुल गईं। वे बम्बई की कई बड़ी बड़ी औद्योगिक संस्थाओं के प्रधानों में से थे। छठे एक कालेज के बहुत बड़े प्रोफेसर थे। सातवाँ एक किसान था जिसे तनसुखा नहीं जानता था। आठवें थे काशी काका। जिनसे तनसुखा पहली बार मिला। नवाँ था सुधीर और दसवाँ था नलिन। ये सब मगलदास को आते देख खड़े हो गए थे।

मगलदास ने तनसुखा की ओर संकेत करके कहा—'यह तनसुख है नलिन। जिन्हें सुधीर को ले आने का काम सौंपा गया था।"

नलिन कुछ देर चुप रहा—फिर एकाएक वह बोल उठा—'अजुमन। चीर दो इन महाशय की अँगुली। क्यों इन्होंने ऐसा काम किया?"

अजुमन ने तनसुखा की अगुली को एक छोटा सा चीरा दिया। खून बहने लगा। अजुमन बोला—"भाईजान इस खून से इस रजिस्टर पर अपने हस्ताक्षर कर दें। इसके पहले ये नियम मन ही मन पढ़ डालें। तनसुखा ने नियम पढ़कर और शपथ लेकर अपने खून से उस रजिस्टर पर हस्ताक्षर कर दिये। इसके बाद—एक सन्नाटा छा गया। मगलदास के संकेत पर नलिन ने उठकर एक शिला थोड़ी-सी खिसकाई। फिर उसे कुछ ऊँची नीची की—जिससे वहां किसी मशीन के होने का भास हुआ—कुछ ही देर में एक आवाज आई—"इन्किलाब जिन्दाबाद। मैं अण्डरसन बोल रहा हूँ। पाल ने पेरू में कमाल कर दिया। श्रमिकों की जीत हुई। सब कारखाने खुल गए हैं। जैसी कि आशा थी—उद्योग पतियों ने श्रमिकों की सलाह मान ली है। अब यहाँ पर श्रमिकों का प्रबन्ध, श्रमिकों के नियम और श्रमिकों की सलाह के अन्तर्गत ही सब काम हो रहे हैं। लाभ का पचास प्रतिशत श्रमिकों को मिलना निश्चय हुआ है।

जैमिनी ने किसानों में बेहद जागृति उत्पन्न कर दी है। इसी

प्रकार कार्य्य चलता रहा तो कुछ ही दिनों में वहाँ भी विजय निश्चित है। वहाँ का 'किसान संघ' बहुत जाग्रत हो गया है। सब किसानों ने मिल कर खेती करने के आपके सुझाव को बड़ा पसन्द किया। कुछ लोग उन्हें भड़काने में लगे हुए हैं। लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिलेगी क्योंकि किसानों ने अपनी मांगों को अधिकारियों के सामने पेश कर दिया है—और उन पर वे अड़े हुए हैं।

डाक्टर जेक का प्रेस पकड़ा गया। उनके मन में एक नया आदमी भरती हुआ था। जो रिपोर्टर का काम करता था। लेकिन वह गद्दार निकला। उसने प्रेस को पकड़वा दिया। डाक्टर साहेब का पता नहीं है। न ही सेन का। वे भी गायब हैं। हमारे आद मियों ने उन्हें ढूढने में कोई कसर नहीं रखी। सब स्थान देख लिए। पता नहीं लगा। शायद एक दो रोज में स्वयं प्रकट हो जाँय।

मनमुखा ने रगून में फिर मूर्खता कर डाली। यह भला आदमी घात बात में मार-पीट पर उतर आता है। अब की बार उसने एक ब्लेक मार्केटियर पर हाथ चला दिए। पकड़ में नहीं आया। खबर है कि कलकत्ते के रास्ते से भारत जा रहा है। बम्बई के एक मेडिकल कालेज में उसका एक भानजा डाक्टरी पढ़ रहा है। उसका नाम रमेश है। शायद उसे मिलने के लिये ही वह जा रहा है। क्योंकि इस गाव का वह कई बार जिक्र भी कर चुका है। रमेश के गाव के ठाकुर के आदमियों ने किसानों पर

फिर अत्याचार आरम्भ कर दिये हैं। मनसुखा इस बार रमेश को लेकर उस गाँव मे जाने का विचार प्रकट कर चुका है। यहाँ के समाचार बस हुए। आपके आशीर्वाद सुनने को लालायित हैं। इन्किलाब जिन्दाबाद।''

नलिन ने उठकर उस यन्त्र को एक ओर पत्थरों की दीवार में खिसका कर उसके स्थान पर उस शिला को पुन खिसका दिया। फिर उसने दूसरी ओर के एक भारी पत्थर को हटाया। कुछ बटन इत्यादि दबाकर एक दूसरा यन्त्र खुला छोड दिया।

मगलदास उस दिशा के विपरीत मुँह करके बैठ गए उन्होंने कहा—''क्रान्ति अमर हो। आपके यहाँ के समाचार बडे ही उत्साह वर्धक हैं। पाल को बधाई। पेगू के श्रमिकों कीय ह विजय दुनिया भर के श्रमिकों की विजय है। हम उस दिन के स्वप्न देख रहे हैं। जब सारी दुनिया के कारखाने मजदूरों की हुकुमत मे चलेंगे।

जेमिनी की विजय में विश्वास करना चाहिए। मजदूरों और किसानों की समस्याएँ अलग-अलग हैं। जितनी जल्दी मजदूर पूँजीपतियों को हिला सकते हैं, उससे अधिक शीघ्रता किसान सरकार को हिलाने मे कर सकते हैं—लेकिन देश काल अवस्था का विचार रखते हुए—बात उल्टी समझना चाहिए। किसानों के कामों में देर लगाना अनिवार्य्य है। मजदूर जितनी जल्दी विश्वव्यापी हलचल मचा सकते हैं, उतनी जल्दी किसान नहीं। उनमे इतनी अधिक एकता इतने कम समय मे नहीं हो सकती।

शहर-से-शहर बात जल्दी पहुँचती है किन्तु गाँव से-गाँव बात देर मे पहुँचती है। गाँव और शहर की सफलता मे इतना ही अन्तर है जितना एक शहर से दूसरे शहर को तार पहुँचाना और एक गाँव से दूसरे गाँव को बैल गाडी। तार के बीच मे कट जाने पर शहर के मामलात मे तुरन्त गडबडी हो सकती है और मामला उल्टा पड सकता है। लेकिन बैलगाडी जितनी धीमी रफ्तार से चल कर दूसर गाँव पहुँचती है—और उसके निशान देर तक बने रहते है उसी प्रकार वहां की जागृति भी एक बार हो जाने पर लम्बी देर तक स्थायी रह सकती है। इसलिए शहरों की अपेक्षा गाँवों मे काम करने वाले को अधिक सफलता की गुजाइश है। जेमिनी को सन्देश है कि वे डटे रहें, अडे रहें। उनकी सफलता निश्चित है। सफलता मे विश्वास क्यों न रहे जब कि हमारी लडाई अहिंसा की लडाई है।

डाक्टर जेक चित्तगांव पहुँच गए है। उन्होंने फिर जमीन मे प्रेस लगा लिया है। अपना प्रचार आरम्भ कर दिया है। बडे ही जीवट के आदमी हैं। बिजली की तरह काम करते है। हमे इनकी लगन से रश्क है। पहले पर्चे से ही चित्तगाँव मे सनसनी फैल गई है। अधिकारी जाग्रत हो गए हैं। मजदूरों मे उत्साह छा गया है। किसानों तक खबर पहुँच गई है।

सेन मलाया पहुँच गए हैं। एक बडे अखबार के दफ्तर मे नौकरी करली है। समय की ताक मे हैं। वे काम देर से करते हैं लेकिन करते हैं तो बस, सबको इनसे रश्क होने लगता है।

कहते हैं मलाया स्त्री से ब्याह करने वाले हैं। भई आदमी हैं विचित्र।

मनसुखा की सवारी कलकत्ता आ पहुँची। इस बार इन महाशय को समझाना पडेगा। इस प्रकार की मारपीट से हमारे कार्य्यक्रम में बडी गडबडी होती है। मारपीट हमारा उद्देश्य नहीं। आदमी को आदमीयत सिखाना हमारा लक्ष्य है। और आमदी को आदमीयत सिखाने वाला तो प्रथम श्रेणी का आदमी होना चाहिए। इस बात को आप भी भली प्रकार जानते हैं। मार-पीट से सघ की बदनामी भी तो होती ही है। सेवा मे फरक आता है। हाँ रामपुर के ठाकुर ने वाकई अत्याचार आरम्भ कर दिए हैं। किसानों की फसलें खेतों मे ही कटवाली जा रही हैं। इसका प्रबन्ध मैं शीघ्र ही करने जा रहा हूँ। मनसुखा के आजाने पर निश्चय करूँगा। एक प्रसन्नता की खबर है। तनसुख ने सुधीर को बचा लिया। आज से वह हमारे सघ के पक्के सदस्य बन गए हैं।

हिन्दुस्तान की हालत बडी विचित्र होती जा रही है। श्रमिकों मे आपस में विश्वास नहीं रहा। प्रति दिन हिन्दू-मुस्लिम फसाद होने लगे हैं। इसी झगडे मे श्रमिक भी फस गए हैं। रोज बे-काम लडते और मरते हैं। अपने ध्येय को भूलकर भटक रहे हैं। हमारी कोशिश जारी है। हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई प्रचार हमने शुरू कर दिया है। जब तक देश के श्रमिकों और किसानों में एकता नहीं होगी—सुधार के काम मे प्रति दिन नए-नए रोडे

भटकते रहेंगे। अत हमारा पहला काम अब यही हो गया है। जब तक देश मे अमन कायम न हो जायगा । हमारा हिन्दू-मुस्लिम 'ऐक्य' सघ अपनी कोई भी कोशिश उठाकर न रक्खेगा। 'अन्न वस्त्र जुटाओ सघ' अपना कार्य्य तेजी के साथ कर रहा है। कई चरखे रोज चल रहे हैं। घास की खाद्य सामग्री तैयार की जा रही है। उनका बाँटा जाना भी आरम्भ हो गया है। समस्त-देश मे आज चारों ओर अन्न और वस्त्र की हाय, हाय, मची हुई है। ब्लेकमार्कटियरों के पीछे नलिन और सुधीर बुरी तरह पड़े हुए हैं। हालाँकि उनका दल दिन-रात हमारी टोह मे नींद हराम किए हुए है। सुधीर की उन दुष्टों ने बहुत बुरी दशा की थी और उसका खात्मा ही करने जा रहे थे यह आपको मालूम ही है। प्रसन्नता की बात है कि इतना सब कष्ट सहते हुए भी जनता विचारों मे प्रगतिशील हो रही है। देखें हमारे स्वप्न कब पूरे होते हैं। कब भारत ससार के अन्य राष्ट्रों से कांधा से कांधा मिला कर चलने योग्य होता है? बस आज इतना ही! अब हम २१ दिन बाद बोलेंगे। इन्किलाब जिन्दाबाद।"

नलिन ने इस यन्त्र को भी यथा स्थान छिपा दिया।

१२

"मै कुछ नहीं सुनना चाहता, मुझे पैसे दे। आज ताड़ी नहीं पिऊँगा तो मर जाऊँगा। पिछले दिनों बीमार रहा तो चार

ने मुझे एक भी पैसा नहीं दिया। लाव, पसे लाव, नहीं तो मैं मर जाऊँगा तू विधवा हो जाएगी, तेरे बच्चे माँगते फिरेंगे, ताडी के पैसे देकर तू मुझे बचा ले।"

"तुम्हारी अकल को हो क्या गया है। मैं पैसे कहा से लाऊँ। राधे पन्द्रह दिन से बीमार है। एक दिन भी वह इस लायक नहीं हुआ कि मैं इसे छोडकर काम पर जाती। दिन-दिन भर ताडी खाने मे पडे रहते हो—काम नहीं होगा तो बाप क्या तुम्हे अपने घर से देगा।'

"अरे देगा, उसका बाप देगा। अगली पन्द्रह तारीख को हडताल कर रहे है, हडताल। उसका बाप पैसे देगा। ताडी नहीं पीऊँगा तो मर जाऊँगा। आज तू पैसे दे दे ताडी के लिए मुझे। लाव, नहीं तो फिर मारता हूँ चुडैल को मैं जानता हू तू मुझे मार डालना चाहती है, इसीलिए पैसे नहीं देती। तू तो ननकू के घर मे चली जायगी और मैं मर जाऊँगा।"

"तुम्हें लाज नहीं लगती मेरे लिए पराए मर्द का नाम लेते। ननकू भाई के बराबर है मेरे। तुम्हे ताडी की आदत को छोडने के लिए कहता है, इसलिए उसके लिए ऐसी बात बोलते हो। कितना भला आदमी है। हम लोगों के लिए कार-खानों के मालिक से कैसा लड़ता है। घर-बार को छोडकर, स्त्री बच्चों का छोडकर, जो हम लोगों की भलाई मे लगा हुआ है उसके बारे मे ऐसी बातें नहीं कहना चाहिए।'

"नहीं कहना चाहिए, हाँ नहीं कहना चाहिए नयनतारा

देवी भी तो यही कहती है। नहीं कहना चाहिए। लेकिन मुझे ताड़ी के पैसे दे दे। मैं किसी को कुछ नहीं कहूँगा। तुझे भी कुछ नहीं कहूँगा। अभी जो मारा है। इसकी माफी माँगता हूँ। लेकिन तू मुझे पैसे दे दे, चुड़ैल। पैसे दे दे, नहीं तो तुझे आज यहीं मार डालूँगा।'

"अगर मुझे मार डालने से तुम्हें पैसे मिल जाय और तुम्हारी जान बच जाय तो तुम मुझे मार डालो। लेकिन मुझ जिन्दी के पास पैसे कतई नहीं। राधे को बड़ा जोर से बुखार चढा है। उसकी दवाई तक के लिए तो हैं नहीं पैसे।"

"हैं, तेरे पास उसकी दवाई के पैसे हैं। मेरी दवाई के के पैसे नहीं हैं। तू मुझे जान से मारना चाहती है। ले, मैं तुझे मारता हूँ।" इतना कह कर उसने लात और घूँसों से स्त्री को फिर मारना आरम्भ कर दिया। उसकी स्त्री हाय, हाय, चीख उठी। नयनतारा ने अब दरवाजा थप थपाया। 'झींगन, ओ झींगन, अरे ले, तू अपनी ताड़ी का बर्तन ताड़ीखाने में ही भूल आया। ले इसमें ताड़ी है पीले।'

इतना सुनते ही स्त्री को पीटना छोड़कर झींगन ने दरवाजा खोल दिया। देखा तो नयनतारा—उसने कहा "लाओ कहाँ है ताड़ी।" नयनतारा ने अपना मुँह दूसरी ओर को घुमा लिया। झींगन के मुँह से ताड़ी की बहुत बुरी बदबू आ रही थी। उसने तुरन्त ताड़ लिया। नशे में यह अपनी स्त्री को पीट रहा था। नयनतारा को देखकर झींगन बोला—"अरे तुम तो देवी हो।

ताडी पीने को मना करती हो। और कहती हो ताडी पीलें। लाओ कहाँ है ताडी। लाओ दो।"

नयनतारा ने कहा—"भींगन भाई, तुमने उस दिन कंचन को आग पीटने से कसम खाई थी। आज उसे फिर पीट रहे हो। तुम्हारा बच्चा बीमार है। तुम्हें उसकी चिन्ता नहीं।"

"उसकी चिता तुम्हें है, उस चुडैल को है। पर मेरी चिता किसको है, बताओ ?"

"ननकू को।"

"ननकू! ननकू, जो हमे रोजी से छुड़ाना चाहता है। हमसे हड़ताल करवाना चाहता है, उसे हमारी चिन्ता है। वह तो हमे भूखों मारने की बात कह रहा है। बाबू ने बताया है। ननकू चाण्डाल है। मजदूरों का दुश्मन है। हम उसकी बात नहीं मानेंगे। उसकी बात मानेंगे तो ताड़ी पीने को नही मिलेगी। मैं मर जाऊँगा। नयनतारा देवी, तुम मजदूरों का कष्ट दूर करने की बात कहती हो न। आज मुझे भारी कष्ट है। बहुत भारी। पैसे दे दो, ताडी पिऊँगा। बचा लो मुझे देवी।"

नयनतारा ने कहा—"भींगन, मैं घर से पैसे लेकर नहीं चली हूँ। यदि मेरे साथ दो घण्टे बाद घर तक चलेगा तो पैसे दूँगी।"

"नहीं तुम्हारे पास पैसे है। तुम पैसे दे दो मैं तुम्हारे पैरो पडता हूं। मुझे पैसे दे दो। मैं मर जाऊँगा। ताड़ी नहीं पिऊंगा तो।"

'मैंने कहा न। पैसे मेरे पास हैं नहीं।'

"हैं, तुम्हारे पास पैसे हैं। मुझे देती नहीं हो। लाओ, तुम्हारा बटुआ लाओ। उसमें पैसे हैं।" इतना कहकर उसने नयनतारा के बटुवे की ओर हाथ बढ़ाया। वह पीछे हटी। भोंगन बोला—'पीछे क्यों हट रही हो। मैं सब पैसे नहीं लूँगा सिर्फ आज की ताड़ी के। तुम नहीं दोगी तो मैं छीन लूँगा।" वह नयनतारा के हाथ पकड़ने के लिए बढ़ा। नयनतारा फिर पीछे हटी। इस बार वह रेलिंग से गिरती-गिरती बची।

नयनतारा ने कहा—"भोंगन, तुम तो मेरे भाई हो। बहिन से पैसे नहीं छीनते, उसे देते हैं।" भोंगन मदोन्मत्त था। उसने नयनतारा का हाथ पकड़कर कहा—"बहिन की बच्ची। तीन घण्टे से खुशामद कर रहा हूँ। पैसे नहीं देती।' नयनतारा की आँखें चमक उठीं। आस पास के लोग अपने-अपने घर से निकलकर नयनतारा को बचाने दौड़ पड़े। इसी बीच एक नवयुवक ने आकर भोंगन का हाथ पकड़ कर उसे जो झटका दिया तो वह चीख उठा। 'अरे दौड़ो मुझे मार डाला।' युवक ने उसके गाल पर दो तमाचे खींचकर जड़ दिए। बोला—"जहालत। किसको छेड़ने हो मूर्ख। तुम्हारी भलाई करने वाले को नहीं पहचानते ?"

"अपनी भलाई करने वाले को पहचानने की इनकी शक्ति होती तो आज यह दूसरों की भलाई करता होता नवयुवक। यह तो आज इस स्थिति में है कि अपनी भलाई क्या है, यही नहीं जानता।" नयनतारा ने कहा।

लेकिन यह क्या, नवयुवक को देख कर नैना चौंक क्यों पडी ? एक क्षण वह उसे सिर से पैर तक बडे ध्यान से देखती ही रही। नैना को अपनी ओर इस प्रकार देखते हुए देख युवक को कुछ याद सा आने लगा। उसे लगा, जसे इस महिला को बहुत पहले उसने कभी बहुत ही अच्छी तरह देखा है। उसने अपने सिर को सहलाया तो एकदम ख्याल आया। नयनतारा ने सोचते-सोचते मुस्करा दिया। मन मे बोली वही हाव, वही भाव, हो न-हो यह वही है। उसने कहा—"आपका नाम रामू तो नहीं।" 'और आपका नाम नैना तो नहीं।' युवक ने कहा। दोनों एक क्षणभर के लिये अपने गाव मे पहुँच गए। नैना बोली—'तुम तो पहचाने भी नहीं जाते रामू। कितने बडे हो गए हो।'

"और न तुम पहचानी गई।"

लेकिन तुम यहाँ कहाँ ?"

'और तुम यहाँ कहाँ ?"

जोर का तमाचा लगने से झींगन का नशा उतर चुका था। शर्मिन्दा होकर वह नीचा सिर किए एक ओर खडा हो गया। नयनतारा की उस पर दृष्टि पडी। उसने रामू से कहा—"यह तो लम्बी बात है। पहले इनसे निपट लें। आज तुम्हे मेरे साथ ही चलना होगा।"

"और क्या ? तुम सोच रही हो कि मैं तुम्हे यों ही छोड कर चला जाऊँगा।"

नैना ने झींगन के कमरे मे जाकर उसके बच्चे को देखा। उसे

िवाई दी। उसकी स्त्री का ढाढस बँधाया। फिर आँगन से उसकी
लती पर पश्चात्ताप कराया और कचन से यह कह कर विदा
ी कि आज उसके एक अतिथि अचानक आ गए हैं, इसलिए
ह उसके पास कुछ देर बैठ नहीं सकेगी। फिर आएगी और
ठ कर उससे बातें करेगी।

नैना और रामू दोनों कालबादेवी की ओर जाने वाली ट्राम
ाड़ी में बैठ गए। भीड़ अधिक होने की वजह से रामू को ट्राम
ाड़ी में खड़ा रहना पड़ा था और नैना को कुछ दूर आकर सीट
ली। अतः रास्ते में उन दोनों में थोड़ी सी बातें भी नहीं हो
कीं। दोनों के मन में एक दूसरे के बारे में जानने की उत्कण्ठा
तें पल बढ़ती ही रही। कालबादेवी रोड के एक स्टेशन पर
म गाड़ी के रुकते ही नैना ने रामू से उतर जाने का संकेत किया।
नों उतर पड़े। थोड़ी ही दूर पर घर था। नैना ने पूछा—
म्बई कैसे आ गए। और गाँव का निवास क्या हुआ।"

"यही प्रश्न मैं तुमसे पूछता हूँ।"

"हमारे इस प्रकार के कई प्रश्न यदि आपस में टकराएँगे
हम कुछ भी कह-सुन नहीं सकेंगे।" नैना ने कहा। इस पर
ों बड़े जोर से हंस पड़े। नैना का घर आ गया था। दरवाजा
ल कर उसने रामू को एक कुर्सी पर बैठने को कहा। फिर
ी—"मैं पहले जाकर चा का पानी गरम करने रख आऊँ,
र बातें होंगी जम कर।" और यों कह कर वह पास वाले
रे में चली गई। राम ने देखा। कमरा बहुत ही सादगी

तरीके से सजा हुआ था। एक ओर एक टूटी मेज रखी हुई थी। बीच मे एक काला खुरदरा कम्बल बिछा हुआ था। दीवारों पर कोई तस्वीर नहीं थी। टेबुल पर जमी हुई कुछ पुस्तकें रखी थीं। कमरा और दीवारें साफ थीं। एक ओर दो सन्दूक रखे हुए थे। चारों ओर सिर घुमा कर वह कमरे का निरीक्षण कर ही रहा था कि नैना आ पहुँची। बोली—"देर हो गई।" और नीचे ही कम्बल पर बैठ गई। रामू ने कहा—"मैं भी नीचे ही बैठूँगा। ऐसे बैठ कर बात करने मे आनन्द नहीं आएगा।" और वह भी उठ कर कम्बल पर बैठ गया। बोला—"मिडिल पास किया—इसका पता तो तुम्हें था ही। डाक्टर साहेब के सहयोग से मैंने एफ० ए० तक और पढ लिया। इसके बाद बी० ए० मे समय नहीं गँवा कर जल्दी डाक्टर बनाने के लिए उन्होंने मुझे नागपुर भेजा। और गत वर्ष से एम० बी० बी० एस० के लिए यहा आया हूँ। सौभाग्य कि तुम्हारी मुलाकात हो गई। अब तो समय-असमय तुम्हें कष्ट देता ही रहूँगा। अपना इतिहास बताओ, तुम्हारी तरक्की रश्क करने लायक है।"

नैना ने अपना पिछला सब जीवन कह सुनाया। रामू ने हँसकर कहा—"ओह तब तो नयनतारा देवी हमारी मामी है। तो मामी श्री, अब तो हम खाना भी यहीं खायेंगे। चलो, अच्छा हुआ भाई, जिस वस्तु के लिए प्राण छटपटा रहे थे। वह तुम लोगों के आश्रय मे मिल जायगी। हाँ, यह तो बताओ, मगलदासजी मुझे अपने सघ मे ले लेंगे ?"

"अवश्य !" कह कर नैना चा लेने चली गई। उसका जाना ही था कि तनसुखा ने कमरे में प्रवेश करके कहा—"चा मेरे लिए भी लेती आना नयनतारा, मैं आ गया हूँ !" और ओवर कोट उतार कर उसे कील से टाँग तनसुखा ने ज्योंही मुड कर देखा तो वह आनन्द में भर कर चिल्ला उठा—'ओह रामू ! मेरा रामू ! तुम्हें, तो मैं आज खोजने ही जाने वाला था। बडा जरूरी काम आ पडा है। इतने दिनों से यहाँ हो और हमें खबर ही नहीं। कभी मिले ही नहीं।' फिर धीरे से वह बोला—"मनसुखराम आने वाले हैं।"

रमेश ने पहले झुक कर तनसुखा के पैर छुए फिर आनन्द में भर कर बोला—"सच ! ओहो, कितने आनन्द की बात है।"

"हाँ, इस विषय में मुझे तुमसे बहुत-सी बातें करनी हैं।" इतना कह कर तनसुखा ने बैठक वाले कमरे से अन्दर को खुलने वाले एक और कमरे का दरवाजा खोला। फिर रमेश का हाथ पकड उसे भीतर ले जाते हुए, नैना से कहा—"नयनतारा, जरा तुम भी आओ, तुम्हें भी एक विशेष समाचार देना है।"

× × ×

हडताल सुन्दर मिल से आरम्भ हुई। हजारों मजदूर 'इन्कलाब जिन्दाबाद', 'मजदूरों की जय हो' और 'हमारे खून चूसने वालों का नाश हो'-आदि के नारे लगाते हुए शहर की प्रसिद्ध-प्रसिद्ध सडकों से रोज गुजरने लगे। हडतालियों में स्त्री-पुरुष और छोटी उम्र के बच्चे भी शामिल थे। मिल मालिकों के समक्ष मजदूरों ने अपनी मांगें पेश कर दी थीं। हडताल के

पन्द्रहवें दिन भी मालिकों की ओर से कोई उत्तर नहीं मिला। सोलहवें दिन विदेश से लौटे हुए मिल के एक अधिकारी धनीराम ने श्रमिकों के अग्रणी नेताओं से मिल कर उन्हें समझाने का प्रयत्न किया—"मटेरियल नहीं मिल रहा है। प्राडक्शन जारी रखना तक मुश्किल हो रहा है। आमदनी का बहुत बड़ा हिस्सा इ० पी० टी० में चला जाता है। बचत तो कुछ है ही नहीं। वेतन कहाँ से बढ़ाया जाय।" इस पर नेताओं ने कहा "यदि मिल मालिक मजदूरों की माँगों को पूरा नहीं कर सकते तो मिलें बन्द कर दी जाँय। हमारे श्रमिकगण गाँवों में खेती करने चले जायेंगे।" इस पर धनीराम क्रुद्ध होकर बोले—"तुम लोग काम नहीं करोगे तो क्या हमारी मिलें बन्द हो जायेंगी। तुम लोगों के पास खाने को तो है नहीं। तुम्हारे बच्चे भूख के मारे रो रहे हैं, औरतों के पास कपड़े नहीं हैं, वे लाज से मर रही हैं और कुछ जयचन्दों के भड़काने से तुम लोग अपने आपको खतरे में डाल रहे हो। टालो। हमें तुम्हारी परवाह नहीं। देखते हैं, कैसे काम पर नहीं आते हो। मैं कहता हूँ और बाजी लगाता हूँ कि तुम में से ही हजारों मजदूर आज से पाँच दिन के अन्दर-अन्दर काम पर आ जायेंगे और न आए तो मुझे दुनिया—अपने कामों का चाणक्य कहना छोड़ दे। लो, यह मेरी खुले आम चुनौती है। अब तक यहाँ के मिल मालिक छुपे-छुपे मजदूरों में फूट डालते थे, अब मैं खुले आम तुम में से हजारों मजदूरों को काम पर ले आऊँगा। तुम में फूट डालूँगा। देखें कौन रोकता है मुझे। छ वर्ष विलायत

मे पिताए है, कुछ सीखा है, कोई घास नहीं खोदी है। यह मेरा खुला चैलेंज है। नहीं मानते हो तो तैयार हो जाओ।" नेताओं ने कहा—"यह खुला चैलेंज नहीं—खुले आम दिन-दहाडे अन्याय की गला-फाड घोषणा है। मजदूरों की छातियों पर छुरियों के करारे वार है। लेकिन जब यही आपको अभीष्ट है तो यह याद रहे—अन्याय के बल पर इस दुनिया मे कोई भी नहीं जीत पाया है।"

"जीत का पता तो सघर्ष के बाद चलेगा। पहले सघर्ष की शक्ति तो जुटोगे।"

"ठीक है, फिर सघर्ष का झूठा आरोप इन गरीब मजदूरों पर न लगाया जाय। वे जो कुछ समय पर कर गुजरेंगे, उसका जिम्मा धनवालों पर होगा।"

"ओहो। मजदूर मेरी मिलों पर बाम्ब फेंक ेंगे। है उनमे इतनी ताकत ?"

"यह तो वक्त ही बताएगा।"

"वक्त तो वह आने वाला है जब तुम सब जिसे आज गाली दे रहे हो—उसके दरवाजे पर अपने नाक रगड़ने आओगे।"

"यह बहुत बड़े घमण्ड की बात है।"

"मैं ऐसे आदमियों से बात करना अपना अपमान समझता हूँ।"

"आप अपने मान की रक्षा कीजिए हमारी तो यही मांग है। यही प्रार्थना है। हमारा यही सत्याग्रह है।"

के छिलके, सडी सब्जी और अण्डे फेंके। ननकू के सिर में एक बहादुर ने लाठी भी मार दी। गरज कि आधे से अधिक मजदूर अपने निश्चय से डिग गए। काम पर जाने को तैयार हो गए। हड़तालियों का सारा उत्साह भंग हो गया। दूसरे ही दिन उनकी सख्या एक चौथाई ही रह गई।

हड़ताल से विमुख मजदूर दल बाँधकर काम पर चले। ननकू, मानकर, खाण्डेकर, चमनभाई और जयकर हड़तालियों का जत्था लेकर 'इन्कलाब जिन्दाबाद' 'अन्याय का नाश हो' 'जयचन्दों को बुद्धि मिले' आदि के नारे लगाते हुए मिल के फाटक पर पहुँच गए। ज्योंही अधिकारियों की कारें मिल के फाटक पर आतीं—उपस्थित हड़तालीगण जोर-जोर से नारे लगाते—'इन्कलाब जिन्दाबाद' 'अन्याय से लडते रहो।' आखिरी कार धनीराम की थी। उसे देखकर हड़तालियों ने चौगुने उत्साह से नारे लगाए। धनीराम ने अपनी कार रुकवा ली—फिर हडतालियों की ओर मुखातिब होकर बोले—"मैं तुम लोगों को वार्निंग देना चाहता हूँ कि मिल के गेट पर उपद्रव मचाना छोड दो। काम पर जाने वाले लोगों को मिल में आने दो। वर्ना जो लड़ाई होगी, उसका जिम्मा मिल पर नहीं होगा। मैं यह बताए देता हूँ कि काम पर आने वाले मजदूर तुम लोगों से सख्त चिढ़े हुए हैं। और रोकने पर वे मारपीट भी कर सकते हैं। इसलिए जिसको अपनी जान बीबी और बच्चे प्यारे हों, वे ऐसी मूर्खता न करें।

अपने घर लौट जाँय। या मिल में काम करने आ जाँय। मैं पहले कह चुका हूँ कि उन्हें मिल नहीं निकालेगी।"

हड़तालियों के नेताओं ने कहा—"हमें अपनी जान, बीवी और बच्चों से दुनिया में इन्साफ अधिक प्यारा है। न्याय होगा तो जान और बीवी-बच्चे भी सुख से रह सकेंगे। ऐसी अन्याय भरी दुनिया में उन सबको रखकर हम कौनसा न्याय करेंगे?"

"इसका मतलब यह है कि तुम लोग लड़ने के लिए पूरी तरह तैयार होकर आए हो। मुझे पुलिस में खबर करनी पड़ेगी।" धनीराम ने डपट दी।

नेताओं ने कहा—"अन्याय के साथ लड़ने के लिए हम हमेशा तैयार हैं। पर लड़ाई-झगड़े का तो बीज आपने ही बोया है। आप अब भी लड़ाई को उकसाने की बात कर रहे हैं। आप कुछ नहीं कर सकते तो हमें अपने भाग्य पर छोड़ दें। हम अपने भाइयों से आप निपट लेंगे। आपके बीच में न पड़ने से हमारे आपस के झगड़े अपने आप मिट जाएँगे।"

"मैं बीच में नहीं पड़ूँगा तो तुम सब आपस में कटकर मर जाओगे, समझे। विलायत से मैं खासतौर से यही सीखकर आया हूँ।"

"बेहतर यही होगा कि हम आपस में लड़ मरें। बस आप हमारे मार्ग से हट जाँय। हम लड़ने नहीं, प्यार करने आए हैं।"

इधर इनकी यह बातें चल ही रही थीं कि उधर से काम पर जाने वाले मजदूरों के जत्थे-के-जत्थे आकर गेट पर रुकने लगे। धनीराम ने यह देखा तो उन्होंने हड़तालियों को भिड़ककर कहा—"हटो सामने से, बकवास बन्द करो।'

हड़तालियों को जोश चढ़ आया। गगनभेदी नारे लगाना शुरू किए। 'इन्कलाब जिन्दाबाद' 'मजदूरो एक हो जाओ', 'फूट से घर बरबाद है।' धनीराम ने क्रोध मे भरकर कहा—"तुम लोग बकवास बन्द करके एक तरफ हट जाओ। मजदूरों को जाने दो काम करने।" इसके उत्तर मे ननकू, जयकर, मानकर और ग्याण्डेकर गेट के बीच मे लेट गए। जोश मे आकर और हड़ताली भी गेट पर लेट गए। पड़े-पड़े ही वे लोग नारे लगाने लगे। अब धनीराम क्रोध मे आगबबूला हो गए। गरज कर कहा—"सामने से भाग जाओ। अपनी जान बचाओ। वर्ना कार चला दूँगा।" मजदूरों ने अपने नारे और बुलन्द कर दिए। हड़तालियों मे इतना जोश देखकर काम पर जाने वाले बहुत से मजदूर फिर इधर मिलकर नारे लगाने लगे। धनीराम यह देखकर चिढ उठे। उचित अनुचित सोचना भूल गए। और जब उन्होंने देखा कि बहुत से मजदूर हड़तालियों मे पुन: मिल रहे है। और उन द्वारा खर्च किए गए हजारों रुपयों पर पानी फिर रहा है तो वे क्रोध मे एकदम पागल हो उठे। उन्होंने चीख मार कर कहा—"मैं कहता हूँ। तुम लोग हट जाओ वर्ना मैं कार चला दूँगा।' इस पर फिर गगनभेदी नारे लगे।

'इन्कलाब जिन्दाबाद' 'मजदूरो एक हो जाओ।' धनीराम ने अपने बाल नोच लिए। वे विवेक शून्य हो गए। उन्होंने कार स्टार्ट की। इंजिन की घर-घर आवाज मजदूरों के नारों से दब गई। धनीराम अपने वश मे नहीं रह सके। उन्होंने कार चला दी। बहुत से गेट पर लेटे हुए मजदूर उठकर भाग गए। लेकिन ननकू और मानकर के सीनों पर से कार गुजर गई। मजदूरों मे हा-हा कार मच गया। मिल के फाटक बन्द हो गए। शसस्त्र पुलिस मजदूरों को दबाने आ गई।

'श्रमिक संघ' के नेता ननकू और मानकर की हत्या के समाचार सारे शहर मे बिजली की तरह फैल गए। शहर की अन्य सभी मिलें धडा धड बन्द हो गईं। और हडतालियों की संख्या हजारों से लाखों पर पहुँच गई।

शहर की गलियों, सडकों और प्रत्येक सार्वजनिक स्थान पर श्रमिकों के जत्थे-के-जत्थे नारे लगाते हुए घूमने लगे। जब तक उनकी माँगों की पूर्ति नहीं की जाती—तब तक वे उन पर डट रहने की सौगन्ध खा चुके थे।

मिलों के बन्द रहने से हजारों रुपये रोज की हानि होने लगी। मिल मालिकों की आँखें खुल गईं। और इस मामले को तै करने की फिक्र मे उनकी नींद तक हराम हो गई।

आखिर श्रमिकों की जीत हुई। पूँजीपतियों को हारना पडा। उन्हें श्रमिकों की माँगें शत-प्रति शत माननी पड़ीं। धनिकों का अहंकार मिट्टी मे मिल गया। लम्बी-लम्बी मूछों पर ताव देने

वाले धनिक गरीबों के सामने झुक गए। यह गरीबों की अमीरों पर जीत नहीं थी—बल्कि न्याय की जीत थी अन्याय पर। अन्यायी धनीराम को ननकू और मानकर की हत्या के अभियोग मे फाँसी की सजा हुई।

१३

सारे गॉव मे बिजली की तरह खबर फैल गई। कुछ ही देर मे गॉव के समस्त नर-नारी एकत्रित हो गए। वर्षों बाद रामू, मैना, तनसुखा और मनसुखा को अपने बीच पाकर वे आनन्द मे विभोर हो गद्‌गद वाणी में तरह तरह की बातें करने लगे। एकत्रित जनसमूह मे से प्रत्येक उन लोगों के अत्यधिक निकट पहुँच कर उन्हें सिर से पैर तक खूब जीभर देख लेने की इच्छा में धक्का मुक्की करने लगे।

मैना भीड़ को इतनी उत्साहित देख कर उससे लाभ उठाने की गरज से बोली—"भाइयो और बहिनो! आप सब लोग मिल कर हमें जिस प्रकार उत्साहित कर रहे है इसके लिए यदि हम आपको धन्यवाद दें तो यह हमारी भारी भूल होगी। इसका अर्थ यह होगा कि हम आपसे बहुत दूर हो गए हैं। हम कुछ और बन गए हैं। हम किसी और दुनिया मे रहना चाहते हैं। धन्य बाद देकर हम आपसे छुट्टी लेना चाहते हैं। और यह चाहते हैं कि बस मुलाकात हो गई। आप अपना काम देखें और हम

अपना। हम आपको धन्यवाद दें यह छोटे मुँह बड़ी बात होगी। हम इस गाँव के बच्चे हैं—केवल धन्यवाद देकर हम इस मातृभूमि से उऋण नहीं हो सकते। इसके प्रति हमारे बड़े-बड़े कर्तव्य हैं। और वे कर्तव्य ही हमें आज यहाँ बड़ी दूर से खींच लाए हैं। मनसुख और तनसुख रामजी बड़ी ऊँची आत्माएँ हैं। इन लोगों ने बड़ी-बड़ी तपस्याएँ की हैं। इनकी प्रत्येक श्वास में मातृभूमि के दुःख को दूर करने की तीव्र लालसा लहरा रही है। और डाक्टर रमेशचन्द्र—आप लोगों को यह जानकर बहुत बड़ी प्रसन्नता होगी कि आपका वह रामू जो आपके खेतों में कभी घास खोदता था आज—डाक्टर रमेशचन्द्र हो गए हैं। मातृभूमि के कष्टों को देखकर इनके दिल में जो भयंकर आग की भट्टी धधक करके जल रही है, उसको ये ही अनुभव कर सकते हैं। दूसरों की शक्ति के परे की बात है—इनकी लगन और सेवा की सीमा का पार पाना। मैं अधिक समय लेकर डाक्टर साहेब के समय को नष्ट नहीं करूँगी क्योंकि वे आप लोगों में अपने मन की बात कहने के लिए उतावले हो रहे हैं। मैं तो केवल यही कहना चाहती हूँ कि जिस मातृभूमि के हमारे ऊपर इतने उपकार हैं—उसके बदले उसे धन्यवाद देकर ही कैसे छुटकारा मिल सकता है। हाँ, एक बात मैं अवश्य कह देना चाहती हूँ वह यह कि स्त्री के हृदय से प्रत्येक व्यक्ति भली भाँति परिचित है। जब इस गाँव से मैं बेइज्जत होकर निकाली गई थी तब मैंने प्रण किया था कि

किन्तु कर्तव्य की प्रेरणा ने उस पर जीत पाई । और आज मैं उसी गॉव मे जहॉ से अपमानित होकर निकली थी—अपने आपको मिटाने और जरूरत पडने पर अपना रक्त तक देने के लिए तैयार होकर आई हूॅ । यदि जो कह रही हूँ उसमे से कुछ भी कर पाई तो मैं आप लोगों को और अपनी मातृभूमि को फिर हृदय से धन्यवाद दे सकूॅगी । इतना कह कर नैना अपने स्थान से हटकर एक ओर खडी हो गई ।

रमेश ने आगे बढ कर सब लोगों को अभिवादन किया, फिर बोला "मेरे आदरणीय वृद्ध जनो, बहिनो, भाइयो और कल के बहादुरो । जैसा कि नयनतारादेवी ने कहा कि मैं आप लोगों के खेतों मे घास खोदने की मजदूरी करने वाला रामू—आज डाक्टर रमेशचन्द्र के रूप मे खडा हू—यह सही है । लेकिन यह भी आपको सही मानना पडेगा कि मैं वही रामू हूँ और आज भी आपके खेतों मे घास खोदते मुझे बडी प्रसन्नता होगी । फर्क इतना ही है कि डाक्टर रमेश - उस अबोध रामू की अपेक्षा आज, अपने कर्तव्य को भली प्रकार समझता है । यह विद्या का चमत्कार है । यदि उस समय के मेरे साथी जिनमे से बहुतों को यहॉ देख रहा हूँ अच्छी तरह से पढ़ लिख गए होते तो आज मेरी तरह उनको अपने कर्तव्य स्पष्ट दिख जाते । आज हमारे गॉवों मे दैन्यता का जो अखण्ड - साम्राज्य छाया हुआ है, वह हमारे भाइयों की निरक्षरता का ही कारण है । यदि आप लोगों मे से कुछ ही भाई पढे लिखे

और अपनी जवाबदारी को समझने वाले होते तो क्या मजाल था कि आज ठाकुर विजय शमशेर आप लोगों को अपने जूतों के तले रौंदते। क्या ताकत थी उनकी कि काशी काका को वह गिरफ्तार करके अज्ञात स्थान को पहुँचा देते और आप लोग चुपचाप मजबूर होकर अपने काम में लग जाते। उन्हें भूल जाते। दुःख है कि काका ने अपनी जिन्दगी आप लोगों के लिए मिटा दी। और आप मजे में अपने घर में सो रहे हैं। ठाकुर के आदमियों को बेगार दे रहे हैं। उनकी गालियां सह रहे हैं। उनके कोड़े सह रहे हैं। उनके अत्याचार सह रहे हैं—और सह रहे हैं—अपनी बहिन बेटियों की बेइज्जती। ठाकुर साहब आते हैं और आप लोगों की फसलों को खेतों-ही-खेतों में कटवा कर ले जाते हैं। कमाते हैं आप, काटते हैं वे। खाते हैं वे, भूखों मरते हैं आप। और इस पर तुर्रा यह कि वे महलों में रहते हैं। आप झोपड़ियों में। वे चमचमाती कारों में चढ़ते हैं, आप नंगे पैर घूमते हैं—कंकड़ों में, पत्थरों में, कांटों में, झाड़ियों में, झंखाड़ों में। वे आपकी मेहनत पर मोटे होते हैं, मूछों पर ताव देते हैं। और आप अपने पेटों को सिकोड़ते हैं—उन पर पट्टियाँ बाँधते हैं—आँखों को खोते हैं—और जानवरों की मौत मरते हैं। उनकी पीढ़ी दर-पीढ़ी धनवान और शक्तिवान होती जाती है और आपकी कंगाल और कंकाल। इस पर वे आप पर राज्य करते ही जाते हैं—अन्याय करते ही जाते हैं और आप उन्हें खुशी से सहते ही जाते हैं। वे आप पर अत्याचार करते हैं और आप

उन्हे सहते है। आपकी आँखें नहीं खुलतीं। आप बेबस है। लाचारी से बँधे हुए है। क्यों ? इसके केवल दो उत्तर हैं। एक अशिक्षा और दूसरा फूट। किसान भाई बेपढे-लिखे है—इस बात को तो वे जानते हैं। लेकिन उनमे फूट बड़ा भारी घर बनाये बैठी है—इसका उन्हे पता नहीं है। यदि आप लोगों मे एकता होती तो आज हमारे देश के किसान अन्य देशों के किसानों की तुलना मे निरे बेबस न होते। मेरे शब्द कडवे होते जा रहे हैं। शायद आपने मेरे मुँह से बडे ही मीठे शब्दों की आशा की होगी। और मेरे इस मुँहफटपने पर आप मे से बहुत से नाराज भी हो रहे होंगे। लेकिन लाचारी है - कोई भी भला विचारवान आदमी किसानों की ऐसी दुर्दशा को नहीं देख सकता। मुझ मे भी यही बात है। जब से मैने सुना है कि ठाकुर विजय शमशेर ने काका की रिहाई माँगने वाली जनता पर घुड सवार छोड दिये है, तब से मेरा खून खौल रहा है। इस जननी-जन्म-भूमि की धूल को प्रणाम करने के पहले मैने यह प्रण कर लिया है कि जब तक मै यहाँ से अत्याचार और अन्याय की जड को खोद कर नहीं फेंक दूँगा तब तक इस गाँव से नहीं हटूँगा। यहीं मर जाऊँगा। आज हम शपथ खाएँ कि हम एक है और सदा एक ही रहेंगे। हम कभी आपस मे फूट नहीं पड़ने देंगे। और हमारे अन्दर आज जो फूट बैठी हुई है। उसे सदा के लिए निकाल देते हैं। मेरे बन्धुओ। हममें एकता स्थापित होने के बाद एक ठाकुर तो क्या ससार के समस्त ठाकुरों के महाराजाधिराज भी हमारा बाल बाँका नहीं

सकेंगे। हमें थर-थर कंपा देने वाले तब हमारे सामने थर-थर काँपने लगेंगे। हमें इस प्रान्त में ही नहीं, बल्कि सारे देश और सारे संसार के किसानों और श्रमिकों में एकता स्थापित करनी है। याद रहे—जनता के लिए एकता वह महा मन्त्र है—जिसके सिद्ध हो जाने पर—जनता का राज होगा, जनता की अपनी सरकार होगी, जनता अपना निबटारा आप करेगी, जनता अपने लिए अपनी पसन्द के विधान आप बनायेगी। और सोचिए तब जनता कितनी सुखी होगी? आज यदि हमारे देश के सात लाख गाँवों के किसान मिल कर एक हो जाँय—तो विदेशियों की सत्ता हमारे देश में आज जो मनमानी कर रही है—वह इसी क्षण समाप्त हो गया। फूट डालो और राज करो के कूटनीतिज्ञों का इस देश से आज ही जनाजा निकल जाय—कार्य को आरम्भ करने के पहले मैं अपने किसान भाइयों की एक बहुत बड़ी सभा करना चाहता हूँ—जिसमें आस पास के सैकड़ों गाँवों के हजारों किसानों की उपस्थिति हो। और जिसमें मैं अपने उद्देश्यों पर पूरा प्रकाश डालकर सब से पूर्ण सहयोग की प्रार्थना कर सकूँ। इस तरह यह काम जल्दी हो सकेगा। इस सभा के प्रचार में मुझे कल ही आप लोगों की सहायता की आवश्यकता पड़ेगी। क्या मैं इस समय यह पूछने की इच्छा कर सकता हूँ कि—कल कौन कौन भाई इस काम के लिए मेरे साथ आने को तैयार है?"

इस पर गाँव के उपस्थित सभी किसानों ने एक स्वर से कहा—"हम सभी इस काम में हाथ बटाने के लिए तैयार हैं।

आप हमें रास्ता दिखाइये। जरूरत पडने पर हम अपनी जान की भी परवाह नहीं करेंगे। रमेश भाई ? हमें रास्ता दिखाओ।"

\+ + +

"शरीर तवे की तरह गरम हो रहा है डाक्टर, आज न जाओ, रास्ते में कहीं बुखार जोर पकड लेगा तो क्या होगा ?" नना ने चिन्तापूर्ण शब्दों में कहा।

गले में कुर्ता डालते हुये रमेश बोला—"जाना कैसे रुक सकेगा मामी। मैं न जाऊँगा तो इन अनपढ लोगों में उत्साह कैसे जागेगा ? ठाकुर तो अपनी करनी पर पूरी तरह से उतर आया है। जहाँ देखा वहा उसके आदमी मौजूद। कार्य्य कर्ताओं को भडकाते है, लालच देते हैं—फुसलाते हैं, निरुत्साहित करते हैं, और मारते भी हैं। देखा न, मनोहर को कैसा मारा। बेचारे का हाथ ही तोड दिया। उधर ही से जाऊँगा—उसकी मरहम-पट्टी भी तो करनी है। जरा वह दवाई का बाक्स तो उठा देना। मेरी अच्छी मामी।"

तनसुखा सुबह-ही सुबह नदी से नहाकर आया था। अपनी धोती को सूखने के लिए फैलाते-फैलाते बोला—"जा रहे हो डाक्टर ? किशनपुरा मे ठाकुर के आदमियों ने चार कार्य्य-कर्ताओं को मारा—एक की हालत बडी खराब है। लोग बडे भयभीत हो गए हैं।"

"स्थिति इतनी बिगडी हुई है कि यह घटनाएँ तो कुछ भी नहीं है मामा। अभी तो ऐसी कितनी ही बुरी घटनाएँ सुनने

को तैयार रहना होगा।" दवाई के बक्स को बन्द करके रमेश बोला।

"सच तो है ही। लेकिन किसानों में जो इतना धैर्य आ जाय। भोले भाई, तरह-तरह की शंकाजनक बातें करते हैं। खुद भयभीत होते हैं—दूसरों को भी करते हैं। चरित्र—बल नाम की कोई चीज नहीं। मुँह पर क्या कहेंगे, पीछे कुछ और कहेंगे। मनोहर की माँ हरिहर के बाप को कह रही थी इन लोगों को शहर में कोई काम नहीं मिला यहाँ आ गए हैं। खुद काम नहीं करते; दूसरों को भी मेहनत मजदूरी से रोकते हैं।"

"दुनिया में कई तरह के लोग हैं- तरह-तरह की बातें करते हैं। मनुष्य अपने कर्तव्य के प्रति सच्चा है तो समय पर सब ठीक हो जाता है। हमें बड़ी सभा बुलानी ही पड़ेगी। मैं सोचता हूँ कि आज से हम भी चार-चार गाँव रोज चक्कर लगाना शुरू कर दें।" रमेश जाने को उद्यत हुआ।

"जैसा तुम कहो। अरे! तुम्हारी आँखें तो बड़ी लाल हो रही हैं। मालूम होता है बुखार है तुम्हें।" इतना कहकर तन-सुगा—दूसरी धोती और टाविल फैलाने लगा। फिर कहने लगा—"कैसे लोग हैं। डाक्टर होकर भी अपने शरीर की चिन्ता नहीं करते।"

"मैं कह तो रही हूँ कि आज इन्हें बुखार है और यह मानते ही नहीं—मना कर रही हूँ फिर भी तैयार हो गए। ये लो चल भी दिए।" नैना चूल्हे पर पानी रखकर बोली।

"बिना चले काम कैसे होगा मामी। जिन्दगी थोड़ी है, काम बहुत। मामा! आज आप चार गॉव जरूर निपट लें। बड़े मामा से कह दें वे भी चार-छ गॉव ले लें। टाइम बहुत ही कम रह गया है। अरे यह क्या चक्कर आरहे हैं।" रमेश के मुँह से इतना निकल ही नहीं पाया था कि वह धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ा। तनसुखा जो अभी तक धोती सुखा रहा था—तुरन्त मुड़ा देखा—रमेश उठने का प्रयास कर रहा था। नैना ने दौड़ कर उसे उठाया। फिर तनसुखा से बोली—"जरा सम्हालिए मैं कम्बल बिछा दूँ।"

थोडी ही देर मे नैना ने चा बना कर तैयार कर दी। रमेश पीकर उठ खड़ा हुआ, बोला—"यह अच्छे निशान हैं। जिस काम के पहले अनेकों दिक्कतें उठ खड़ी होती हैं, वह प्राय सफल होता देखा गया है। कम-से-कम क्रान्तियों के आरम्भ में तो ऐसा ही हुआ है। क्रान्तिकारियों के जीवन मे पहले पहल कभी सफलता नहीं आई।" इतना कह कर वह ज्योंही चलने को हुआ कि मनसुखा आता हुआ दिखाई दिया। वह ठहर गया।

दीवार से लाठी खड़ी कर गले मे से दुपट्टा निकाल अपनी आँखों को पोंछता हुआ मनसुखा बोला—"आज रात भर चला हूँ। जरा नींद लूँगा। क्या डाक्टर चल दिए? या कहीं से आ रहे हो? बड़े थके हुए मालूम पड़ते हो।"

नैना ने बीच ही मे बात काट कर कहा—"देखिए न, इतना बुखार है। अभी चक्कर खाकर गिर पड़े थे। हम बड़ी

देर से आराम करने के लिए कह रहे हैं, लेकिन मानें तब तो। बस उठाया दवाई का बाक्स और चल दिए। जब शरीर से काम लेना है तो उसकी माग की अवहेलना कैसे कर देनी चाहिए। आप ही समझा कर देखिए मान जाएँ।'

मनसुखा ने डाक्टर के बहुत पास जाकर कहा—"अब अधिक चिन्ता करने की जरूरत नहीं है डाक्टर साहेब। आपको जान कर प्रसन्नता होगी कि काशी काका जेल से बाहर आ गए हैं। आपका सन्देश उन तक पहुँच गया है। वे अपने काम में लग भी गए। ज्योतिषी के रूप में हैं। मिलें तो पहचानने की कोशिश करना। अब हमारी बड़ी सभा खूब सफल होगी। मैं देखता हूँ कि आज आप बहुत अधिक थके हुए हैं। आराम हो कर लीजिए। लेकिन आपसे कहना बेकार है। जो मन में होगा, करेंगे। नैना इन्हें चा पिला दी। इनके बुखार की दवा चा है। चा पिला दो। चाहो जितना काम ले लो। जा ही रहे हो तो होशियार रहना। पश्चिमी गावों में दौरा कर रहे हैं ठाकुर विजय शमशेर। काका भी उधर ही गए हैं। लो मैंने भी बता दिया। अब आप जाएँगे भी उधर ही।" रमेश ने चलते चलते कहा—"काका आगए, अब तो और भी परिश्रम से काम करना चाहिए। अब काम में और भी मजा आएगा।"

× × ×

रमेश के गाँव रामपुर से आधी मील दूर एक लम्बा-चौड़ा मैदान था। उसी में लम्बी-लम्बी लकड़ियाँ गाड़ कर एक बहुत ऊँचा प्लेटफार्म बना लिया गया था।

सभा का समय हो रहा था। बात की बात में हजारों किसान स्त्री पुरुष जो दूर-दूर से आए हुए थे—मैदान में आकर प्लेट-फार्म के चारों ओर जमीन पर बैठ गए। रमेश ने सभा को इतनी सादी रखी कि प्लेटफार्म पर बिछौना तक नहीं बिछाया गया था। ठीक समय पर नना, तनमुखा, मनसुखा, काशी काका और सुवीर तथा सभा के अन्य प्रबन्धक प्लेटफाम पर आकर बैठ गए। सभा की अनुमति से रमेश ने सुवीर को सभापति बनाया।

नैना द्वारा 'वन्दे मातरम्' गीत गाए जाने के पश्चात सभा-पति ने उठकर सभा को सम्बोधित किया—"मेरे प्यारे भाइयो, बहिनो और कल के बहादुरो। आज की सभा का मकसद आप लोगों को अच्छी तरह से मालूम ही है। इसके प्रथम कि मैं वक्ताओं को बोलने के लिए आमन्त्रित करूँ—दो शब्द आज के कार्य्यक्रम के बारे में भी बता दूँ"

डाक्टर रमेश ने अपना सम्पूर्ण जीवन आप लोगों की सेवा के अर्पित कर दिया है। ये आपकी सेवा किस प्रकार से करेंगे—इसकी पूरी योजना इन्होंने तैयार करली है। यदि आप लोगों की पूरी पूरी मदद मिली तो—मुझे पूर्ण विश्वास है कि डाक्टर एक दिन अपने उद्देश्य में सफल होकर ही रहेंगे। डाक्टर के साथ चार और बड़ी-बड़ी शक्तियाँ हैं—जो इनके काम में हाथ बटायेंगी।"

डाक्टर, गाँव-गाँव घूमकर किसानों में एकता स्थापित करके उनमें जागृति की भावना भरेंगे। नयनतारादेवी गाँव गाँव घूम

कर स्त्रियों में शिक्षा का प्रचार करके जागृति उत्पन्न करेंगी। इसके लिए 'जन सेवा संघ' की ओर से रात्रि-पाठशालाएँ खोलने की तजवीज भी की जा रही है—जिनसे अपढ आदमी और युवक भी लाभ उठा सकेंगे। इस काम में मनसुखरामजी का भी हाथ रहेगा जो गाँव-गाँव घूम कर चलते फिरते वाचनालय का प्रबन्ध करेंगे। तथा बड़ी उम्र के आदमियों और बच्चों के लिए अलग पाठशालाओं का प्रबन्ध भी करेंगे। मनसुखरामजी का जीवन सदा ही अन्याय से लड़ते बीता है। अतः ये अन्यायियों और अत्याचारियों को ठीक मार्ग पर लाने का काम करेंगे। हमारे काशी काका से कौन अपरिचित होगा? इनका जीवन सदा आप लोगों की सेवा में ही बीता है। मैं, सब से पहले काशी काका से प्रार्थना करूंगा कि वे हमें अपनी अमूल्य वाणी से उत्साहित करें। काशी काका ज्योंही बोलने के लिये उठे—हजारों तालियों की गड़गड़ाहट ने उनका स्वागत किया।

काका ने कहना शुरू किया—"मेरे प्यारे किसान भाइयो, और बहिनो मैं अपने क्रियात्मक कार्य्यक्रम के बारे में पूरी तौर से बताऊँ उससे पहले जो दो शब्द कहना चाहता हूँ, वह लूँ —"

एक ओर से आवाज आई "हाँ कहो बेटा ख्सट।" और साथ ही सुनाई दी सभा के दो चार कोनों से भद्दी-सी सीटियों की आवाज। किसानों ने देखा उनके बीच में कुछ विचित्र ढंग के आदमी बैठे हुए थे। उनके पास तरह-तरह के घातक हथियार थे।

इसका विचार न करते हुए काका ने कहना जारी रखा—"हमारा देश किसानों का देश है—इसलिए इस देश पर किसानों का ही राज होना चाहिए। लेकिन बात उल्टी है—देश पर पूँजी पतियों की सत्ता राज्य कर रही है—यह हमारे लिए कलंक की बात है।" फिर एक आवाज आई—"तो डूब क्यों नहीं मरते चुल्लू भर पानी में ?" और इसके बाद पुन पाँच दस कर्कश सीटियों की आवाजें सुनाई दीं।

काका ने कहना बन्द नहीं किया, बोले—"यही तो मैं कह रहा हूँ। यदि इस देश के किसान और श्रमिक मिल कर अपनी सत्ता कायम नहीं कर सकते तो उन्हें डूबकर मर ही जाना चाहिए।" इस पर गन्दी-गन्दी आवाजें और कान फोड देने वाली सीटियों की चित्कारें फिर सुनाई दीं। कुछ लोगों ने इस बार ही ही-ही और हो-हो हो करके सभा में गडबड़ी पैदा करने का प्रयत्न भी किया। इस पर किसानों में से कुछ आदमियों ने कहा—"सुनने दो, हमे सुनने दो, जो लोग सुनना नहीं चाहते वे सभा से उठकर चले जायें।"

काका ने सभा से शान्त रहने की प्रार्थना करके कहा—'भाइयो, यह परीक्षा का समय है। देखता हूँ कि कुछ बनाए हुए उपद्रवी लोग यहाँ मौजूद हैं—और इस सभा को असफल करने की चेष्टा में हुल्लड़ मचा रहे हैं—किसान भाइयो, सावधान, हमें अहिंसा से काम लेना है। अहिंसा बहुत बड़ा शस्त्र है। इसके सामने शस्त्र नाम की कोई वस्तु ठहर ही नहीं सकती।

जिस पर इस अहिंसा नाम के शस्त्र से प्रहार किया जाता है, वह शत्रु से मित्र हो जाता है। जरूरत है - इस शस्त्र के सही उपयोग करने वाले की।" एक कोने से फिर आवाज आई— "अहिंसा का गीत तो गायेगा ही, इस बुड्ढे में अब ताकत ही कहाँ, जो ईंट का जवाब पत्थर से देने की बात कहे।" इस पर काका ने जोर से कहा—"यही तो मैं कह रहा हूँ—मुझमें ही क्या ? हम में से जितने यहाँ पर बैठे हुए हैं, उनमें किसी में भी ईंट का जवाब पत्थर से देने की ताकत नहीं है। वर्ना यह देश आज तक गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ क्यों होता ? "

इसके बाद काका ने बोलने के लिए ज्यों ही मुँह खोला कि एक फटा हुआ जूता आकर उनके सिर में लगा। इसके बाद कंकड़ और फिर प्लेट फार्म पर आने लगे पत्थर। किसानों का धैर्य छूट गया। जिधर से कंकड़-पत्थर आ रहे थे, उधर लाठियाँ चल गईं। बड़ा भारी हंगामा मच गया। स्त्रियाँ और बच्चे भीड़ से निकल कर जिधर राह मिली, भागने लगे। चारों ओर से मारो-मारो की आवाज आने लगी। कुछ अत्यन्त बूढ़े और कायर लोग काँपने लगे। सैकड़ों लाठियाँ बज उठीं। गड़बड़ करने वाले बुरी तरह से पिटने लगे। इतने ही में भीड़ में एक बड़ी भारी भगदड़ मच गई। भीड़ पर ठाकुर के घुड़सवार अंधाधुन्ध घोड़ों को दौड़ाकर सड़ासड़ कोड़े बरसा रहे थे। तनसुखा और मनसुखा उपद्रव को शांत करने के लिए भीड़ में घुस पड़े। एक घुड़सवार ने मौका पाकर मनसुखा पर अपना घोड़ा छोड़ दिया। असावधान मनसुखा

सम्हल नहीं सका—और उसकी छाती पर घोडा पैर देकर निकल गया। उधर निहत्थे तनमुखा पर बेशुमार चाबुक और लाठियाँ बरसने लगीं। रमेश से यह देखा नहीं गया। वह ज्यों ही प्लेट-फार्म से कूदने लगा कि नैना ने उसका हाथ कस कर पकड लिया। बीमारी और श्रम के कारण रमेश अत्यधिक अशक्त हो गया था। वह नैना से अपना हाथ नहीं छुड़वा सका। लाचार होकर वह नैना से बोला—"मामी। जाने दो, मुझे जाने दो रोको मत मामी, इस अज्ञनता को मिटाने वाले यज्ञ मे मेरी भी आहुति हो लेने दो। देखो न, कितने ही बेकसूर यों ही मारे जा रहे हैं।" इतना कह कर उसने ज्यों ही नैना की ओर देखने के लिए पीछे मुड कर दृष्टि डाली तो देखा कि भीमकाय ठाकुर विजय शमशेर लम्बी-लम्बी मूँछों के भीतर से एक कुटिल हास्य बिखेर रहे थे। सुवीर और काका बुरी तरह से रस्सियों से कस कर बँधे हुए थे। रमेश नैना की रक्षा के लिए उसकी ओर बढ आया। उसने ठाकुर से कहा—"ठाकुर साहेब। क्या आप गरीब किसानों के दु खडे नहीं सुनना चाहते ?"

ठाकुर ने पहले मूछों पर ताव दिया—फिर एक कुटिल हँसी हँसकर बोले—"नहीं दुखडे-उखडे कुछ नहीं। इस समय इस गोरे मुख से कुछ सुनना चाहता हूँ। तुम्हारी बातें सुनने की मुझे फुरसत नहीं।" इतना कहकर ठाकुर ने नैना का हाथ अपने हाथ मे कसकर पकड लिया। फिर बोले—"तुम यहाँ, इन कँगलों के बीच क्या करती हो ? छोडो यह नादानी,

छी छी राजमहलों की शोभा बढाने लायक तुम—यहाँ? इन फूस की झोपडियों में। इतना गजब अच्छा नहीं। राजमहलों के भोग विलास का इतना भयंकर अपमान मैं कभी सहन नहीं कर सकता, समझी। मैं यह कभी नहीं होने दूँगा। तुम्हें मेरे साथ चलना होगा। एक मिनिट भी तुम्हें यहाँ नहीं ठहरना चाहिए। चलो—आओ। आओ मेरे राजमहल की शोभा, आओ।" इतना कहकर ठाकुर ने ज्योंही नैना का फिर हाथ खींचना चाहा कि नैना के हाथ के जो तमाचे तडातड पडे तो ठाकुर के होश ठिकाने आ गए।

ठाकुर की आँखों से खून बरसने लगा। एक स्त्री सत्ताधारी ठाकुर पर उसकी प्रजा के सामने हाथ उठाए। कैसे घोर अपमान की बात। बदला-सम्पूर्ण बदला—और ठाकुर ने नैना को खींचकर जो सडाक से चाबुक मारना चाहा कि उनका हाथ वहीं का वहीं रुक गया।

ठाकुर की गर्दन पर पडती हुई एक भारी तलवार को झटके से रोकती हुई नैना बोली 'सब्र से काम लो जग्गू। काशी काका ने क्या कहा था हमें अहिंसा की लडाई लडनी है। किसी को जान से तो मारना ही नहीं चाहिए। फिर यह तो हमारे गाँव के मालिक ठाकुर साहेब है।"

जग्गू ने कहा—"माँ। और चाहे जो कुछ हो, लेकिन मर्द-स्त्री पर हाथ उठाए, उसे बेइज्जत करे, यह मैं कभी नहीं देख सकता। माँ-जात की रक्षा करना हर आदमी का धर्म है—मैं उस

"वज्र-ग्रन्थावली"

(ले० श्री ऋषभचरण जैन)

१—दुराचार के अड्डे	६—नर्कधाम
२—दिल्ली का कलंक	७—चाँदनी रात
३—मयखाना	८—चम्पाकली
४—बुर्दाफरोश	९—तीन इक्के
५—हर हाइनेस	१०—हत्यारा

हिन्दी के ललित साहित्य मे "वज्रग्रन्थावली" का स्थान बहुत ऊँचा है। इन पुस्तकों के कई-कई सस्करण हाथों हाथ निकल चुके है। जनता के भारी आग्रह पर अब फिर नये सस्करण तैयार हो रहे है। दुराचार के अड्डे छप कर तैयार है। मूल्य प्रत्येक का १) प्रति जो सज्जन इस माला की सब पुस्तके लेना चाहें उनका नाम दर्ज कर लिया जाता है। छपने पर पुस्तक बी० पी० से भेज दी जाती है। प्रवेश फीस ।) ली जाती है, कमीशन एक चौथाई दिया जाता है।

हमारा नया प्रकाशन

१—मानव धर्म प्रचारक-राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, अशोक, ईसा, मुहम्मद, कबीर, नानक, दयानन्द, रामकृष्ण, विवेकानंद, रामतीर्थ और गाँधी। ले० जगतकुमार शास्त्री। सजिल्द ४) रु०

२—शिवाबावनी (सटीक राज सस्करण) १) प्रति

३—अखण्ड भारत (ले० चन्द्रगुप्त वेदालंकार) ॥।) प्रति

४—वैदिक युद्धवाद (ले० जगतकुमार शास्त्री) १) प्रति

डाक व्यय पृथक।

साहित्य-मण्डल, दीवानहाल, देहली।

सुप्रीम फिल्म्स चाँदनी-चौक, दिल्ली लाहौर

१—अरेबियन नाईट्स—एक रोमांचकारी चित्र

भूमिका में कानन देवी, नवाब, हीरालाल, मोलिना, देवी, सुन्दर—आदि।

२—रूपा—एक सामाजिक चित्र

पात्र—रतनमाला, उर्मिला, सुरेखा, विमन बनर्जी, आगा जान।

३—ब्राह्मण कन्या—एक सामाजिक चित्र

कलाकार—वनमाला, कुमार, चन्द्रेकर उर्मिला, शान्ता पटेल—आदि।

४—मजदूर—श्रमिकों की करुण कहानी

पात्र—इन्दुमती, वीरा, नसीर खान।

५—मेघदूत—महाकवि कालीदास के नाटक पर आधारित

कलाकार—लीला देसाई, साहू मोदक, आगाजान, वास्ती—आदि।

६—पनिहारी—सामाजिक चित्र

पात्र—शान्ता आप्टे, सुरेन्द्र, याकूब।

७—देवकन्या—एक पौराणिक चित्र

पात्र—लीला देसाई, लीला चिटनीस उल्हास, वास्ती—आदि।

८—बहू-बेटियाँ—एक सामाजिक चित्र

पात्र—निर्मला, याकूब, करण दीवान—आदि।